समाज कार्य
इतिहास, दर्शन एवं प्रणालियाँ

डॉ० सुरेन्द्र सिंह
कुलपति महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ,
वाराणसी
डॉ० पी०डी० मिश्र
प्रोफेसर
समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ

न्यू रॉयल बुक कम्पनी
लखनऊ

प्रथम संस्करण		2001
द्वितीय संस्करण		2002
तृतीय संस्करण		2004
संशोधित संस्करण		
द्वितीय संशोधित संस्करण	:	2006
तृतीय संशोधित संस्करण	:	2007
चतुर्थ संस्करण	:	2009
पंचम संस्करण	:	2010

ISBN 81-85936-89-7

प्रकाशक

न्यू रॉयल बुक कम्पनी

प्रथम तल, शाह ट्रेड सेन्टर

32/16, बाल्मीकि मार्ग, लाल बाग,

लखनऊ - 226 001

फोन : 0522-2285607

भारत में मुद्रित

इमरान मिर्ज़ा, एम.एफ. बेग द्वारा न्यू रॉयल बुक क0 लखनऊ के लिए प्रकाशित और सुनील कुमार पाण्डेय द्वारा टाईपसेट तथा बी0के0 शाहदरा, दिल्ली -32 द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

जीवन का उद्देश्य सर्वतोमुखी विकास करना है। किन्तु विकास का मार्ग अनेक जटिल समस्याओं से होकर जाता है। इस प्रकार समस्याये जीवन का अग हैं। कुछ समस्यायें वर्तमान से जुडी होती हैं तथा कुछ अपेक्षित परिवर्तनो से जुडी होती हैं। समस्या के सम्यक समाधान के दो प्रमुख कारण हैं व्यक्ति की अपनी असमर्थता, अज्ञानता एव अनुभवहीनता तथा नवीन परिस्थितियों का सृजन जिनका सामना करने की क्षमता का अभाव होता है। इन समस्याओ के दो स्वरूप होते हैं भौतिक तथा मनो–सामाजिक। अनेक परीक्षणो, अन्वेषणो तथा अध्ययनो ने सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक समस्या किसी न किसी सीमा तक दोनो प्रकार की है। इसीलिए आज विशेषीकृत सेवाओ का अधिकाधिक उपयोग किए जाने के साथ–साथ व्यक्ति तथा उसकी समस्या को सम्पूर्णता मे देखने तथा तदनुसार सहायता करने का महत्व बढ गया है। आज यह सर्वमान्य है कि व्यक्ति की समस्या का पूर्ण समाधान समन्वित सेवाओं द्वारा ही सम्भव हो सकता है। समाज कार्य भी विविध प्रकार की उपलब्ध सेवाओ का अधिकतम सदुपयोग करते हुए व्यक्ति, समूह तथा समुदाय की समस्याओ का समाधान करता है, विकास के अवसर प्रदान करता है और सामाजिक व्यवस्था मे अपेक्षित परिवर्तन लाता है।

प्रस्तुत पुस्तक मे समाज कार्य के सभी पहलुओ का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। सर्वप्रथम समाजकार्य के अर्थ, इतिहास क्षेत्र, सामाजिक विज्ञानो से सम्बन्ध, दर्शन, तथा मौलिक मूल्यो को स्पष्ट किया गया है। तदुपरान्त समाज कार्य के ढगो यथा वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक सगठन, समाज कार्य

प्रशासन, सामाजिक शोध तथा सामाजिक क्रिया का चित्रण किया गया है।

इस पुस्तक की रचना का उद्देश्य समाज कार्य के विद्यार्थियो तथा जिज्ञासुओं को समाज कार्य के विविध आयामो से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध कराना है ताकि उन्हें इधर उधर भटकना न पडे। आशा है कि प्रस्तुत पुस्तक भारतवर्ष के समाज कार्य के विद्यार्थियो एवं शिक्षको के लिए लाभप्रद होगी।

डा० सुरेन्द्र सिंह
डा० पी० डी० मिश्र

विषय-सूची

समाज कार्य : अर्थ एवं उद्देश्य
(SOCIAL WORK : MEANING AND OBJECTIVES)

व्यक्ति एव समाज एक दूसरे पर आश्रित हैं। जहा समाज ने व्यक्ति को मानवीय अस्तित्व प्रदान किया है, वहीं समाज द्वारा निर्धनता, बेकारी जैसी विविध पकार की समस्यायें भी उत्पन्न की गयी हैं। इन समस्याओ के समाधान हेतु आदिकाल से ही प्रयास किये जाते रहे हैं। इन्हीं प्रयासो की श्रृखला मे समाज कार्य एक महत्वपूर्ण कडी है। समाज कार्य प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया एव सामाजिक अनुकूलन के मार्ग मे आने वाली सामाजिक एव मनोवैज्ञानिक समस्याओ का वैज्ञानिक ढग से समाधान प्रस्तुत करता है।

I *समाज कार्य के सम्बन्ध मे प्रचलित भ्रान्तियां*
(Misconceptions regarding social work)

अधिकाश लोगो को समाज कार्य के विषय मे सही जानकारी न होने के कारण उनमे इसके विषय में अनेक प्रकार की भ्रान्तिया पाई जाती हैं। कुछ प्रमुख भ्रान्तिया इस प्रकार हैं

1. दान के रूप मे समाज कार्य (Social work as charity)

निर्धनों तथा अकिंचनो को दान देना प्राचीनकाल से चला आ रहा है। धार्मिक मान्यताओ के अनुसार दान एक पुण्य का कार्य समझा जाता रहा है। दान के माध्यम से केवल अस्थायी रूप से दान लेने वाले व्यक्ति की आर्थिक समस्या का समाधान किया जा सकता है।

दान लेने वाला व्यवित दूसरो पर निर्भर बना रहता है। समाज कार्य व्यक्ति की वैज्ञानिक ढग से इस प्रकार सहायता प्रदान करता है कि समस्याग्रस्त व्यवित मे समस्या का समाधान करने की क्षमता उत्पन्न हो जाय और यह अपनी सहायता स्वय करने के योग्य बन सके।

2. श्रमदान के रूप में समाज कार्य (Social work as shramdan)

समुदाय की सामान्य समस्याओ के समाधान के लिए श्रमदान का प्रयोग किया जाता रहा है। यह श्रमदान लोग ऐच्छिक रूप से करते रहे हैं। इसका सहारा लेते हुए सार्वजनिक मार्गो का निर्माण, तालावो की खुदाई, सार्वजनिक सफाई जैसे अनेक प्रकार के कार्य किये जाते रहे हैं। श्रमदान समाज कार्य नहीं है क्योकि इसे निष्काम भाव से विना किसी ज्ञान अथवा निपुणता का प्रयोग करते हुए सामान्य हित के कार्यो के लिए किया जा सकता है जबकि समाज कार्य वैज्ञानिक ज्ञान एव प्राविधिक निपुणताओं का प्रयोग करते हुए समस्याग्रस्त व्यक्तियो, समूहो एव समुदायो की मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान प्रस्तुत करते हुए उन्हे आत्म–सहायता करने के योग्य बनाता है।

3. समाज कल्याण के रूप में समाज कार्य (*Social work as social welfare*)

समाज कल्याण सामाजिक सेवाओ एवं संस्थाओ की एक संगठित व्यवस्था है जो व्यक्तियो एव समूहो को एक संतोषजनक जीवन स्तर प्रदान करने के लिए बनायी जाती है। इसका उद्देश्य आर्थिक उन्नति के अवसर, अच्छा स्वास्थ्य एव सतोषजनक जीवन स्तर प्रदान करना है। समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जिसमे मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान वैज्ञानिक ज्ञान एवं प्राविधिक निपुणताओ का प्रयोग करते हुए किया जाता है। समाज कार्य व्यक्ति की सामाजिक क्रिया को प्रभावपूर्ण बनाता है तथा जीवन को सुखमय एवं शान्तिपूर्ण बनाता है।

4. समाज सुधार के रूप मे समाज कार्य
(Social work as social reform)

समाज सुधार का अभिप्राय समाज की विचारधारा मे परिवर्तन लाना है ताकि प्रचलित कुरीतियो एव बुराइयो को दूर किया जा सके। अस्पृश्यता, दहेज, बाल विवाह, जैसी बुराइयो को रोकने के लिए किये जाने वाले प्रयास समाज सुधार के अन्तर्गत आते हैं। समाज कार्य समस्याग्रस्त व्यक्तियो, समूहो एव समुदायो को वैज्ञानिक ज्ञान एव प्राविधिक निपुणताओ का प्रयोग करते हुए सहायता प्रदान करने का कार्य है ताकि उनमे आत्म–सहायता की क्षमता का विकास किया जा सके।

5. सामाजिक सुरक्षा के रूप मे समाज कार्य
(Social work as social security)

सामाजिक सुरक्षा से हमारा अभिप्राय समाज द्वारा विकसित की गयी ऐसी व्यवस्था से है जिसके द्वारा समाज आकस्मिकताओ के शिकार व्यक्तियो को धन अथवा सेवाओ के रूप मे सहायता प्रदान करता है ताकि वे न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर व्यतीत कर सके। ये आकस्मिकताये जैविक, आर्थिक अथवा दोनो प्रकार की हो सकती हैं। जैविक आकस्मिकताओ के उदाहरण के रूप मे मातृत्व, आर्थिक आकस्मिकताओ के उदाहरण के रूप मे बेकारी तथा जैविक एव आर्थिक आकस्मिकताओ के उदाहरण के रूप मे वृद्धावस्था का उल्लेख किया जा सकता है। इन आकस्मिकताओ की यह विशेषता होती है कि ये व्यक्ति की कार्य करने की क्षमता को क्षति पहुचाती हैं और उसकी आय की निरन्तरता को समाप्त करती हैं। सामाजिक सुरक्षा सामाजिक बीमा, जन सहायता तथा समाज सेवाओ के रूप मे आयोजित की जाती है। समाज कार्य केवल आकस्मिकताओ के विरुद्ध ही व्यक्तियो को सरक्षण नहीं प्रदान करता बल्कि यह व्यक्तियों, समूहो एव समुदायो द्वारा अनुभव की जाने वाली विविध प्रकार की मनो–सामाजिक समस्याओ के समाधान मे वैज्ञानिक ज्ञान एव

प्राविधिक निपुणताओ का प्रयोग करते हुए उनमे आत्म–सहायता की क्षमता उत्पन्न करता है।

II समाज कार्य की प्रमुख परिभाषाये
(Major definitions of social work)

चेनी के अनुसार . "समाज कार्य के अन्तर्गत ऐसी आवश्यकताओ जो सामाजिक सम्बन्धो से सम्बन्धित हैं तथा जो वैज्ञानिक ज्ञान एव ढगो का उपयोग करती हैं, के सन्दर्भ मे लाभो को प्रदान करने के सभी ऐच्छिक प्रयास सम्मिलित हैं।"[1]

फिक के मत मे . "समाज कार्य अकेले अथवा समूहो मे व्यक्तियो को वर्तमान अथवा भावी ऐसी सामाजिक एव मनोवैज्ञानिक बाधाओ जो समाज मे पूर्ण अथवा प्रभावपूर्ण सहभागिता को रोकती है अथवा रोक सकती है, के विरुद्ध सहायता प्रदान करने हेतु प्रचलित सेवाओ का प्रावधान है।"[2]

हेलेन क्लार्क के मत मे "समाज कार्य ज्ञान एवं निपुणताओ के मिश्रण से युक्त व्यावसायिक सेवा का एक स्वरूप है जिसके कुछ अश समाज कार्य के विशिष्ट अश हैं और कुछ नही, जो एक ओर व्यक्ति के सामाजिक परिवेश मे उसकी आवश्यकताओ की संतुष्टि करने मे सहायता करने तथा दूसरी ओर यथासम्भव उन कठिनाइयो जो उस सर्वोत्तम को जिसके लिए उनमें क्षमता है, प्राप्त करने से लोगो को रोकती हैं, को दूर करने का प्रयास करती है।"[3]

सुशील चन्द्र के मत मे . "समाज कार्य जीवन के मानदण्डो को उन्नत बनाने तथा समाज के सामाजिक विकास की किसी स्थिति मे व्यक्ति, परिवार तथा समूह के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एव सांस्कृतिक कल्याण हेतु सामाजिक नीति के कार्यान्वयन मे सार्वजनिक अथवा निजी प्रयास द्वारा की गयी गतिशील क्रिया है।"[4]

फ्रीडलैण्डर के मत मे "समाज कार्य वैज्ञानिक ज्ञान एव मानवीय सम्बन्धो मे निपुणता पर आधारित एक व्यावसायिक सेवा है

जो व्यक्तियो की अकेले अथवा समूहो मे सामाजिक एव वैयक्तिक सतोष एव स्वतत्रता प्राप्त करने मे सहायता करती है।"[5]

इण्डियन कान्फ्रेन्स ऑफ सोशल वर्क के मत मे "समाज कार्य मानवतावादी दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एव प्राविधिक निपुणताओ पर आधारित व्यक्तियो अथवा समूहो अथवा समुदाय को एक सुखी एव सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करने मे सहायता प्रदान करने हेतु एक कल्याणकारी क्रिया है।"[6]

कोनोप्का के मत मे "समाज कार्य तीन स्पष्ट रूप से भिन्न किन्तु अन्तर्सम्बन्धित भागो समाज सेवाओ का एक जाल, सावधानीपूर्वक विकसित किये गये ढगो एव प्रक्रियाओ तथा सामाजिक सस्थाओ एव व्यक्तियो के माध्यम से व्यक्त की गयी सामाजिक नीति का प्रतिनिधित्व करने वाला अस्तित्व है। ये सभी मनुष्यो के विषय मे एक मत, उनके अर्न्तसम्बन्धो एव नैतिक कर्तव्यो पर आधारित है।"[7]

स्ट्रूप के मत मे "समाज कार्य आत्म सहायता करने हेतु लोगो की सहायता करने के वैज्ञानिक ढग के प्रयोग द्वारा व्यक्ति, समूह एव समुदाय की आवश्यकताओं को प्रभावित करने हेतु विभिन्न ससाधनो को जुटाने की कला है।"[8]

मिर्जा रफीउद्दीन अहमद के मत मे "समाज कार्य मानवतावादी दर्शन, वैज्ञानिक ज्ञान एव प्राविधिक निपुणताओ का प्रयोग करते हुए प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया के मार्ग मे आने वाली समस्याओ से ग्रस्त लोगो की व्यक्तियो, समूहो अथवा समुदायो के रूप मे सहायता प्रदान करने की एक व्यावसायिक क्रिया है जो उन्हे आत्म सहायता करने के योग्य बनाती है।"[9]

समाज कार्य वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओं एव मानवता वादी दर्शन का प्रयोग करते हुए मनो–सामाजिक समस्याओ से ग्रस्त लोगो को वैयक्तिक, सामूहिक एव सामुदायिक स्तर पर सहायता

प्रदान करने की एक क्रिया है जो उनकी इन समस्याओ को पहचानने, उन पर ध्यान को केन्द्रित करने, उनके कारणो को जानने तथा इनका स्वत समाधान करने की क्षमता को विकसित करती है तथा सामाजिक व्यवस्था की गडबडियो को दूर करती हुई इसमे वाछित परिवर्तन लाती है ताकि व्यक्ति की सामाजिक क्रिया प्रभावपूर्ण हो सके, उसका समायोजन सतोषजनक हो सके और उसे सुख तथा शान्ति का अनुभव हो सके और सामाजिक व्यवस्था मे पायी जाने वाली कुरीतियो एव प्रगति को अवरुद्ध करने वाली सस्थागत सरचनाओ को उखाड फेंकते हुए सभी को सामाजिक एव आर्थिक विकास के समीचीन अवसर प्रदान किये जा सके ओर सामाजिक सघर्षो को कम करते हुए एकीकरण को प्रोत्साहित किया जा सके।

III *समाज कार्य की विशेषताये*
(Characteristics of social work)

समाज कार्य की प्रमुख विशेषताये निम्नलिखित हैं

1 समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है। इसमे विविधि प्रकार के वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओं तथा दार्शनिक मूल्यो का प्रयोग किया जाता है।

2 समाज कार्य सहायता समस्याओ का मनो–सामाजिक अध्ययन तथा निदानात्मक मूल्यांकन करने के पश्चात प्रदान की जाती है।

3 *समाज कार्य समस्याग्रस्त व्यक्तियो को सहायता प्रदान करने का* कार्य है। ये समस्याये व्यक्ति की प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया के मार्ग मे अवरोध उत्पन्न करती हैं। अपनी प्रकृति मे ये समस्याये मनो–सामाजिक होती हैं।

4 समाज कार्य सहायता किसी अकेले व्यक्ति अथवा समूह अथवा समुदाय को प्रदान की जा सकती है।

5 समाज कार्य सहायता का अन्तिम उद्देश्य समस्याग्रस्त सेवार्थी मे आत्म सहायता करने की क्षमता उत्पन्न करना होता है।

6 समाज कार्य सहायता प्रदान करते समय सेवार्थी की व्यक्तित्व सम्बन्धी सरचना एव सामाजिक व्यवस्था दोनों मे परिवर्तन लाते हुए कार्य किया जाता है।

IV *समाज कार्य के उद्देश्य (Objectives of social work)*

उद्देश्य कुतुबनुमा के समान होते हैं जो हमे दिशा बोध कराते हैं। समाज कार्य के उद्देश्य समाज कार्यकर्ताओ को सेवाये प्रदान करते समय दिशा निर्देशन करते हैं और इसीलिए इनकी जानकारी आवश्यक है।

ब्राउन[10] ने समाज कार्य के 4 उद्देश्यो का उल्लेख किया है (1) भौतिक सहायता प्रदान करना, (2) समायोजन स्थापित करने मे सहायता देना, (3) मानसिक समस्याओ का समाधान करना, तथा (4) निर्बल वर्ग के लोगो को अच्छे जीवन स्तर की सुविधाये उपलब्ध कराना। फ्रीडलैण्डर[11] ने दुखदायी सामाजिक दशाओ मे परिवर्तन, रचनात्मक शक्तियो के विकास तथा प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तो एव मानवोचित व्यवहारो के अवसरो की प्राप्ति मे सहायता प्रदान करने के तीन उद्देश्यो का उल्लेख किया हे। हैमिल्टन[12] ने स्वस्थ एव अच्छे जीवन स्तर तथा सन्तोषजनक सम्बन्धो एव अनुभव के आधार पर सामाजिक वृद्धि के अवसर प्रदान किये जाने का उल्लेख किया है। सयुक्त राष्ट्र सघ[13] के अनुसार समाज कार्य व्यक्तियो, समूहो एव समुदाय को सामाजिक मानसिक एवं शारीरिक कल्याण के एक उच्च स्तर पर पहुचने मे सहायता प्रदान करता हे। विटमर के विचार मे समाज कार्य के दो प्रमुख उद्देश्य है (1) व्यक्तियो की उन कठिनाइयो को दूर करना जिन्हे वे सुविधाओ के समुचित उपयोग मे अनुभव करते हैं तथा (2) लोगो के कल्याण हेतु उपलब्ध सामुदायिक ससाधनो की व्याख्या करना।

ऐण्डरसन के मत मे "समाज कार्य लोगो को उनकी विशिष्ट इच्छाओ एव क्षमताओ के अनुसार तथा समुदाय की इच्छाओ एव क्षमताओ के अनुकूल सतोषजनक सम्बन्धो एव जीवन के मानदण्डो को प्राप्त करने मे व्यक्तियो अथवा समूहो के रूप मे उनकी सहायता करने के उद्देश्य से प्रदान की गयी व्यावसायिक सेवा है।"[14]

यगडाल के मत मे "समाज कार्य लोगो के लिए दो वस्तुओ की खोज करता है आर्थिक भलाई तथा प्रसन्नता के और गहरे स्रोत, अर्थात् आत्मानुभूति (self-realisation)। इसके प्रयोजन की विषयवस्तु मानवीय व्यवहार एव सम्बन्ध हैं। इसके ध्यान का केन्द्र विन्दु व्यक्ति और एक स्वीकृत की गयी वास्तविकता के साथ उसका अपना समायोजन है।"[15]

बी.जी. खेर के मत में "समाज कार्य का उद्देश्य, जैसा सामान्यतया समझा जाता है, सामाजिक अन्याय को दूर करना दुख से छुटकारा दिलाना, यातनाओ को रोकना एव स्वय अपना और अपने परिवारो का पुनर्वासन करने हेतु समाज के निर्वल सदस्यो की सहायता करना और साराश मे, (1) भौतिक आवश्यकता, (2) वीमारी, (3) अज्ञानता, (4) मलीनता, तथा (5) निष्क्रियता के पाच दानवाकार बुराइयो के विरुद्ध सघर्ष करना है।"[16]

इस प्रकार समाज कार्य एक सहायतामूलक कार्य है जो वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओ तथा मानवदर्शन का प्रयोग करते हुए व्यक्तियो की एक व्यक्ति, समूह के सदस्य अथवा समुदाय के निवासी के रूप मे उनकी मनो–सामाजिक समस्याओ का अध्ययन एवं निदान करने के पश्चात् परामर्श, पर्यावरण मे परिवर्तन तथा आवश्यक सेवाओ के माध्यम से सहायता प्रदान करता है ताकि वे समस्याओ से छुटकारा पा सके, सामाजिक क्रिया मे प्रभावपूर्ण रूप से भाग ले सके, लोगो के साथ सतोषजनक समायोजन कर सके, अपने जीवन मे सुख एव शान्ति का अनुभव कर सके, तथा अपनी सहायता स्वय करने के योग्य वन सके।

विशिष्ट रूप से समाज कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य हैं

1 मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान करना।

2 मानवीय आवश्यकताओ की पूर्ति करना।

3 सामाजिक सम्बन्धो को सौहार्द्रपूर्ण एव मधुर बनाना।

4 व्यक्तित्व मे प्रजातान्त्रिक मूल्यो का विकास करना।

5 सामाजिक उन्नति एव विकास के अवसर उपलब्ध कराना।

6 लोगो मे सामाजिक चेतना जागृत करना।

7 पर्यावरण को स्वस्थ एव विकास के अनुकूल बनाना।

8 सामाजिक विकास हेतु सामाजिक व्यवस्था मे अपेक्षित परिवर्तन करना।

9 स्वस्थ जनमत तैयार करना।

10 सामाजिक परिस्थितियो की आवश्यकताओ के अनुसार विधानो का निर्माण कराना तथा वर्तमान विधानो मे वाछित सशोधन कराना।

11 लोगो मे सामजस्य की क्षमता विकसित करना।

12 लोगो की सामाजिक क्रिया को प्रभावपूर्ण बनाना।

13 लोगो मे आत्म सहायता करने की क्षमता विकसित करना।

14 लोगो को उनके जीवन मे सुख एव शान्ति का अनुभव कराना।

15 समाज मे शान्ति एव व्यवस्था को प्रोत्साहित करना।

V *समाज कार्य की मौलिक मान्यतायें*
(Basic assumptions of social work)

समाज कार्य की निम्नलिखित मौलिक मान्यताये हैं

(1) व्यक्ति एव समाज अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए व्यक्ति, समूह

अथवा समुदाय के रूप मे सेवार्थी की समस्या के समाधान हेतु सामाजिक दशाओ एव परिस्थितियों का अवलोकन एव मूल्याकन आवश्यक होता है।

(2) व्यक्ति तथा पर्यावरण के बीच होने वाली अन्त क्रिया मे आने वाली बाधाये समस्या का प्रमुख कारण होती हैं। इसीलिए समाज कार्य की क्रियाविधि का केन्द्र बिन्दु अन्त क्रियाये होती हैं।

(3) व्यवहार तथा दृष्टिकोण दोनो ही सामाजिक शक्तियो द्वारा प्रभावित किये जाते हैं। इसीलिए सामाजिक शक्तियो मे हस्तक्षेप करना आवश्यक होता है।

(4) व्यक्ति एक सम्पूर्ण इकाई है। इसलिए उससे सम्बन्धित आन्तरिक तथा वाह्य दोनो प्रकार की दशाओं का अध्ययन आवश्यक होता है।

(5) समस्या के अनेक स्वरूप होते हैं। इसीलिए इनके समाधान हेतु विविध प्रकार के ढगो की आवश्यकता होती है।

VI *समाज कार्य के प्रमुख अंग*
(Major constituents of social work)

समाज कार्य के तीन प्रमुख अग है कार्यकर्ता, सेवार्थी तथा सस्था। समाज कार्य मे कार्यकर्ता का स्थान प्रमुख होता है। यह कार्यकर्ता वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य अथवा सामुदायिक सगठन कार्यकर्ता हो सकता है। कार्यकर्ता की भूमिका समस्या की प्रकृति पर निर्भर करती है। कार्यकर्ता को मानव व्यवहार का समुचित ज्ञान होता है। उसमे व्यक्ति, समूह तथा समुदाय की आवश्यकताओं, समस्याओं एव व्यवहारो को समझने की क्षमता एव योग्यता होती है। वह अन्तर्ज्ञान प्रदान करते हुए व्यक्तित्व का विकास करता है ताकि सेवार्थी अपनी समस्याओ का समाधान करते हुए विकास के अवसरो का समुचित उपयोग कर सके।

सेवार्थी एक व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय हो सकता है। जब सेवार्थी एक व्यक्ति होता है तो अधिकाश समस्याये मनो–सामाजिक अथवा समायोजनात्मक अथवा सामाजिक क्रिया से सबधित होती हैं और कार्यकर्ता वैयक्तिक समाज कार्य प्रणाली का प्रयोग करते हुए सेवाये प्रदान करता है। जब सेवार्थी एक समूह होता है तो प्रमुख समस्याये प्रजातान्त्रिक मूल्यो तथा नेतृत्व के विकास, सामूहिक तनावो एव सघर्षो के समाधान तथा मैत्री एव सौहार्दपूर्ण सम्बन्धो के विकास से सम्बन्धित होती हैं। सामूहिक कार्यकर्ता विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमो के आयोजन के दौरान उत्पन्न होने वाली अन्त क्रियाओ को निर्देशित करते हुए समूह मे सामूहिक रूप से कार्य करते हुए सामान्य सामूहिक उद्देश्यो की प्राप्ति की क्षमता उत्पन्न करता हैं। जब सेवार्थी एक समुदाय होता है तो समुदाय की अनुभूत आवश्यकताओ की पूर्ति करने के साथ–साथ सामुदायिक एकीकरण का विकास करने का प्रयास किया जाता है। एक सामुदायिक सगठनकर्ता समुदाय मे उपलब्ध ससाधनो एव समुदाय की अनुभूत आवश्यकताओ के बीच प्राथमिकताओ के आधार पर सामजस्य स्थापित करता है और लोगो को एक–दूसरे के साथ मिल जुलकर कार्य करने के अवसर प्रदान करते हुए सहयोगपूर्ण मनोवृत्तियो, मूल्यो एव व्यवहारो का विकास करता है। समाज कार्य मे सस्था का महत्वपूर्ण स्थान है क्योकि सेवाये सस्था के तत्वावधान मे ही प्रदान की जाती हैं। ये सस्थाये सार्वजनिक अथवा निजी हो सकती हैं। सस्था द्वारा किये जाने वाले कार्य इसके उद्देश्यो पर निर्भर करते हैं। सस्था के तत्वावधान मे कार्य करने वाले समाज कार्यकर्ता के लिए सस्था के उद्देश्यो, नीतियो, कार्यरीतियो, योजनाओ तथा कार्यक्रमो की समुचित जानकारी आवश्यक है।

VII *समाज कार्य के कार्य*

(Functions of social work)

सामान्यतया समाज कार्य के 4 प्रकार के कार्य हैं (1) उपचारात्मक (2) सुधारात्मक, (3) निरोधात्मक तथा (4) विकासात्मक।

उपचारात्मक कार्य इन कार्यो के अन्तर्गत समस्या की प्रकृति के अनुसार चिकित्सकीय सेवाओ स्वास्थ्य सेवाओ, मनोचिकित्सकीय एव मानसिक आरोग्य से सम्बन्धित सेवाओ, अपग एव निरोग व्यक्तियो के लिए सेवाओ तथा पुनरर्थापन सम्बन्धी सेवाओ को सम्मिलित किया जा सकता है।

सुधारात्मक कार्य इन कार्यो के अन्तर्गत व्यक्ति सुधार सेवाओ, सम्बन्ध सुधार सेवाओ, तथा समाज सुधार सेवाओ को सम्मिलित किया जा सकता हे। व्यक्ति सुधार सेवाओ मे कारागार सुधार सेवाओ, प्रोवेशन, पेरोल तथा कानूनी सेवा सम्चन्धी सेवाओ का उल्लेख किया जा सकता है। सम्बन्ध सुधार सेवाओ के रूप मे परिवार कल्याण सेवाओ, विद्यालय समाज कार्य एव ओद्योगिक समाज कार्य का निरूपण किया जा सकता हे। समाज सुधार सेवाओ के रूप मे रोजगार सम्बन्धी सेवाओ, वेश्यावृत्ति निवारण कार्यो भिक्षावृत्ति निवारण कार्यो, दहेज उन्मूलन सम्बन्धी कार्यो तथा एकीकरण को प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित सेवाओ का उल्लेख किया जा सकता है।

निरोधात्मक कार्य इन कार्यो के अन्तर्गत सामाजिक नीतियो, सामाजिक परिनियमो, जनचेतना उत्पन्न करने से सम्बन्धित प्रौढ शिक्षा जैसे कार्यक्रमो, विभिन्न प्रकार के कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमो तथा नाना प्रकार की समाज सुरक्षा सेवाओ का उल्लेख किया जा सकता है।

विकासात्मक कार्य · इनके अन्तर्गत आर्थिक विकास के विविध प्रकार के कार्यक्रमो यथा उत्पादकता की दर मे वृद्धि करने, राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय को बढाने, आर्थिक लाभो का साम्यपूर्ण वितरण करने, उपभोक्ताओ के हितो का सरंक्षण करने, इत्यादि तथा सामाजिक विकास के अनेक कार्यक्रमो उदाहरणार्थ, पेयजल, पौष्टिक आहार, स्वास्थ्य सेवाओ, शिक्षा एव प्रशिक्षण सम्बन्धी सेवाओ, सेवायोजन सम्बन्धी सेवाओ, मनोरंजन सम्बन्धी सेवाओ इत्यादि का वर्णन किया जा सकता है।

VIII समाज कार्य का प्रयोग किये जाने के माडल
(Models applied in social work)

समय–समय पर उपलब्ध ज्ञान के स्तर एव विद्यमान परिस्थितियो की आवश्यकताओ के अनुसार समाज कार्य का प्रयोग करने की दृष्टि से प्रयोग मे लाने के लिए माडल–समस्या समाधान माडल, मनो–सामाजिक चिकित्सा माडल प्रकार्यात्मक माडल, प्रेमपूर्वक कार्य सम्पादन किये जाने का माडल व्यवहार सशोधन माडल, सकटकालीन हस्तक्षेप माडल, कार्य केन्द्रित माडल चार व्यवस्थाओ वाला माडल तथा एकक अभिनय माडल प्रमुख हैं।

(1) समस्या–समाधान माडल
(Problem-solving model)

पर्लमैन के विचारो पर आधारित यह माडल इस बात को प्रतिपादित करता है कि जीवन ही समस्या समाधान सम्बन्धी क्रियाओ का नाम है। जीवन मे आने वाली विविध प्रकार की समस्याओ का तब तक समुचित समाधान नही हो सकता जब तक कि समस्याग्रस्त व्यक्ति समस्या–समाधान की दिशा मे स्वय प्रयास न करे। इस मान्यता की पृष्ठभूमि मे समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या का समाधान स्वय न कर उसके सामाजिक–सास्कृतिक पर्यावरण मे विद्यमान विविध प्रकार के स्रोतो का उपयोग करते हुए स्वय सेवार्थी से करवाता है ताकि सेवार्थी के व्यक्तित्व मे निर्भरता की विशेषता न उत्पन्न हो और वह अपनी भावी समस्याओ का समाधान स्वय कर सके। समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को जो भी सहायता प्रदान करता है वह सेवार्थी–कर्ता सबध के माध्यम से प्रदान की जाती है। पर्लमैन ने स्पष्ट रूप से लिखा है "समस्या–समाधान अभिगम के अन्तर्गत यह सम्बन्ध ही है जो बुद्धि को कुशाग्र बनाता है, भावना को बनाये रखता है तथा व्यक्ति को आगे बढाता है जो अन्यथा एक शान्तिपूर्ण तथा विवेकपूर्ण प्रक्रिया होगी।"[17]

(2) मनो–सामाजिक चिकित्सा माडल
(Psycho-social treatment model)

हॉलिस[18] द्वारा प्रतिपादित इस माडल के अनुसार सेवार्थी की समस्या के समाधान के लिए उसका मनो–सामाजिक अध्ययन करना आवश्यक है। मनो–सामाजिक चिकित्सा माडल निदानात्मक स्कूल की मान्यताओ मे विश्वास रखता है और इसके अन्तर्गत उपचार के तीन प्रकार प्रयोग मे लाये जाते हैं (1) व्यक्ति मे परिवर्तन, (2) सामाजिक अथवा अन्तर्वयक्तिक पर्यावरण मे परिवर्तन, तथा (3) दोनो मे परिवर्तन।

(3) प्रकार्यात्मक माडल (Functional model)

स्मेली[19], टैफ्ट[20] तथा राबिन्सन[21] द्वारा मुख्य रूप से प्रतिपादित यह माडल प्रकार्यात्मक स्कूल की मान्यताओ पर आधारित है। इसके अन्तर्गत ऑटोरैंक द्वारा वर्णित सकल्प शक्ति को विकसित करने एव सुदृढ बनाने का प्रयास किया जाता है। सकल्प शक्ति वह शक्ति है जो आन्तरिक शान्ति से प्राप्त होती है तथा पर्यावरण मे अपेक्षित परिवर्तन एव सशोधन लाती रहती है। इस माडल के अन्तर्गत समस्या का निदान अर्थात् इसकी उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी कारको का ज्ञान बहुत महत्वपूर्ण है। इस माडल का प्रयोग करने वाला समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को प्रभावात्मकता, चेतना, समय एव प्रक्रिया के स्तरो का ज्ञान कराते हुए कार्य करता है।

(4) प्रेमपूर्वक कार्य सम्पादित किये जाने का माडल
(Love Model)

यह माडल होमोस[22] (Holmos) के विचारो पर आधारित है। इस माडल के अनुसार आर्थिक समृद्धि ही सब कुछ नहीं है, प्रेम का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। यदि प्रेमपूर्ण व्यवहार किया जाये तो अनेक समस्याओ का समाधान सरलतापूर्वक हो सकता है। इसी मान्यता के आधार पर समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को मत्रणा प्रदान करते समय उसके

जीवन में पायी जाने वाली प्रेम की कमी की पूर्ति करता है। यह प्रेम सेवार्थी के अहम् को आवश्यक भावनात्मक समर्थन प्रदान करते हुए सुदृढ बनाता है। इस माडल का प्रयोग करते हुए समाज कार्यकर्ता अर्थपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करते हुए तथा परानुभूति का प्रयोग करते हुए सेवार्थी को इस बात का विश्वास दिलाता है कि वह उसकी समस्या के समाधान के प्रति सच्चाई के साथ प्रयास कर रहा है और इस सम्पूर्ण प्रक्रिया मे वह सेवार्थी को अपने साथ अपनेपन का अनुभव भी प्रदान करता है।

(5) व्यवहार–सशोधन माडल
(Behaviour modification model)

डोलार्ड[23] तथा माउरर[24] द्वारा मुख्य रूप से प्रतिपादित यह माडल इस मान्यता पर आधारित है कि मानव-व्यवहार एक सीखा हुआ व्यवहार है और जब भी सीखने मे कोई भूल होती है समस्या उत्पन्न होती है। इसलिए सेवार्थी की समस्या का समाधान करते समय समाज कार्यकर्ता को उसके व्यवहार मे परिवर्तन लाना चाहिए। इस माडल का प्रयोग करते हुए कार्य करने वाला समाज–कार्यकर्ता सेवार्थी के व्यवहार मे परिवर्तन लाता है। व्यवहार सशोधन को व्यवहार उपचार के नाम से भी जाना जाता है। व्यवहार उपचार के अन्तर्गत अनुकूलन की परिस्थिति मे विलोपन एव निरोधी प्रक्रियाओ एव/अथवा सकारात्मक एव नकारात्मक प्रबलीकरणो (Reinforcers) के प्रयोग द्वारा असामान्य अथवा अनुपयुक्त अनुकूलनपूर्ण व्यवहार के प्रतिमानो को परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के उपचार मे ध्यान का केन्द्र बिन्दु व्यवहार ही होता है। उपचार की अनेक विशिष्ट कार्यरीतियो तथा परिवर्तन की अनेक प्रविधियो का प्रयोग किया जाता है जिनमे से प्रमुख ये हैं बलपूर्वक बात कहने का प्रशिक्षण (Assertiveness *Training*), *सवेदन विहीनता प्रविधि (Desensitization* Technique), अन्त स्फोटक चिकित्सा (Inplosive Therapy) अन्योन्य प्रावरोध मनश्चिकित्सा (Reciprocal Inhibition Psycho-Therapy), टोकेन अर्थव्यवस्था (Token Economy)।

(6) सकटकालीन हस्तक्षेप माडल (Crisis intervention model)

वर्तमान समय मे इस माडल को अत्यधिक उपयोगी समझा जाता है। यद्यपि यह कोई सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक माडल नहीं है और न ही इससे सम्बन्धित कोई मोलिक मान्यताये अथवा विशिष्ट परिस्थितिया हैं किन्तु यह माडल उन व्यक्तियो एव परिवारो को सहायता प्रदान करने के लिए प्रयोग मे लाया जाता है जो सकटकालीन परिस्थितियो से गुजर रहे हैं। उदाहरण के लिए बाढ, सूखा, महामारी, भूचाल, आतकवाद, सम्प्रदायवाद, जातिवाद, इत्यादि के शिकार ऐसे परिवार जिनमे रोजी–रोटी कमाने वालो अथवा प्रियजनो की मृत्यु हो गयी हो। इस माडल का प्रतिपादन मुख्य रूप से रैपोपोर्ट[25] तथा रीड[26] द्वारा किया गया है।

(7) कार्य–उन्मुख माडल (Work-oriented model)

इस माडल के प्रमुख प्रतिपादक रीड तथा एप्स्टीन[27] हैं। इस माडल के अन्तर्गत सेवार्थी की समस्या पर सीधा प्रहार किया जाता है। अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध, तथा सामाजिक सम्बन्धो मे असन्तोष, औपचारिक सगठनो से असन्तोषजनक सम्बन्ध, भूमिका सम्पादन मे कठिनाई, सामाजिक कर्तव्यो के निर्वाह मे व्यवधान, प्रतिक्रियात्मक सावेगिक कष्ट तथा अपर्याप्त स्रोतो जैसी समस्याओ के समाधान का प्रयास किया जाता है।

(8) चार व्यवस्थाओं वाला माडल (Four systems model)

पिकस तथा मिन्हान द्वारा विकसित यह माडल चार मूलभूत व्यवस्थाओ के अन्तर्गत कार्य करता है। पहली व्यवस्था परिवर्तन एजेण्ट व्यवस्था के नाम से, दूसरी सेवार्थी व्यवस्था के नाम से, तीसरी लक्ष्य व्यवस्था के नाम से ओर चौथी क्रिया व्यवस्था के नाम से जानी जाती है। इस माडल का प्रयोग करते हुए समाज कार्यकर्ता परिवर्तन

लाने का प्रयास करता है। परिवर्तन की मात्रा सेवार्थी की प्रकृति पर निर्भर करती है। समस्या समाधान के लिए किसी एक ढग को पर्याप्त नहीं समझा जाता। क्रिया का सम्पादन व्यवस्था पर ही निर्भर करता है।

(9) एकक अभिगम माडल (Unitary approach model)

गोल्डस्टीन द्वारा विकसित यह माडल प्रत्येक व्यक्ति को एक अपने प्रकार की अकेली इकाई मानते हुए समस्याग्रस्त सेवार्थी को सहायता प्रदान करता है और इसी लिए इस माडल के अन्तर्गत प्रत्यक सेवार्थी की सहायता के लिए तैयार की गयी उपचार की रणनीति, उद्देश्य तथा प्रक्रिया भिन्न–भिन्न होती है।

सन्दर्भ

1 Social work includes all voluntary attempts to extend benefits in response to needs which are concerned with social relationships and which avail themselves of scientific knowledge and method

Cheyney Alice *Nature and Scope of Social Work* AASW, New York 1926 p 1

2 Social work is the provision of services designed to aid individuals singly or in groups in coping with present or future social and psycho logical obstacles that prevent or are likely to prevent full or effective participation

Fink Arthur E *The Fields of Social Work* Henry Holt Co New York 1942 p 2

3 Social work is a form of professional service comprising a composite of knowledge and skills parts of which are and parts of which are not distinctive of social work which attempts on the one hand to help the individual to satisfy his needs in the social milieu and on the other to remove as far as possible the barriers which obstruct people from achieving the best of which they are capable

Clarke Helen *Principles and Practice of Social Work* Appleton Century Crafts Inc New York 1947 p 16

4 Social work is a dynamic activity undertaken by public or private effort in the implementation of social policy with a view to raise the standard of living and to bring about social economic political and cultural well being of the individual family and the group within a society irrespective of its stage of social development

Chandra Sushil, *Social Work in Uttar Pradesh*, Indian Conference of Social Work, 1954, p 13

5 Social Work is a professional service based on scientific knowledge and skill in human relations which assists individuals alone or in groups to obtain social and personal satisfaction and independence

Friedlander, W A, *Introduction to Social Welfare*, Prentice Hall Inc New York, 1955, p 4

6 Social work is a welfare activity based on humanitarian philosophy scientific knowledge and technical skills for helping individuals or groups or community to live a rich and full life

7 Social work is an entity representing three clearly distinguished but inter-related parts a network of social services, carefully developed methods and process and social policy expressed through social institutions and individuals All these are based on a view of human being their inter-relationships and the ethical demands made on them

Konopka G *Social Work Philosophy* The University of Minnesota Press, Minneapolis 1958 p 83

8 Social work is the art of bringing various resources to bear on individual, group and community needs by the application of a scientific method of helping people to help themselves

Stroup H H, Social Work - An Introduction to the Field, American Book Co New York, 1960, p 2

9 Social work is a professional service based on knowledge of human relations and skill in relationships and concerned with problems of intra-personal and/or inter-personal adjustment resulting from unmet individual, group, or community needs

Ahmad, Mirza, R, *Samaj Karya - Darshan avam Pranaliyan*, British Book Depot, Lucknow, 1959, p 4

10 Brown, E L, *Social Work as a Profession*, Russell Sage Foundation, New York, 1942, p 24

11 Friedlander, W A., op cit, pp 8-9

12 Hamilton, G, Theory and Practice of Social Casework, Columbia University Press, New York, 1951, p 12

13 United Nations, Deptt. of Economics and Social Affairs, New York, Training for Social Workers - Third International Survey, 1958, p 35

14 Social work is a professional service rendered to people for the purpose of assisting them, as individuals or in groups, to attain satisfying relationships and standards of life in accordance with their particular wishes and capacities and in harmony with those of the community

Anderson, J P "*Social Work as a Profession* Social Work Year Book Russell Sage Foundation, NewYork 1945 p 506

15 Social work seeks two things for people economic well being and the deeper source of happiness that is self realisation but subject of its concern is human behaviour and relationships Its focus of attention is the individual and his adjustment to a recognized reality

Youngdahl, B E, "*Social Work as a Profession* Social Work Year Book Russell Sage Foundation, NewYork 1949 p 408

16 *The aim of social work as generally understood is to remove social* injustice to relieve distress to prevent suffering and to assist the weaker members of society to rehabilitate themselves and their families and in short, fight the five giant evils of (1) Physical want (2) Disease (3) Ignorance (4) Squalor, and (5) Idleness

Quoted in United Nations Training for Social Work - An International Survey p 108

17 Within the problem solving approach it is relationship that warms the intelligence sustains the spirit and carries the person forward in what would otherwise be a cool rational process

Perlman H H "The Problem Solving Model in Social Casework" in Roberts R W and Nee, R H (eds) Theories of Social Casework University of Chicago Press Chicago 1970 p 151

18 *Hollis F The Phycho-Social Approach to the Practice of Social Case* work in Roberts R W and Nee R H (eds) op cit 1970

19 Smalley, R E Theories of Social Work Practice Columbia University Press New York 1967

20 Taft J, The Relation of Function to Process in Social Casework Journal of Social Work Process 1937

21 *Robinson B B The Meaning of Skill J S W Process 4 1942*

22 Holmos P The Faith of Counsellors Prentice Hall London 1965

23 Dollard J & Miller N E Personality and Psychotherapy McGraw Hill NewYork 1950

24 Mowrer O H (ed) Learning Theory and Personality Dynamics Ronald Press NewYork 1950

25 Rapoport L "Crisis Intervention as a Model of Brief Treatment in Roberts R W and Nee R H (eds) op cit p 277

26 Reid J W and Shyne A W Brief and Extended Casework Columbia *University Press New York 1969*

27 Reid J W and Epstein Task-Centred Casework quoted in The Nature of Social Work MacMillan New York 1976 p 33

समाज कार्य के क्षेत्र
(FIELDS OF SOCIAL WORK)

समाज कार्य का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है क्योकि जहा कही ऐसी समस्याये पायी जाती हैं जो व्यक्ति की प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया तथा उसके समायोजन के मार्ग मे व्यवधान उत्पन्न करती है वहा समाज कार्य की सहायता की आवश्यकता होती है। इसके क्षेत्रो के रूप मे वाल कल्याण महिला कल्याण, विद्यालय समाज कार्य, युवा कल्याण वृद्धो का कल्याण, श्रम कल्याण, वाधितो का कल्याण, अनुसूचित जातियो एव अनुसूचित जनजातियो तथा अन्य पिछडे वर्गो का कल्याण, चिकित्सकीय एव मनश्चिकित्सकीय उपचार, ग्राम्य विकास, सामाजिक रक्षा एव अपराधी सुधार, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक नीति, नियोजन एव विकास, आधुनिकीकरण, कानूनी सहायता, पर्यावरण सन्तुलन, मानव अधिकारो का सरक्षण तथा सामाजिक न्याय प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

I *वाल विकास (Child development)*

1974 मे घोषित राष्ट्रीय वाल नीति मे इस वात की घोषणा की गयी कि "वच्चे राष्ट्र की सर्वाधिक महत्वपूर्ण सम्पत्ति हैं। उनका पालन–पोषण एव देखरेख हमारा उत्तरदायित्व है।" इस नीति के अधीन वच्चो के सर्वागीण विकास के लिए सरकार के विभिन्न विभागो एव स्वयंसेवी सगठनो द्वारा विविध प्रकार के कार्यक्रम चलाये गये हैं। इन कार्यक्रमो मे मातृ एव शिशु कल्याण सेवाओ, पुष्टाहार सेवाओ, पूर्व

प्राथमिक शिक्षा, विद्यालय समाज कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। बाल कल्याण के क्षेत्र मे मानव ससाधन मत्रालय के महिला एव बाल विकास विभाग द्वारा समेकित बाल विकास सेवायोजना विद्यालय जाने से पूर्व की आयु के बच्चो तथा धात्री/गर्भवती माताओ के लिए गेहू पर आधारित पूरक पोषाहार की योजना काम करने वाली तथा बीमार माताओ के बच्चो के लिए क्रेशो/दिन मे देखरेख करने वाले केन्द्रो की योजना, 3-5 वर्ष के आयु समूह के विद्यालय जाने के पूर्व की आयु के बच्चो के लिए बालवाडियो तथा दिन मे देखरेख करने वाले केन्द्रो के माध्यम से पोषाहार कार्यक्रम, प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकीकरण के कार्यक्रम के अधीन 3-6 वर्ष के आयु समूह के बच्चों की प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा हेतु स्वैच्छिक सगठनो को सहायता की योजना चलायी गयी है। इसके अतिरिक्त बाल कल्याण के क्षेत्र मे कार्य करने वाले सस्थानो एव व्यक्तियो को मानव ससाधन विकास मत्रालय के महिला एव बाल विकास विभाग द्वारा राष्ट्रीय बाल कल्याण पुरस्कार भी प्रदान किये जाते हैं। प्रत्येक विजेता व्यक्ति को 30 000 रुपये नकद और एक प्रशस्ति पत्र प्रदान किया जाता है। 1986 मे विश्व बाल दिवस के अवसर पर खिलौना बैंक योजना प्रारम्भ की गयी थी। इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक स्कूल मे खिलौने एकत्र करके खिलौना बैंक मे जमा किये जाते है और विभिन्न आगनवाडियो बालवाडियो, शिशुगृहो, दिवा देखभाल केन्द्रो इत्यादि मे बाट दिये जाते हैं। भारत सरकार के स्वास्थ्य मत्रालय द्वारा माताओ एव बच्चो मे पोषाहार की कमी के विरुद्ध रोगरोधन (Prophylaxis), बच्चो मे विटामिन "ए" की कमी के कारण अधेपन के विरुद्ध रोगरोधन, मौखिक जलपूर्ति उपचार कार्यक्रम (Oral Rehydration Therapy) तथा प्रतिरक्षीकरण का परिवर्द्धित कार्यक्रम चलाये गये है। मानव ससाधन विकास मत्रालय के शिक्षा विभाग द्वारा प्रारम्भिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने नि शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने, प्रारम्भिक आयु वर्ग के बच्चो के लिए अनौपचारिक अशकालिक शिक्षा का आयोजन करने केवल लडकियो के लिए गैर–औपचारिक शिक्षा के केन्द्र चलाने, शिशु

शिक्षा का आयोजन करने, स्कूलो मे सगणक शिक्षा प्रदान करने, शिक्षा मे मूल्योन्मुख अनुस्थापन करने के लिए शिक्षको को प्रशिक्षण प्रदान करने, जनसख्या शिक्षा कार्यक्रम चलाने, विकलाग बच्चो के लिए समेकित शिक्षा की व्यवस्था करने, शिक्षको को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करने जैसे अनेक प्रकार के कार्यक्रम चलाये गये हैं।

II *महिला शक्तिकरण (Women's empowerment)*

भारतवर्ष की सम्पूर्ण जनसख्या में महिलाये 49 प्रतिशत हैं। 78 प्रतिशत महिलाये ग्रामीण अचलो मे रहती हैं। 75 18 प्रतिशत महिलाये निरक्षर हैं। महिलाओ का विकास करते हुए उन्हे राष्ट्रीय मुख्य धारा मे जोडने के लिए भारत सरकार के महिला एव बाल विकास विभाग द्वारा अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं जिनमे श्रमजीवी महिलाओ के लिए छात्रावास, समाज के कमजोर वर्ग की महिलाओ को प्रशिक्षण प्रदान करने और उन्हे दीर्घकालीन आधार पर रोजगार देने के लिए सेवायोजन एव आय उत्पादक इकाइयो की स्थापना करने वाली परियोजनाये, सकटग्रस्त महिलाओ के पुनर्वास के लिए महिला प्रशिक्षण केन्द्र/सस्थान महिलाओ एवं लडकियो के लिए अल्प अवधि के आवास गृह, महिलाओ पर हो रहे अत्याचारो को रोकन के लिए शैक्षिक कार्यक्रम, महिलाओ के प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त महिलाओ को स्वरोजगार के क्षेत्र मे आने वाली कठिनाइयो से छुटकारा दिलाने के लिए महिला विकास निगमो की स्थापना की गयी है जो कमजोर वर्ग की महिलाओ, विशेष रूप से अकेली महिलाओ, को दीर्घकालीन आधार पर आय प्रदान करने वाले कार्य उपलब्ध कराने के लिए योजनाये तैयार की जायेगी और तकनीकी परामर्श तथा सेवाये प्रदान करते है। महिला एव बाल विकास के अन्तर्गत स्थापित महिला विकास ब्यूरो मे एक मानीटरिंग इकाई की स्थापना की गयी है जिसका उत्तरदायित्व प्रधानमंत्री के कार्यालय द्वारा चुनी गयी 27 महिला लाभार्थी उन्मुख योजनाओ की मानीटरिंग करते हुए इनकी प्रगति से प्रधानमत्री कार्यालय

को अवगत कराना है। महिलाओ के सम्पूर्ण विकास के लिए एक दीर्घकालीन राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य (National Perspective Plan) योजना तैयार करने के लिए एक कोर ग्रुप का गठन किया गया था जिसने अपनी राष्ट्रीय परिपेक्ष्य योजना मे इस बात की संस्तुति की है कि भारतीय महिलाओ के लिए एक ऐसी दीर्घकालीन सर्वांगीण नीति तैयार की जाये जो विकास की प्रक्रिया से सम्बद्ध सिद्धान्तो एव निर्देशो के अनुरूप हो।

भारत सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा भी महिलाओ के विकास हेतु कुछ विशिष्ट कार्यक्रम चलाये गये हैं जिनमे महिला समाख्या कार्यक्रम जिसके अधीन गुजरात, कर्नाटक तथा उत्तर प्रदेश के 10 जिलो मे 2,000 गावो मे महिला कार्यक्रम केन्द्रो की स्थापना हेतु महिला समाख्या समितियो को केन्द्र द्वारा नीदरलैण्ड की सरकार द्वारा प्रदत्त धनराशि से शत–प्रतिशत सहायता प्रदान की जाती है तथा कक्षा 9 से 12 तक की लडकियो की शिक्षा शुल्क की प्रतिपूर्ति की योजना उल्लेखनीय है।

स्वास्थ्य एव परिवार कल्याण मन्त्रालय के परिवार कल्याण विभाग द्वारा राष्ट्रीय परिवार कल्याण कार्यक्रम चलाया जा रहा है जिसके अधीन महिलाओ के स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने के लिए चिकित्सकीय गर्भ समापन, लेप्रास्कोपी, शिशु जन्म के पूर्व, इसके समय तथा इसके पश्चात् अनेक प्रकार की स्वास्थ्य एव चिकित्सकीय सेवाओ का प्रावधान किया गया है। महाराष्ट्र सरकार ने बालिका भ्रूणो के समापन पर रोक लगाने के लिए 1988 मे एक कानून बनाया है। केन्द्र सरकार द्वारा भी इस सम्बन्ध मे प्रीनैटल डायग्नास्टिक एक्ट 1995 बनाया है।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड भी महिलाओ के कल्याण के लिए शिक्षा तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण, अवकाश शिविर, महिला मण्डल क्षेत्र परामर्श एव निरीक्षण, शिशु गृह कार्यकर्ता प्रशिक्षण, कल्याण विस्तार परियोजना, श्रमजीवी महिलाओ के लिए छात्रावास, ग्रामीण एव निर्धन महिलाओ के लिए जागृत विहार परियोजनाओ, महिलाओ के लिए सामाजिक–आर्थिक कार्यक्रम जैसे अनेक कार्यक्रमो को चला रहा है।

III *विद्यालय समाज कार्य (School social work)*

विद्यालय समाज कार्य, समाज कार्य का वह क्षेत्र है जो विद्यालय मे शिक्षा ग्रहण करने वाले समस्याग्रस्त छात्रो तथा शिक्षको और छात्रो के अभिभावको की सहायता करता है। इसका उद्देश्य समस्याग्रस्त छात्रो की समस्याओ का समाधान करने हेतु आवश्यक सहायता प्रदान करते हुए विद्यालय मे उनका उचित सामजस्य स्थापित कराना है। विद्यालय समाज कार्य मे लगा हुआ समाज कार्यकर्ता विद्यालय के सगठनात्मक ढाचे के अन्तर्गत कार्य करते हुए छात्र, उसके माता–पिता तथा अध्यापको की ऐसी समस्याओ का जो विद्यालय मे प्राप्त हुए अनुभवो से सम्बन्धित हैं, समाधान खोजने मे उनकी सहायता करता है। एक विद्यालय मे कार्य करता हुआ समाज कार्यकर्ता समस्याग्रस्त बालको की समस्याओ का उनकी सम्पूर्णता मे अध्ययन करता है। इसके लिए वह उनके शिक्षको, विद्यालय के प्रशासको तथा परिवार के सदस्यो मे सम्पर्क स्थापित करता हे, उनकी समस्याओ के कारणो का पता लगाता हे, तथा उन्हे आवश्यक परामर्श देते हुए, उनके पर्यावरण मे अपेक्षित परिवर्तन लाते हुए तथा उनके लिए आवश्यक सेवाओ की व्यवस्था कराते हुए समस्याओ का समाधान करता है।

IV *युवा कल्याण (Youth welfare)*

युवको के कल्याण एव विकास के लिए भारत सरकार ने एक राष्ट्रीय युवा नीति की घोषणा, 1989 मे की हे जिसका उद्देश्य युवको मे सविधान मे निहित सिद्धान्तो एव मूल्यो की जागरूकता एव सम्मान पैदा करना, राष्ट्रीय एकीकरण, धर्म निरपेक्षता एव समाजवाद के प्रति वचनबद्धता की सहायता से विधि के नियम (Rule of Law) के प्रति निष्ठा उत्पन्न करना, ऐतिहासिक एव सास्कृतिक धरोहर के प्रति चेतना उत्पन्न करना, पर्यावरण तथा उसके सरक्षण मे अभिरुचि उत्पन्न करना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास पैदा करना तथा व्यक्तित्व के विकास के लिए सभी अपेक्षित सुविधाये उपलब्ध कराना हे।

युवको के कल्याण के लिए अनेक प्रकार की योजनाये एव

कार्यक्रम चलाये गये हैं। युवकों मे खेलकूद को प्रोत्साहित करने के लिए नेताजी सुभाष राष्ट्रीय खेल संस्थान की स्थापना की गयी है, अखिल भारतीय ग्रामीण खेल प्रतियोगितायें आयोजित की जा रही हैं, खेल प्रतिभा खोज छात्रवृत्ति योजना चलायी जा रही है, राज्य सरकारो और राज्य खेल परिषदो को अनुदान दिया जा रहा है, राष्ट्रीय खेल सगठन की योजना विश्वविद्यालयो एव महाविद्यालयो में खेल के स्तर को सुधारने तथा प्रतिभाशाली छात्रों को अपनी अभिरुचि के खेलो में श्रेष्ठता प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध कराने हेतु चलायी जा रही है, राष्ट्रीय खेल सघ और समितियो को सहायता दी जा रही है, विभिन्न खेलो मे प्रतिष्ठा प्राप्त युवकों को मान्यता प्रदान करने के लिए अर्जुन पुरस्कार दिये जा रहे हैं, राष्ट्रीय शारीरिक उपयुक्तता कार्यक्रम चलाया जा रहा है भारतीय खेल प्राधिकरण की स्थापना करते हुए लोगो मे खेलो की जागरूकता उत्पन्न करने के लिए अनेक प्रकार के खेल आयोजित किये जा रहे हैं, जवाहर लाल नेहरू स्टेडियम मे केन्द्रीय खेल पुस्तकालय की स्थापना की गयी है और इसमे एक आवासीय विग की स्थापना करते हुए खेलकूद प्रतियोगिता मे भाग लेने के लिए दिल्ली आये हुये खिलाडियो के खान–पान एव रहने की सुविधा की व्यवस्था की गयी है।

1985 को अन्तर्राष्ट्रीय युवा वर्ष के रूप मे मनाया गया था। प्रत्येक वर्ष 12 जनवरी युवा दिवस के रूप में मनायी जाती है। 1969-70 मे प्रारम्भ की गयी राष्ट्रीय सेवा योजना के माध्यम से विश्वविद्यालयों एव महाविद्यालयो के युवको को सामुदायिक सेवा मे लगने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। 1972 मे प्रारम्भ किये गये नेहरू युवक केन्द्रो के माध्यम से राष्ट्रीय निर्माण से सम्बन्धित क्रियाकलापो मे युवको को सम्मिलित कराते हुए उनके व्यक्तित्व का विकास किया जाता है, स्काउट एव गाइड योजना के माध्यम से युवको मे देश के प्रति भक्ति भावना एव सामाजिक जीवन की दृष्टि से उपयुक्त व्यवहार विकसित किया जाता है, युवा प्रतिनिधि मण्डलो का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आदान–प्रदान किया जाता है तथा राष्ट्रीय एकता शिविर आयोजित

करते हुए और युवको की विभिन्न राज्यो की यात्रा की व्यवस्था करते हुए राष्ट्रीय एकता की भावना विकसित की जाती है। 1970-71 में प्रारम्भ की गयी राष्ट्रीय सेवाकर्मी योजना के माध्यम से प्रथम डिग्री पाठ्यक्रम पूर्ण करने वाले युवको को स्वैच्छिक आधार पर पूर्णकालिक रूप से राष्ट्रीय निर्माण के कार्यो मे सम्मिलित होने के अवसर प्रदान किये जाते हैं, युवको मे भारतीय सस्कृति एव राष्ट्रीय महत्व के विभिन्न विषयो और एकता की चेतना उत्पन्न करने के लिए "युवको के लिए प्रदर्शनियो की योजना" चलायी जा रही है, जीवन की चुनोतियो का सामना करने मे सहयोगी टोली तथा साहस की भावना उत्पन्न करने के लिए साहस वाले विभिन्न कार्यक्रमो के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती हे। युवक क्लबो को आर्थिक सहायता दी जाती है, सामाजिक सेवा के क्षेत्र मे उत्कृष्ट कार्य करने वाले युवको को मान्यता प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय युवा पुरस्कार योजना चलायी गयी हे, देश मे युवको की यात्रा को प्रोत्साहित करने के लिए युवा छात्रावास स्थापित किये गये हैं जिनमे सस्ती दरो पर रहने और खाने-पीने की व्यवस्था की गयी है तथा युवको के विकास एव उनने जागरूकता की वृद्धि करने के कार्य मे लगे हुए स्वैच्छिक सगठनो को सहायता भी प्रदान की जाती है।

V *वृद्धों का कल्याण (Welfare of the aged)*

स्वास्थ्य सेवाओ मे सुधार के साथ जीवन काल मे वृद्धि हुई है। मशीनो के बढते हुए प्रयोग के कारण दुर्घटनाओ की सख्या बढी है। सयुक्त परिवारो के टूटने के कारण वृद्धो मे निराश्रितता मे वृद्धि हुई है। कुल मिलाकर वर्तमान समय मे वृद्धो की समस्याये शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा नैतिक सभी स्तरो पर अत्यधिक गम्भीर हो गयी हें। भारत सरकार इन समस्याओ के प्रति जागरूक है तथा वह विभिन्न प्रकार के प्रावीडेन्ट फण्डो, पेन्शन, ग्रेच्युटी, बीमा योजनाओ इत्यादि के माध्यम से सेवानिवृत्त हुए कर्मचारियो को सुरक्षा प्रदान करने के साथ-साथ स्व-सेवायोजित व्यक्तियो को भी वृद्धावस्था मे

सुरक्षा का अनुभव कराने हेतु जीवन बीमा निगम के माध्यम से व्यक्तिगत एव सामूहिक बीमा तथा जनता प्रावीडेन्ट फण्ड जैसी योजनायें चला रही है। निराश्रित वृद्धों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए विभिन्न राज्यो की वृद्धावस्था पेन्शन योजनाओ के अधीन पेन्शन दी जा रही है। राज्य सरकारो तथा स्वयसेवी सगठनो द्वारा सचालित की जा रही विभिन्न समाज कल्याण सस्थाओ के माध्यम से पूर्णरूपेण निराश्रित एव अकिचन वृद्धो को सस्थाओ मे रखते हुए उनकी समुचित देखरेख की जा रही है।

VI *श्रम कल्याण (Labour welfare)*

भारत मे श्रम कल्याण को प्रोत्साहित करने हेतु सविधान के अनुच्छेद 19(5), 23, 24, 39(क), 39(ग), 39(घ), 39(ड), 41, 42, 43 तथा 43(क) के अन्तर्गत किये गये प्रावधानो के अतिरिक्त निम्नलिखित कानूनो मे विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं

1 अभ्रक खान श्रम कल्याण कोष अधिनियम, 1946
2 कोयला खान श्रम कल्याण कोष अधिनियम, 1947
3 चूना पत्थर एव डोलोमाइट खान श्रम कल्याण कोष अधिनियम 1972
4 बीडी श्रमिक कल्याण अधिभार अधिनियम 1976
5 बीडी श्रमिक कल्याण कोष अधिनियम, 1976
6 लौह खनिज खान, मैगनीज खनिज खान तथा क्रोम खनिज खान श्रम कल्याण अधिभार अधिनियन, 1976
7 लौह खनिज, मैगनीज खनिज तथा क्रोम खनिज श्रम कल्याण कोष अधिनियम 1976, तथा
8 सिनेमा श्रमिक कल्याण कोष अधिनियम 1981

श्रम कल्याण से सम्बन्धित उपरिलिखित विशिष्ट अधिनियमो के

अतिरिक्त कारखाना अधिनियम, 1948, बागान श्रम अधिनियम, 1951, खान अधिनियम, 1952, शिशुक्षुता अधिनियम, 1961, मोटर परिवहन श्रमिक अधिनियम, 1961, बीडी एव सिगार श्रमिक (सेवायोजन की शर्ते) अधिनियम, 1966, अनुबधित श्रम (विनियम एव उन्मूलन) अधिनियम 1970, अन्तर्राज्यीय प्रव्रजनशील श्रमिक (सेवायोजन विनियमन एव सेवा की शर्ते) अधिनियम, 1979 के अन्तर्गत भी श्रम कल्याण सबधी प्रावधान किये गये हैं।

सवैधानिक एव कानूनी प्रावधानो के अतिरिक्त भारत सरकार विभिन्न राज्य सरकारो, मालिको, श्रमिक सघो तथा अन्य समाज कल्याण सगठनो द्वारा अनेक प्रकार के कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रम आयोजित किये गये हैं जिनके अधीन कार्यस्थल पर समुचित स्वास्थ्य एव कार्य की परिस्थितियों को सुनिश्चित करने के साथ–साथ उनकी बस्तियों मे उपयुक्त सडको, रोशनी, सफाई, कूडाघरो, शौचालयो, मूत्रालयो, सामुदायिक क्लबो एव गृहो, पुस्तकालयो एव वाचनालयो, डिस्पेन्सरियो एव चिकित्सालयो, मातृ–शिशु कल्याण केन्द्रो, परामर्श केन्द्रो, सहकारी उपभोक्ता केन्द्रो इत्यादि का भी प्रावधान किया गया है।

VII *बाधितों का कल्याण (Welfare of the handicapped)*

1981 की जनगणना के अनुसार भारत मे 1,20,00,000 बाधित व्यक्ति पाये जाते हैं। ये बाधित व्यक्ति अनेक प्रकार के हैं . (1) शारीरिक दृष्टि से बाधित व्यक्ति जिनके अन्तर्गत अधो, गूगो, बहरो, लूले–लंगडो तथा अपंगो को सम्मिलित किया जाता है, (2) मानसिक दृष्टि से बाधित व्यक्ति जिनके अन्तर्गत मानसिक रूप से मन्दितो को सम्मिलित किया जाता है।

भारत सरकार ने विकलागो के कल्याण के लिए अनेक प्रकार की योजनाये एव कार्यक्रम चलाये हैं। दृष्टि से बाधितो के राष्ट्रीय सस्थान की देहरादून मे, मानसिक बाधितो के राष्ट्रीय सस्थान की सिकन्दराबाद मे, अलीयावर जग श्रवण बाधितो के राष्ट्रीय सस्थान की बम्बई मे तथा

के अन्तर्गत अस्थि चिकित्सकीय दृष्टि से बाधितो, गूगो तथा बहरो और अंधो के लिए तकनीकी आविष्कार करने वाले उत्कृष्ट व्यक्तियो को राष्ट्रीय तकनीकी पुरस्कार दिये जाते हैं। ग्रामीण बाधितो के मार्गदर्शन एव व्यापक पुनर्वास हेतु जिला पुनर्वास केन्द्र योजना चलायी जा रही है जिसका उद्देश्य साधारण/उपयुक्त तथा कम लागत के उपकरणो को उपलब्ध कराने के साथ—साथ विकलांग व्यक्तियो के प्रति चेतना जागृत करना है। समन्वय स्थापित करने के लिए एक केन्द्रीय प्रशासकीय एव समन्वय एकक की भी स्थापना की गयी है। निर्योग्यता एव पुनर्वास के राष्ट्रीय सूचना केन्द्र को भी स्थापित किया गया हे ताकि बाधितो के क्षेत्र मे कार्य करने वाले व्यक्तियो को आवश्यक सूचना उपलब्ध करायी जा सके। 1987 मे पुनर्वासन प्रोद्योगिकी केन्द्र की स्थापना की गयी हे ताकि विभिन्न प्रकार के बाधितो के लिए अपेक्षित उपकरणो के प्रौद्योगिक पहलुओ पर समुचित ध्यान दिया जा सके। बाधितो को सेवायोजन प्रदान करने के लिए विशिष्ट सेवायोजन केन्द्र स्थापित करने के साथ—साथ सामान्य सेवायोजन केन्द्रो मे विशिष्ट प्रकोष्ठ स्थापित किये गये हैं। बाधितो के पुनर्वासन से सम्बन्धित व्यावसायिक व्यक्तियो के प्रशिक्षण मे एकरूपतापूर्ण मानको को लागू करने के लिए एक पुनर्वास परिषद् का गठन किया गया है। प्रत्येक वर्ष मार्च के महीने मे तीसरे रविवार को विकलाग दिवस के रूप मे मनाया जाता हे जिस पर कल्याण मंत्रालय द्वारा अनेक प्रकार के कार्यक्रमो के आयोजन के अतिरिक्त बाधितो के कल्याण से सम्बन्धित राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्रदान किये जाते हैं।

VIII *अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों का कल्याण (Welfare of the scheduled castes, scheduled tribes and other backward classes)*

1991 की जनगणना के अनुसार भारत मे अनुसूचित जाति के व्यक्तियो की संख्या 13 82 करोड थी जो सम्पूर्ण जनसख्या से 16 5

प्रतिशत के बराबर थी। अनुसूचित जाति के विकास सम्बन्धी नीति के निर्माण के लिए 1985 मे कल्याण मत्रालय के अधीन एक अनुसूचित जाति विकास प्रभाग की स्थापना की गयी। अनुसूचित जाति के विकास के लिए एक तीन आयामो वाली योजना बनाई गयी है जिसके अधीन सरक्षण प्रदान करने, विकास करने एव सेवायोजन एव अन्य सुविधाओ मे सकारात्मक विभेद करने का प्रयास किया गया है। सरक्षणात्मक उपाय सविधान मे किये गये प्रावधानो के रूप मे किये गये है। विकास सम्बन्धी उपाय आर्थिक तथा शैक्षिक पिछडेपन को दूर करने की ओर उन्मुख है और इनके अधीन विशेष सघटक योजना विशेष केन्द्रीय सहायता तथा अनुसूचित जाति विकास निगमो के गठन की रणनीति अपनायी गयी है। फरवरी 1989 मे आर्थिक विकास मे वृद्धि हेतु राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एव अनुसूचित जनजाति वित्त एव विकास निगम की स्थापना की गयी है। अनुसूचित जातियो के विकास के लिए चलायी गयी कुछ विशिष्ट योजनाये इस प्रकार है दसवी कक्षा के बाद अनुसूचित जाति के विद्यार्थियो के लिए छात्रवृत्तिया दसवी कक्षा से पूर्व के अस्वच्छ व्यवसायो मे लगे हुए अनुसूचित जाति के विद्यार्थियो के लिए छात्रवृत्तिया, विदेश मे अध्ययन करने वाले अनुसूचित जाति के विद्यार्थियो के लिए छात्रवृत्तिया निर्धनता के कारण अपने बच्चो को स्कूल न भेज पाने वाले अनुसूचित जाति के परिवारो को सहायता, अनुसूचित जाति के लडको एव लडकियो के लिए छात्रावास, चिकित्सकीय तथा इजीनियरिंग महाविद्यालयो मे पढने वाले अनुसूचित जाति के छात्रो के लिए पुस्तक बैको की स्थापना, केन्द्रीय/राज्य सरकारो तथा सार्वजनिक उपक्रमो के अधीन विभिन्न सेवाओ मे अनुसूचित जातियो का प्रतिनिधित्व दिलाने हेतु परीक्षा पूर्व कोचिंग, सफाई कर्मचारियो की मुक्ति, अनुसूचित जातियो के सकेन्द्रण वाले राज्यो मे आय सवर्द्धन हेतु सस्थागत ऋण देने के लिए वित्तीय विकास निगमो की स्थापना, केन्द्र स्तर पर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति वित्त एव विकास निगम की स्थापना तथा अनुसूचित जातियो के कल्याण मे लगी हुई स्वैच्छिक सस्थाओ को अनुदान।

1991 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजाति के लोगो की सख्या 6 77 करोड थी जो सम्पूर्ण जनसख्या के 8 1 प्रतिशत के बराबर है। भारतीय सविधान के अनुच्छेद 15(4), 16(4), 19(5), 46, 164, 244, 275(1), 330, 332 334, 338, 339, 342 तथा पाचवी एव छठी अनुसूची मे सरक्षणात्मक प्रावधान किये गये हैं। पाचवी पचवर्षीय योजना मे जनजातीय उपयोजना की रणनीति के अधीन विकास सम्बन्धी गतिविधियों को प्रोत्साहित करते हुए विधिक एव प्रशासकीय सहायता के माध्यम से अनुसूचित जनजाति के सदस्यो की अभिरुचियो को प्रोत्साहित करने की व्यवस्था की गयी। इस उपयोजना के अन्तर्गत समेकित अनुसूचित जनजातीय विकास परियोजनाओ को सशोधित क्षेत्रीय विकास अभिगम पाकेटो (Modified Area Development Approach Pockets), जनजातीय सकेन्द्रण के गुच्छो (Clusters) तथा प्राचीन जनजातीय समूहो के माध्यम से लागू किया जा रहा है। केन्द्र सरकार द्वारा राज्यो को जनजातीय विकास हेतु विशेष सहायता प्रदान की जा रही है। अनुसूचित जनजातियों को 20 सूत्रीय कार्यक्रम के बिन्दु 11(ख) के अधीन विशिष्ट स्थान प्रदान किया गया है जिसके अन्तर्गत निर्धन परिवारो की आय मे वृद्धि करने के प्रयास किये जा रहे है। अनुसूचित जनजातियो के लिए चलायी गयी विभिन्न विकास सम्बन्धी योजनाओ मे निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं · दसवी कक्षा के बाद के अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियो के लिए छात्रवृत्ति, विदेशो मे अध्ययन करने वाले अनुसूचित जनजाति के छात्रो के लिए छात्रवृत्तिया, शोध उपाधियो के लिए शिक्षावृत्ति, चिकित्सकीय तथा इजीनियरिंग महाविद्यालयो मे पढने वाले अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियो के लिए पुस्तक बैंक, अनुसूचित जनजाति के लडको एव लडकियो के लिए छात्रावास, केन्द्र/राज्य सरकारों तथा सार्वजनिक उपक्रमो मे जनजातियो के प्रतिनिधित्व को बढाने के लिए कोचिग, जनजातीय शोध सस्थानो की राज्यो मे स्थापना, शोध एव मूल्याकन परियोजनाओ का प्रायोजन, पेडो एव जगलो से तेल के बीज तथा तेलो के विकास की योजना, जनजातीय सहकारी विपणन फेडरेशन

(Tribal Cooperative Marketing Federation), राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एव अनूसूचित जनजाति वित्त एव विकास निगम राज्यो मे जनजाति सलाहकार परिषदो की स्थापना तथा जनजातियो के विकास के लिए कार्य करने वाले स्वयसेवी सगठनो की सहायता।

पिछडी जाति के व्यक्तियो के कल्याण के लिए उनके निर्धन परिवार में बच्चो को छात्रवृत्ति की सुविधा प्रदान की जाती है। कुछ राज्या मे पिछडे वर्गों के व्यक्तियो को नौकरियो मे आरक्षण भी प्रदान किया गया है।

IX *चिकित्सकीय एवं मनःचिकित्सकीय समाजकार्य* *(Medical and psychiatric social work)*

विभिन्न शारीरिक एव मानसिक बीमारियो के शिकार व्यक्तियो को समाज कार्य सहायता प्रदान की जाती है। शारीरिक बीमारियो से ग्रस्त व्यक्तियो के साथ चिकित्सकीय समाज कार्य तथा मानसिक बीमारियो के शिकार व्यक्तियों के साथ मन चिकित्सकीय समाज कार्य किया जाता है। चिकित्सकीय तथा मन चिकित्सकीय समाज कार्य चिकित्सको एव मन चिकित्सको की एक टोली के सदस्य के रूप मे किया जाता है। चिकित्सकीय समाज कार्य करने वाला समाज कार्यकर्ता विभिन्न शारीरिक रोगो से ग्रस्त लोगो का विस्तृत अध्ययन करता है, उनकी बीमारी के विभिन्न सामाजिक एव मनोवैज्ञानिक पहलुओ का मूल्याकन करता है और उनके परिवारो, सम्बन्धियो, मित्रो, सहायता प्रदान करने वाली विभिन्न सस्थाओ से सम्पर्क स्थापित करते हुए रोगियो को अपेक्षित सेवाये उपलब्ध कराता है और उनके मनोबल को ऊचा बनाये रखने के लिए उनमे उचित मनोवृत्तियो, मूल्यो एव आदतो का विकास करने के लिए उन्हे परामर्श देता है और उनके पर्यावरण मे आवश्यक परिवर्तन करने के लिए अपेक्षित यथासम्भव सभी उपाय करता है। चिकित्सकीय समाज कार्यकर्ता रोगी को यह बताता है कि उसे बीमारी के दौरान तथा उसके पश्चात् क्या करना चाहिए और क्या नहीं। वह रोगी के परिवार के लोगो को उन विभिन्न स्रोतो की जानकारी

कराता है जो रोगी के उपचार मे सहायक सिद्ध हो सकते हैं और इन स्रोतो से सहायता दिलाने मे सहयोग प्रदान करता है। वह रोगी का उसकी स्थिति के अनुसार मन बहलाने के उपाय करता है। वह रोगी को इस योग्य बनाने का प्रयत्न करता है ताकि वह अपनी पहले जैसी दिनचर्या प्रारम्भ कर सके। वह उसे पुन रोग का शिकार होने से बचने के लिए सफाई एव अन्य रोकथाम सम्बन्धी उपायो की जानकारी कराता है।

मन चिकित्सकीय समाज कार्यकर्ता मानसिक बीमारियो के शिकार रोगियो की अभिरुचियो का पता लगता है तथा उसके अचेतन मन को समझने का प्रयास करता है, समस्या की प्रकृति तथा गम्भीरता का पता लगाता है, रोगी की वास्तविक बाह्य तथा आन्तरिक सभी विशेषताओ का अध्ययन करता है, समायोजन सम्बन्धी कठिनाइयों को समझने का प्रयास करता हे, रोगी के अपने परिवार के सदस्यों, सगे–सम्बन्धियो, मित्रो, कार्यस्थल के कर्मचारियो, इत्यादि के साथ पाये जाने वाले सम्बन्धो की जानकारी प्राप्त करता है, परिवार सहित रोगी से सम्बन्धित विभिन्न समूहो एव समुदाय से प्राप्त होने वाले सहयोग का पता लगता है, रोगियों को मन चिकित्सकीय सेवायें प्रदान करने मे सहायता देता है, रोगियो के अहं को सुदृढ बनाता है, रोगियो को विभिन्न सामाजिक संस्थाओ मे समायोजन के ढंगों की जानकारी कराता है, रोगियो की मानसिक स्थिति के अनुकूल उनके मन को बहलाने के लिए मनोरजन एवं खेलकूद की व्यवस्था करता है, रोगियो को उनके रोग के बारे मे परिस्थिति की गम्भीरता को ध्यान मे रखते हुए आवश्यक जानकारी कराता है, रोगी के परिवार तथा अन्य समूहो एवं समुदाय के व्यक्तियो एव संस्थाओ से सम्पर्क करते हुए आवश्यक सहायता उपलब्ध कराता है, रोगी के पर्यावरण में आवश्यक परिवर्तन कराता है और रोगी के सामाजिक सामजस्य को प्रोत्साहित करता है। इन विभिन्न कार्यो को सपादित करने के लिए वह मत्रणा, मनोवैज्ञानिक आलंबन, स्पष्टीकरण, प्राख्या, हस्तातरण, पर्यावरण मे परिवर्तन तथा उपलब्ध सेवाओ के सदुपयोग की प्रविधियों का सहारा लेता है।

X ग्राम्य विकास (Rural development)

1991 की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष की 74 27 प्रतिशत जनसख्या गावो में रहती है। गावो मे रहने वाली जनसख्या का 40 4 प्रतिशत निर्धनता की रेखा के नीचे है। गावो के सर्वांगीण विकास के लिए स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् शासन द्वारा अनेक प्रकार के कार्यक्रम चलाये गये हैं : समेकित ग्राम्य विकास कार्यक्रम तथा इसकी उपयोजनाओ के रूप मे ग्रामीण क्षेत्रो मे महिलाओ एव बच्चो के विकास की योजना तथा स्व रोजगार हेतु ग्रामीण युवको का प्रशिक्षण, जवाहर रोजगार योजना, ग्रामीण जल आपूर्ति एव सफाई योजना, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम तथा रेगिस्तान विकास कार्यक्रम, भूमि सुधार सबंधी कार्यक्रम, खेती के उपज के विपणन सम्बन्धी कार्यक्रम के अधीन प्राथमिक तथा द्वितीयक स्तर की ग्रामीण बाजारो तथा ग्रामीण सड़को की योजनायें चलायी जा रही हैं।

XI सामाजिक प्रतिरक्षा एवं अपराधी सुधार (Social defence and corrections)

सामाजिक प्रतिरक्षा की परम्परागत अवधारणा के अन्तर्गत समाज की अपराध के विरुद्ध रक्षा ही सम्मिलित था किन्तु वर्तमान समय मे अपराध सहित विभिन्न प्रकार के विचलनपूर्ण अथवा असामजस्यपूर्ण व्यवहारों की रोकथाम, उपचार एव पुनर्वासन को इसके विषय क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित कर दिया गया है ताकि समुदाय मे मानव जीवन के लिए स्वस्थ परिस्थितियो का निर्माण करते हुए समाज की विघटन से रक्षा की जा सके। आज अपराधियो, बाल अपराधियो, उपेक्षित किशोरो, वृद्धो, अनैतिक व्यापार मे लगी हुई महिलाओ एवं लडकियों, निराश्रितो, भिखारियो, मद्यपान करने वालो, मादक द्रव्य व्यसनो मे लिप्त व्यक्तियो, इत्यादि की रोकथाम, उपचार एव पुनर्वासन के लिए किये गये प्रयास सामाजिक रक्षा की परिधि मे आते हैं। भारत सरकार ने इस सदर्भ में अनेक प्रकार की योजनाये चला रखी हैं जिनमे कठिन परिस्थितियों मे पाये जाने वाले बच्चो के लिए सेवाये, देखरेख एव

प्रावीडेन्ट फण्ड एव विविध प्रावधान अधिनियम, 1952 के अधीन चलायी जा रही हैं, कोयला खान प्रावीडेन्ट फण्ड योजना जो कोयला खान प्रावीडेन्ट फण्ड तथा बोनस अधिनियम 1948 के अधीन चलायी जा रही है, मातृत्व हित लाभ योजना जो मातृत्व हित लाभ अधिनियम, 1961 के अधीन चलायी जा रही है, मालिको की श्रमिको की वैयक्तिक चोट की स्थिति मे क्षतिपूर्ति भुगतान की देयता का बीमा करने की योजना जो वैयक्तिक चोट (क्षतिपूर्ति बीमा) अधिनियम 1963 के अधीन चलायी जा रही है, ग्रेच्युटी भुगतान योजना जो ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम, 1972 के अधीन चलायी जा रही है तथा बैठकी एव छटनी क्षतिपूर्ति योजना जो औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के अधीन चलायी जा रही है। इनके अतिरिक्त सरकारी कर्मचारियो के लिए सरकारी प्रावीडेन्ट फण्ड, पेन्शन, ग्रेच्युटी, सामूहिक बीमा, सेवा के दौरान मरने वाले कर्मचारियो के आश्रितो को उनकी योग्यता के अनुसार नौकरी, इत्यादि की योजनाए चलाई जा रही है। विभिन्न स्वायत्तशासी सस्थाओ एव अन्य विभिन्न उपक्रमो मे कार्यरत कर्मचारियो के लिए भी सरकारी एव स्वैच्छिक स्तर पर सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने के लिए सामूहिक बीमा योजनाए, प्रावीडेन्ट फण्ड योजना तथा विभिन्न प्रकार की बीमा योजनाये उदाहरणार्थ, फसल बीमा योजना चलायी गयी है। विधवाओ को उत्तर प्रदेश केरल इत्यादि राज्य सरकारो द्वारा विधवा पेन्शन प्रदान की जा रही है। निराश्रित वृद्धो को राज्य सरकारो द्वारा वृद्धावस्था पेन्शन प्रदान की जा रही है। विमानो, रेलो तथा बसो से यात्रा करने वाले यात्रियो के बीमे की भी सबधित सगठनो द्वारा व्यवस्था की गयी है। स्वतन्त्रता सग्राम सेनानियो, ससद सदस्यो तथा विधायको को भी पेन्शन प्रदान की जा रही है।

XIII *सामाजिक नीति, नियोजन एव विकास*
(Social policy, planning and development)

सामाजिक नीति

किसी भी समाज को चलाने के लिए कुछ ऐसी नीतियो का

प्रतिपादन किया जाना आवश्यक होता है जो दिशा–निर्देशन कर सके। सामाजिक नीति सामाजिक सरचना की कमियो को दूर करती है। गोखले के मत मे "सामाजिक नीति एक साधन है जिसके माध्यम से आकांक्षाओ तथा प्रेरणाओ को इस प्रकार विकसित किया जाता हे कि सभी के कल्याण की वृद्धि हो सके।"[1] सामाजिक नीति द्वारा मानव एवं भौतिक दोनो प्रकार के ससाधनो मे वृद्धि की जाती है जिससे पूर्ण सेवायोजन की स्थिति उत्पन्न होती हे तथा निर्धनता दूर होती है।

भारत मे सामाजिक नीति का प्रकटन भारतीय सविधान तथा पचवर्षीय योजनाओ के माध्यम से किया गया है। सविधान के अनुच्छद 38, 39, 39(ए), 41,42,43, 43(ए), 45, 46 तथा 47 मे नीति सवधी महत्वपूर्ण घोषणाये की गयी हैं। पचवर्षीय योजनाओ मे आवश्यक आवश्यकताओ की पूर्ति, निर्धनता के उन्मूलन, रोजगार के अवसरो मे वृद्धि, सम्पत्ति, धन तथा अवसरो की असमानता मे कमी, पूजी के एकाधिकार की समाप्ति, मानव ससाधनो के विकास, व्यक्तियो की मनोवृत्तियो तथा सस्थाओ की सरचनाओ मे समाजवादी व्यवस्था के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन, विकास सम्बन्धी नीति के निर्धारण एव कार्यान्वयन मे जन सहभागिता, निर्बल वर्गो के कल्याण मे वृद्धि, विकास के समान अवसर एव विकास की प्रक्रिया से प्राप्त होने वाले लाभो के साम्यपूर्ण वितरण की व्यवस्था की गयी है।

सामाजिक नियोजन

नियोजन जीवन का एक महत्वपूर्ण अग है। ए जे कान्ह के मत मे "सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत वैयक्तिक और सामूहिक विकास एव जीवन यापन के लिए गारण्टीयुक्त न्यूनतम ससाधनो के कार्यान्वयन एव अपने सदस्यो के लिए अपनी अभिलाषाओं एव उद्देश्यो की प्राप्ति हेतु समाज के प्रयास समाहित है।"[2]

भारत मे सामाजिक नियोजन विभिन्न पचवर्षीय योजनाओ के माध्यम से किया गया है। इन पचवर्षीय योजनाओ का मूल उद्देश्य

तीव्र और अनवरत आर्थिक विकास करना तथा आय और सम्पत्ति मे पायी जाने वाली विषमताओ को अत्यधिक प्रभावपूर्ण एव सन्तुलित रूप से कम करते हुए सेवायोजन के अवसरो मे वृद्धि करना था ताकि आर्थिक शक्ति पर एकाधिकार मे कमी की जा सके और देश को प्रत्येक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाया जा सके। पचवर्षीय योजनाओं मे मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया जिसके अधीन सार्वजनिक तथा निजी दोनो क्षेत्रो को एक दूसरे के पूरक के रूप मे स्वीकार किया गया। बुनियादी एव भारी उद्योगो जिनमे अधिक पूजी निवेश की आवश्यकता हे के प्रोत्साहन का उत्तरदायित्व सार्वजनिक क्षेत्र पर डाला गया ओर लोगो की आवश्यकताओ एव आकाक्षाओ की पूर्ति के लिए आवश्यक व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व निजी क्षेत्र पर डाला गया। इन पचवर्षीय योजनाओ क अन्तर्गत सामाजिक एव निजी हितो के बीच आवश्यक सामजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

सामाजिक विकास

सामाजिक विकास समाज के मानव ससाधनो का विकास करता है। विभिन्न प्रकार से यह सामाजिक न्याय का आश्वासन प्रदान करता है, आर्थिक विषमताओ की रोकथाम करता है सामाजिक असमानताओ का दूर करता हे, पिछडे वर्गो का कल्याण एव विकास करता ह जीवन स्तर को ऊचा उठाता है सामाजिक लाभो का साम्यपूर्ण वितरण करता है सेवायोजन के उपयुक्त अवसर प्रदान करता है तथा जनसख्या वृद्धि पर रोक लगाता है।

सामाजिक विकास समाज के सदस्यो को इस प्रकार विकसित करने की प्रक्रिया है कि उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके सेवायोजन योग्य व्यक्तियो को सेवायोजन/काय के उपयुक्त अवसर उपलब्ध हो सके वे कार्य की न्यायोचित एव मानवीय परिस्थितियो मे अपने समाज के उददश्यो की प्राप्ति म अपना पूण योगदान दे सक और वे अपने द्वारा दिये गये अशदान तथा सामाजिक न्याय की आवश्यकताओ के अनुसार अपन श्रम के लाभो म साम्यपूर्ण अश प्राप्त

करने मे समर्थ हो सके। इस अर्थ मे सामाजिक विकास के अन्तर्गत समाज और व्यक्ति दोनो का सर्वागीण विकास सन्निहित होने के कारण इसके लिए अपेक्षित विभिन्न पहलुओ यथा स्वच्छ पेयजल, पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोजगार, कार्य की उपयुक्त शर्ते एव परिस्थितिया, मनोरजन तथा खेलकूद इत्यादि मे चेतन, सगठित एव नियोजित रूप से वाछित दिशा मे परिवर्तन किये जाने आवश्यक हैं।

भारत मे सामाजिक विकास भारतीय सवधिान के अन्तर्गत किये गये विभिन्न प्रावधानो तथा पचवर्षीय योजनाओ एव कार्यक्रमो के माध्यम से किया जा रहा है।

XIV *कानूनी सहायता (Legal aid)*

भारतीय सविधान के अनुच्छेद 39(ए) मे इस बात का प्रावधान किया गया है, "राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि वैधानिक व्यवस्था के सचालन से समान अवसर के आधार पर न्याय को प्रोत्साहन प्राप्त हो तथा विशेष रूप से इस बात को सुनिश्चित करने के लिए न्याय प्राप्त करने के अवसरो से कोई नागरिक आर्थिक अथवा अन्य असमर्थताओ के कारण वचित न हो सके, उपयुक्त विधान अथवा योजना अथवा अन्य किसी प्रकार से नि शुल्क विधिक सहायता प्रदान करेगा।" भारतवर्ष मे शासन द्वारा निर्धनो को विधिक सहायता प्रदान करने की योजना चलाई जा रही है जिसके अधीन उन निर्धनो को जो स्वय विधिक सहायता प्राप्त करने मे समर्थ नहीं हैं, शासन अपने द्वारा उपयुक्त समझे गये अधिवक्ताओ के माध्यम से विधिक सहायता उपलब्ध कराता है। इसके अतिरिक्त हमारे उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय भी जन अभिरुचि विवाद को प्रोत्साहित कर निर्धनो, शोषितो, एव पीडितो के लिए विधिक सहायता के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

समाज कार्य जन अभिरुचि विवादो तथा निर्धनो के लिए विधिक सहायता की योजना के माध्यम से कानूनी सहायता प्रदान करने मे महत्वपूर्ण भूमिका प्रतिपादित कर सकता है।

XV पर्यावरण सन्तुलन (Environmental balance)

मानव द्वारा पर्यावरण का अविवेकपूर्ण दोहन करने के कारण आज पर्यावरण का सतुलन बिगड गया है। यह असतुलन पर्यावरण की भौतिक सरचना मे परिवर्तनो, जीवन श्रृखला की विभिन्न कडियो मे होने वाली गडबडियो, प्राकृतिक ससाधनो मे अनवरत होने वाली कमी, जीवित रहने मे सहायता प्रदान करने वाली व्यवस्था मे गिरावट जो जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, भूमि प्रदूषण इत्यादि के रूप मे व्यक्त होती है, के कारण उत्पन्न हुआ है और इससे आज सम्पूर्ण विश्व को एक गम्भीर खतरा उत्पन्न हो गया है। इस खतरे के निवारण मे समाज कार्य एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पर्यावरण के अन्तर्गत निवास करने वाले सभी व्यक्तियो की अनुकूलन सम्बन्धी क्षमताओ को बढाने तथा पर्यावरण मे सुधार करने के लिए व्यक्तियो एव उनके पर्यावरणो के बीच होने वाली अन्तर्क्रिया को सुधारने का कार्य कर रहा है। यह तेजी से बदलते हुए भौतिक एव सामाजिक पर्यावरणो के साथ लोगो के नाजुक सम्बन्ध के विषय मे वैज्ञानिक ज्ञान प्रदान कर सकता है। यह लोगो को विभिन्न प्रकार की घटनाओ एव व्यवहारो के पर्यावरणात्मक प्रभावो को समझने मे सहायता कर सकता है। यह लोगो को इस बात के लिए सम्प्रेरित कर सकता है कि वे पर्यावरण का सावधानीपूर्वक सदुपयोग ही करे, दुरुपयोग नहीं।

XVI मानव अधिकारो का संरक्षण तथा सामाजिक न्याय का प्रोत्साहन (Preservation of human rights and promotion of social justice)

मानव अधिकारो का सरक्षण

1948 मे सयुक्त राष्ट्र सघ द्वारा की गयी सार्वभौमिक अधिकारो की घोषणा मे मानव अधिकारो का विस्तृत उल्लेख किया गया है। इस घोषणा मे 30 अनुच्छेद पाये जाते हैं जिनमे सभी वाछनीय मानव अधिकारो का उल्लेख है। इनमे जीवन, स्वाधीनता और वैयक्तिक

सुरक्षा, गुलामी या दासता के निषेध, शारीरिक यातना पर रोक, कानूनी सहायता एव सुरक्षा, अधिकारो का अतिक्रमण करने वाले कार्यो के विरुद्ध विधिक सहायता, मनमाने ढग से की गयी गिरफ्तारी, नजरबन्दी या देश निष्कासन पर रोक, अधिकारो एव कर्तव्यो के निर्धारण एव आरोपित दोषो के मामले मे न्यायोचित सुनवाई, आरोपित अपराधियो को अपना पक्ष प्रस्तुत करने के अवसर का प्रावधान, कानून मे किये गये प्रावधान के उल्लघन को ही दण्डनीय अपराध माना जाना, व्यक्ति की एकान्तता, परिवार, घर या पत्र व्यवहार मे मनमाना हस्तक्षेप न किया जाना, देश की सीमाओ के अन्तर्गत स्वतत्रतापूर्वक आना-जाना एव बसना, सताये जाने पर शरण लेना, किसी भी राष्ट्र विशेष की नागरिकता प्राप्त करना, जाति, राष्ट्रीयता या धर्म की रुकावटो के बिना विवाह करना तथा परिवार स्थापित करना, सम्पत्ति रखने तथा मनमाने ढग से इससे वचित न किया जाना विचार, अन्तरात्मा ओर धर्म की स्वतत्रता, विचार और उसकी अभिव्यक्ति की स्वतत्रता, शान्तिपूर्ण सभा करने या समिति बनाने, शासन मे भागीदारी करने, सामाजिक सुरक्षा, काम करने, इच्छानुसार रोजगार का चुनाव करने, काम के उचित और सुविधाजनक परिस्थितियो को प्राप्त करने तथा बीमारी से सरक्षण पाने, समान कार्य के लिए समान मजदूरी, उचित मजदूरी, श्रमिक सघ बनाने और भाग लेने, विश्राम एव अवकाश प्राप्त करने, उपयुक्त जीवन स्तर प्राप्त करने, शिक्षा, सास्कृतिक जीवन मे स्वतत्रतापूर्वक हिस्सा लेने तथा उपयुक्त सामाजिक एव अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को प्राप्त करने के अधिकार सम्मिलित हें।

मानव अधिकारो के सरक्षण मे समाज कार्य एक महत्वपूर्ण भूमिका प्रतिपादित कर सकता हे क्योकि यह न केवल प्रगतिशील सामाजिक नीतियो एव विधानो के निर्माण के लिए आवश्यक जनमत तेयार करता है तथा अपेक्षित तथ्य उपलब्ध कराता हे बल्कि उपयुक्त सेवाओ का प्रावधान सुनिश्चित कराते हुए लोगो मे अपने अधिकारो के प्रति जागरूकता उत्पन्न करते हुए तथा लोगो को सगठित कराते हुए मानव अधिकारो के सरक्षण से सबधित नीतियो, कानूनो,

योजनाओं तथा कार्यक्रमों के प्रभावपूर्ण आयोजन को भी सुनिश्चित कराता है।

सामाजिक न्याय का प्रोत्साहन

सामाजिक न्याय की अवधारणा सकारात्मक एव नकारात्मक दो दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। नकारात्मक दृष्टिकोण के अनुसार समाज के जिन वर्गों के साथ अतीत मे अन्याय हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप वे वर्तमान मे पिछडे हुए हैं और अपने इस पिछडेपन के कारण समाज की मुख्य धारा मे जुडने मे तथा सामाजिक क्रिया मे अपेक्षित योगदान देने मे अपने को असमर्थ पा रहे हैं, विशिष्ट प्रकार का सरक्षण एव सवर्द्धन प्रदान करते हुए न्याय किये जाने की आवश्यकता है। सकारात्मक दृष्टिकोण के अनुसार किसी भी समाज के मानव ससाधनो के विकास की दृष्टि से उन वर्गों के लिए विशेष उपाय किये जाने की आवश्यकता है जो विविध प्रकार के कारणो से बाधित है, समाज की मुख्य धारा मे नही जुड पा रहे हैं और सामाजिक क्रिया मे अपेक्षित योगदान नहीं दे पा रहे हैं।

सामाजिक न्याय की परिभाषा समाज मे पायी जाने वाली ऐसी स्थिति के रूप मे की जा सकती है जिसमे प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास करने के लिए अपेक्षित अवसर उपलब्ध हो प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यताओ एव क्षमताओ के अनुसार उपयुक्त कार्य की शर्तो पर स्वस्थ कार्य की परिस्थितियो म अपना कार्य सम्पादित करने के अवसर प्राप्त हो, लोगो द्वारा किये गये कार्य के परिणामस्वरूप होने वाले लाभो मे उन्हे साम्यपूर्ण हिस्सा प्राप्त हो सके तथा ऐसे व्यक्तियो को जो कार्य करने के योग्य नही हैं अथवा इस योग्य नहीं बनाये जा सकते, एक सम्मानजनक जीवन स्तर प्राप्त हो सके।

भारतीय सविधान के आमुख तथा भाग—III IV और XVI के अन्तर्गत सामाजिक न्याय सम्बन्धी प्रावधान किये गये हैं। इस सन्दर्भ

मे भारतीय सविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, 17, 19, 21, 23, 24, 25, 29, 38, 39, 39(ए), 41 तथा 42 विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

समाज कार्य सामाजिक न्याय के प्रोत्साहन मे विशेष योगदान दे सकता है। यह सामाजिक न्याय की आवश्यकता को उजागर करते हुए तथा इसका आश्वासन प्रदान करते हुए विवेकपूर्ण एव तर्कसगत योजना एवं कार्यक्रमो का निर्माण करते हुए सामाजिक न्याय दिलाने के लिए अपेक्षित जनमत तैयार कर सकता है और इन योजनाओ एव कार्यक्रमो के कार्यान्वयन मे आवश्यक सहायता प्रदान कर सकता है।

सन्दर्भ

1 Social Policy is a means through which aspirations and motivations are inculcated in such a way as would lead to promotion of the welfare of all

Gokhale, S D, "Integrated Social Policy in India", S D Gokhale (ed) *Social Welfare Legond and Legacy*, Popular Prakashan, Bombay, 1975, p 35

2 Social planning can be defined "as encompassing a society's efforts to implement a guaranteed minimum of resources for individual and group development and living and to realize its goals and aspiration for its members "

Kahn, Alfred, J, *Studies in Social Policy and Planning*, Russell Sage Foundation, New York 1969, p 298

समाज कार्य एवं अन्य समाज विज्ञान
(SOCIAL WORK AND OTHER SOCIAL SCIENCES)

समाज कार्य एक सहायतामूलक कार्य है। यह सहायता वैज्ञानिक ज्ञान, प्राविधिक निपुणताओ एव दार्शनिक मूल्यो का प्रयोग करते हुये प्रदान की जाती है। ज्ञान का क्षेत्र अनन्त है, इसकी प्राप्ति के अनेक अभिगम हैं। वास्तविकता के विभिन्न पहलुओ का विभिन्न अभिगमो के आधार पर विश्लेषण करते हुये विभिन्न विज्ञानो द्वारा ज्ञान की अनवरत रूप से वृद्धि की जाती है। मानव इतिहास मे न कभी कोई ऐसी स्थिति आयी है और न शायद आ सकेगी जब यह कहना सम्भव हो कि वास्तविकता के हर पहलू का हर दृष्टि से पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया है। ज्ञान की खोज में लगे हुये विभिन्न विद्या विशेष अपने--अपने अभिगमो मे अपनी अलग विशिष्टता को बनाये रखते हुये एक दूसरे से अधिक से अधिक लाभान्वित होने के लिये अन्तर्निभरता की स्थिति मे पाये जाते हैं। वास्तविकता के समान अथवा एक जैसे पहलुओ की खोज मे लगे हुए विद्याविशेष अधिक घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है। सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन करने वाले सभी विद्या विशेष एक श्रृखला की कडी की भाति एक दूसरे से अविछिन्न रूप से सम्बद्ध हैं। समाज की सरचना, व्यक्तित्व की सरचना तथा इन दोनो मे होने वाली अन्तर्क्रिया जिसके परिणामस्वरूप नाना प्रकार की मनोवैज्ञानिक समस्याये उत्पन्न होती हैं जिनका समाज कार्य समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, इतनी जटिल हैं कि कोई भी समाज विज्ञान अकेले स्वतत्र रूप से इनका अध्ययन नही कर सकता।

समाज विज्ञानो से हमारा अभिप्राय उन विज्ञानो से है जो समाज तथा समाज के एक सदस्य के रूप मे व्यक्ति के विभिन्न पहलुओ का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करते हैं। सेलिगमैन ने यह विचार व्यक्त किया है "समाज विज्ञानो की परिभाषा ऐसे मानसिक अथवा सास्कृतिक विज्ञानों के रूप मे की जा सकती है जो किसी समूह के सदस्य के रूप में किसी व्यक्ति की क्रियाओ से सम्बन्धित होते हैं।"[1] समाज विज्ञान मे समाज क्या है, समाज की विभिन्न इकाइयो के सदस्य के रूप मे व्यक्ति अन्य व्यक्तियो के साथ किस प्रकार अन्तर्क्रिया करता है, इस अन्तर्क्रिया के दौरान किन कठिनाइयो का सामना करता है तथा इनका किस प्रकार समाधान करने का प्रयास करता है, जैसे अनेक विषयो का क्रमबद्ध रूप से अध्ययन किया जाता है ताकि इनसे सम्बन्धित प्रामाणिक ज्ञान, परिकल्पनाओ एव मान्यताओ का निरूपण किया जा सके।

समाज कार्य समाज की विभिन्न इकाइयो के सदस्य के रूप मे समस्याग्रस्त व्यक्ति की इस प्रकार सहायता करता है ताकि वह अपनी प्रभावपूर्ण सामाजिक क्रिया के मार्ग मे आने वाली नाना प्रकार की मनोसामाजिक समस्याओ को भली प्रकार समझते हुए, उनका समुचित निदान करते हुये तथा उनके समाधान के लिये उपयुक्त कदम उठाते हुये इनको सुलझा सके और भविष्य मे इसी प्रकार की समस्याओ के उत्पन्न होने पर वह स्वय अपनी सहायता करने की दृष्टि से सक्षम बन सके। यह कार्य एक कठिन कार्य है क्योकि इसे समस्याग्रस्त व्यक्ति के साथ सोहार्द्रपूर्ण किन्तु विषयात्मक एव अर्थपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करते हुये ही सम्पादित किया जाता है। इसके प्रभावपूर्ण सम्पादन के लिये यह आवश्यक होता है कि समाज कार्यकर्ता को विभिन्न प्रकार के समाज विज्ञानो का समुचित ज्ञान हो और इसीलिये यहा पर समाज कार्य तथा अन्य समाज विज्ञानो के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध का विवेचन किया जा रहा है

1 *समाज कार्य तथा समाज शास्त्र (Social Work & Sociology)*

समाजशास्त्र का समाज कार्य पर गम्भीर प्रभाव पडा है। समाजशास्त्र

का प्रारम्भिक प्रभाव स्पेन्सर के विकासवादी सिद्धांत पर आधारित था जिसके परिणामस्वरूप वैयक्तिक अपूर्णता (Personal inadequacy) को सामाजिक समस्याओं का कारण समझा जाने लगा। यहा तक कि जिस संस्था मे समाज कार्य का प्रशिक्षण पहली बार प्रारम्भ किया गया उसका नाम 'स्कूल ऑफ सोशियालोजी' रखा गया था तथा इसके पाठ्यक्रम मे समाजशास्त्रीय सिद्धांत ही प्रमुख रूप से विद्यमान थे।

समाजशास्त्र समाज का क्रमबद्ध रूप से अध्ययन करता है। समाज सामाजिक सम्बन्धो का जाल है और इस अर्थ मे समाज शास्त्र विभिन्न प्रकार के सामाजिक सम्बन्धो का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। मैकाइवर तथा पेज ने ठीक ही लिखा है 'समाजशास्त्र सामाजिक विषय के सम्बन्ध मे है सम्बन्धो के जाल को हम समाज कहते हैं।"[2] गिडिंग्स के अनुसार 'समाजशास्त्र सम्पूर्णता मे देखे गये समाज का क्रमबद्ध वर्णन एव व्याख्या है।'[3] गिलिन तथा गिलिन के मत मे "अपने सर्वाधिक व्यापक अर्थ मे समाजशास्त्र को जीवित प्राणियों के सम्पर्क से उत्पन्न होने वाली अन्तर्क्रियाओ का अध्ययन कहा जा सकता है।"[4] सोरोकिन के विचार मे, 'समाजशास्त्र सामान्य स्वरूपो प्रारूपो एव विविध प्रकार के अन्तर्सम्बन्धो की दृष्टि से सामाजिक – सांस्कृतिक घटनाओ का सामान्यीकरण करने वाला विज्ञान है।'[5]

समाजशास्त्र के अन्तर्गत सामान्य रूप से निम्नलिखित का अध्ययन किया जाता है (1) मानव संस्कृति तथा समाज, (2) मानव व्यक्तित्व, (3) वैज्ञानिक पद्धति, (4) सामाजिक संरचना (5) सामाजिक व्यवस्था, (6) सामाजिक क्रिया, (7) सामाजिक संस्थाये, (8) सामाजिक प्रक्रियाये, (9) सामाजिक परिवर्तन, (10) सामाजिक व्याधिकी एव विघटन, (11) सामाजिक नियन्त्रण, तथा (12) सामाजिक एकीकरण।

समाजकार्य का अधिकाश ज्ञान समाजशास्त्र पर आधारित है। समाजकार्य की एक प्रणाली के रूप मे सामाजिक वैयक्तिक समाजकार्य मे समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान के ज्ञान का पर्याप्त रूप से प्रयोग किया जाता है। टिम्स[6] ने तो यहाँ तक कह डाला है कि वैयक्तिक

समाजकार्य मे समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान के ज्ञान का ही उपयोग होता है क्योंकि वैयक्तिक समाजकार्य का अपना कोई ज्ञान है ही नहीं। मेयर[7] ने समाजशास्त्र तथा समाजकार्य के बीच 4 क्षेत्रो मे अन्तर्संबंध का उल्लेख किया है -

1. अन्तर्वैयक्तिक अन्त.क्रिया

व्यक्ति समूह तथा समाज के सदस्य होते हैं। वे आपस में अन्त.क्रिया करते हैं। इस अन्तर्क्रिया की सफलता अथवा असफलता, समायोजन अथवा असमायोजन उत्पन्न करती है। अन्तर्क्रिया के विभिन्न स्वरुपो के अध्ययन मे समाजशास्त्र एव समाजकार्य दोनो की अभिरुचि है।

2. सामाजिक ज्ञान

समुदाय क्या है? उसका इतिहास क्या है? उसकी आवश्यकताये एव समस्याये क्या हैं? उसकी संस्कृति क्या है? उसकी स्थिति क्या है? इत्यादि प्रश्नो के उत्तर समाज शास्त्र एवं समाजकार्य दोनों खोजने का प्रयास करते हैं।

3. संस्था का प्रशासन

प्रभावपूर्ण सेवायें प्रदान करने के लिये संस्था का समुचित प्रशासन समाजशास्त्र एवं समाजकार्य दोनों की अभिरुचि का विषय है।

4. सामाजिक समस्यायें

विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओ को समझकर उनका समुचित समाधान प्रस्तुत करते हुये सामाजिक विघटन को कम करने और संगठन को प्रोत्साहित करने में समाजशास्त्र और समाज कार्य दोनों अभिरुचि रखते हैं।

स्मिथ के मत में प्रारंभ से ही समाजशास्त्र एव समाजकार्य के बीच

प्रकार्यात्मक सम्बन्ध रहा है क्योकि (1) इन दोना की उत्पत्ति समाज से हुई है तथा दोनो ही सामाजिक समस्याओ के समाधान एव सुधार में अभिरुचि रखते हैं, (2) अनेक अवसरा पर दोनो का नेतृत्व एक ही व्यक्ति द्वारा किया गया है, (3) समाज कार्यकर्ताओ के लिये एक विशेष प्रकार के समाजशास्त्रीय प्रशिक्षण की आवश्यकता को स्वीकार किया गया है, (4) सामाजिक समस्याओं का शोध व्यक्तियो क अध्ययन तथा समुदाय का विश्लेषण करते हुये समाजशास्त्र समाजकार्य के ज्ञान सम्बन्धी आधार को सुदृढ बनाता है (5) सामाजिक समूहों सस्थाओं एव प्रक्रियाओ के सम्बन्ध में उपयोगी परिकल्पनाये प्रस्तुत करते हुये समाजशास्त्र समाज कार्य की सहायता करता है, (6) समाज कार्य प्रशिक्षण मे समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के प्रयोग के परिणामस्वरूप सामाजिक सरचना की उपयुक्त जानकारी प्राप्त हो जाती है।

समाजशास्त्र विशिष्ट रुप से निम्नलिखित से सम्बन्धित है

(1) समाजशास्त्र सेवार्थी के व्यक्तित्व को समझने के लिये वशानुक्रम एवं पर्यावरण सम्बन्धी विभिन्न प्रकार के कारको के प्रभाव का स्पष्ट करता है।

(2) समाजशास्त्र सस्कृति द्वारा सेवार्थी के व्यक्तित्व पर डाले गये विभिन्न प्रकार के प्रभावो को उजागर करता है।

(3) समाजशास्त्र सदर्भ समूहो सहित उन विभिन्न समूहा एव समुदायो से सम्बन्धित शक्तियो एव कारको के सेवार्थी पर प्रभाव को स्पष्ट करता है जिनसे वह सम्बन्धित होता है।

(4) समाजशास्त्र सेवार्थी के व्यक्तित्व मे पायी जाने वाली सगठन एव विघटन की सापेक्ष स्थिति को स्पष्ट करता है।

(5) समाजशास्त्र सेवार्थी के व्यक्तित्व की विघटन सम्बन्धी विभिन्न प्रकार की समस्याओ पर प्रकाश डालता है।

(6) समाजशास्त्र विभिन्न सामाजिक प्रक्रियाओ मे भाग लेने वाले एक

पक्ष के रूप मे सेवार्थी की मनोवृत्तियो, योग्यताओ, क्षमताओ इत्यादि को समझने मे सहायता करता है।

(7) समाजशास्त्र सेवार्थी द्वारा अनुभव की जाने वाली समस्याओ के सामाजिक पहलुओ को अर्थात् उन पहलुओ को जो उसके समूहो तथा समुदायो की सदस्यता के कारण उत्पन्न होती है, समझने मे सहायक सिद्ध होता है।

(8) समाजशास्त्र सामाजिक वास्तविकता के विविध पहलुओ की जानकारी प्राप्त कराता है जो समाज के एक सदस्य के रूप मे समस्याग्रस्त सेवार्थी से सम्बन्धित होते हैं।

(9) समाजशास्त्र समाज मे उपलब्ध उन विभिन्न ससाधनो की जानकारी कराता है जिनका उपयोग करते हुये समस्याग्रस्त सेवार्थी की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

(10) समाजशास्त्र उन कारको को स्पष्ट करता है जो अन्य व्यक्तियो के साथ समस्याग्रस्त व्यक्ति के सचार को अधिक प्रभावपूर्ण बनाते हैं अथवा इसकी प्रभावपूर्णता को कम करते हैं।

समाजशास्त्र द्वारा उपरिलिखित विभिन्न क्षेत्रो मे प्रदान की जाने वाली बहुमूल्य सहायता का अभिप्राय यह कदापि नही कि समाज कार्य समाजशास्त्र का ही विस्तृत रूप है। समाज कार्य समाजशास्त्र के साथ–साथ सेवार्थी उसकी समस्या तथा परिस्थितियो के अनुसार अन्य विविध प्रकार के समाज विज्ञानो मे उपलब्ध ज्ञान का सहारा लेते हुये अपनी कार्य करने की सुविकसित प्रणालियो का उपयोग करते हुये सेवार्थी की समस्याओ का समाधान कर उसमे आत्म सहायता की क्षमता उत्पन्न करता है। इस प्रकार समाज कार्य समाजशास्त्र से कही अधिक व्यापक है क्योकि समाजशास्त्र एक समाज के सदस्य के रूप मे व्यक्ति का अध्ययन करते हुये समाजीकरणो के आधार पर सामान्य सिद्धान्त विकसित करने तक अपने को सीमित रखता है जबकि समाज कार्य विभिन्न समाज विज्ञानो से आवश्यकतानुसार ज्ञान का

प्रयोग करते हुये वास्तव मे मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान प्रस्तुत करता है।

समाज कार्य भी समाजशास्त्र को मूल्यवान ज्ञान प्रदान करता है। सेवार्थियो की समस्याओ का समाधान करते हुये सेवार्थियो के व्यक्तित्व के बारे मे, विशेष रूप से उनके व्यक्तित्व पर विभिन्न समूहो एव समुदायो द्वारा डाले गये प्रभावो के बारे में, सेवार्थियो की समस्याओ के बारे मे–विशेष रूप से सामाजिक कारको के योगदान के बारे मे तथा समस्याग्रस्त सेवार्थी एव सामाजिक वास्तविकता के बीच होने वाली अन्त क्रिया के बारे मे समाज कार्यकर्ताओ द्वारा विकसित किये गये ज्ञान के आधार पर समाजशास्त्र मे समाज के सदस्य के रूप मे व्यक्ति से सम्बन्धित ज्ञान मे वृद्धि होती है। समाजशास्त्र के कुछ नये क्षेत्र उदाहरण के लिये चिकित्सा समाजशास्त्र, सुधारशास्त्र, औद्योगिक समाज शास्त्र, इत्यादि के विकास मे समाजकार्य का प्रमुख योगदान रहा है।

साराश मे, समाजकार्य एव समाजशास्त्र एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं और यह सम्बन्ध एकतरफा न होकर दोतरफा है।

II *समाजकार्य एवं मनोविज्ञान*
(Social Work and Psychology)

मनोविज्ञान मन अथवा आत्मा का विज्ञान है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की मानसिक प्रक्रियाओं तथा व्यवहार के रूप में इनके परावर्तन का अध्ययन किया जाता है। समय–समय पर विभिन्न विचारको द्वारा मनोविज्ञान की परिभाषा भिन्न–भिन्न प्रकार से की गयी है।

मनोविज्ञान को अनेक प्रकार परिभाषित किया गया है। बोरिंग[8] के अनुसार, "मनोविज्ञान मानव प्रकृति का अध्ययन है।" मैकडुगल[9] का कहना है कि "मनोविज्ञान आचरण एव व्यवहार का वास्तविक विज्ञान है।" मन[10] का कथन है कि "मनोविज्ञान आन्तरिक अनुभूतियो एव वाह्य व्यवहारो के अनुभव के आधार का प्राकृतिक विज्ञान है।"

इस प्रकार मनोविज्ञान की परिभाषा मानसिक प्रक्रियाओ एव व्यवहारो के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप मे की जा सकती है। मनोविज्ञान के अध्ययन की इकाई व्यक्ति है। मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसकी चेतना के विभिन्न स्तरो तथा मानसिक क्रियाओ और मानव व्यवहार में इनके परावर्तन का वैज्ञानिक विश्लेषण करता है। मनोविज्ञान चेतन, अर्द्धचेतन एवं अचेतन तीनो स्तरों पर विभिन्न मानसिक क्रियाओ तथा इनके व्यवहार के रूप मे परावर्तन का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत सवेदन, अवबोधन, संज्ञान, सीखना, स्मरण, सम्प्रेरणा, संवेगो, मनोदशाओ, इत्यादि मानसिक प्रक्रियाओ का अध्ययन करते हुये व्यक्ति के व्यवहार का विश्लेषण एव विवेचन किया जाता है।

समाज कार्य के अंतर्गत एक मनो–सामाजिक समस्या से ग्रस्त सेवार्थी को सहायता प्रदान किये जाने की दृष्टि से मनोविज्ञान निम्नलिखित रूप से सहायक सिद्ध होता है .

(1) मनोविज्ञान इस बात की जानकारी कराता है कि व्यक्ति के व्यवहार के सम्प्रेरक क्या हैं और इनकी प्रकृति क्या है?
(2) मनोविज्ञान चेतना के विभिन्न स्तरो पर पायी जाने वाली इच्छाओ, आशाओ एवं अभिलाषाओ को स्पष्ट करता है जो मानव व्यवहार को प्रभावित करते हैं।
(3) मनोविज्ञान उन विभिन्न ग्रन्थियो को स्पष्ट करता है जो मानव व्यवहार मे असामान्यता उत्पन्न करती हैं।
(4) मनोविज्ञान यह स्पष्ट करता है कि विभिन्न उत्तेजको का संवेदन किस प्रकार होता है, उनका संज्ञान किस प्रकार होता है, वे कहॉ तक स्मृति का अंग बने रहते हैं।
(5) मनोविज्ञान यह स्पष्ट करता है कि व्यक्ति की मनोदशाओ तथा उसके संवेगो का उसके व्यवहार पर क्या प्रभाव पडता है।
(6) मनोविज्ञान इस बात की जानकारी प्रदान करता है कि व्यक्तित्व

के विकास के विभिन्न चरण क्या होते हैं, विभिन्न चरणो पर किस प्रकार के व्यवहार प्रदर्शित किये जाते हैं तथा इन चरणो मे उत्पन्न होने वाली विभिन्न प्रकार की समस्याये क्या होती हैं।

(7) मनोविज्ञान अपने बचाव के लिये व्यक्ति द्वारा अपनायी जाने वाली विभिन्न रक्षायुक्तियो की जानकारी कराता है और इस प्रकार व्यक्ति के व्यवहार के वास्तविक अभिप्राय को समझने मे सहायता प्रदान करता है।

(8) मनोविज्ञान, असामान्य व्यवहार के विविध प्रकारो इनके कारणो लक्षणों एव उपचार के उपायो की जानकारी कराता है।

(9) मनोविज्ञान मस्तिष्क के तीन विभिन्न अगो के रूप मे इद, अह तथा पराह द्वारा व्यवहार पर डाले जाने वाले प्रभावो तथा इद एव पराह के बीच समन्वय स्थापित करने की अह की शक्ति को स्पष्ट करता है।

(10) मनोविज्ञान व्यक्ति के बुद्धि के स्तर, उसकी आत्म–अवधारणा उसकी मनोवृत्तियो, पूर्वाग्रहो, रूढिवादी धारणाओ, इत्यादि को समझने मे सहायता करता है।

उपरिलिखित विभिन्न क्षेत्रो मे मनोविज्ञान द्वारा प्रदान की गयी जानकारी सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा उसकी समस्या (जहाँ तक यह उसके व्यक्तित्व सम्बन्धी कारको के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है) को समझने मे सहायक सिद्ध होती है।

समाज कार्य मनोविज्ञान से एकतरफा सहायता ही नहीं प्राप्त करता बल्कि समाजकार्य अभ्यास के दौरान अनेक ऐसी परिकल्पनाओ तथा सामान्यीकरणो का निर्माण करता है जो मनोविज्ञान के लिये सहायक सिद्ध होते हैं। मनश्चिकित्सा तथा उपचार मनोविज्ञान के क्षेत्र मे समाज कार्य द्वारा महत्वपूर्ण योगदान किये गये हैं।

इस प्रकार समाजकार्य एव मनोविज्ञान पारस्परिक रूप से सहायता करते हुये एक दूसरे को सुदृढ बनाते हैं।

III समाजकार्य तथा सामाजिक मनोविज्ञान (Social Work and Social Psychology)

समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान की अलग अलग शाखाओ के रूप मे सामाजिक मनोविज्ञान समाज मे व्यक्ति की अन्तर्क्रिया एव व्यवहार का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। किम्बाल यग[11] के अनुसार "सामाजिक मनोविज्ञान एक दूसरे के साथ उनकी अन्तर्क्रियाओं मे तथा इस अन्तर्सम्बन्ध के व्यक्ति के विचारो, भावनाओ, सवेगों एव आदतो पर प्रभावो के सन्दर्भ मे व्यक्तियो का अध्ययन है।" आलपोर्ट[12] के अनुसार "सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के उस व्यवहार का अध्ययन है कि वे दूसरे व्यक्तियो के सम्बन्ध मे एव सामाजिक परिस्थितियो मे व्यक्त करते हैं।" शेरिफ तथा शेरिफ[13] का मत हे कि "सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक उत्तेजना प्रदान करने वाली परिस्थितियों के सदर्भ मे व्यक्ति के अनुभव तथा व्यवहार का अध्ययन है।"

इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान विभिन्न सामाजिक परिस्थितियो मे व्यक्ति के व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन हे। सामाजिक मनोविज्ञान के अन्तर्गत सम्प्रेरणाओ, सीखने, अनुकरण, सामाजीकरण, व्यक्तित्व पर सस्कृति के प्रभाव, सामूहिक अन्तर्क्रियाओ, सघर्षो, नेतृत्व, मनोवल, सामाजिक मनोवृत्तियो एव विश्वासो, पूर्वाग्रहो एव रूढिवाद धारणाओ जनमत, प्रचार, सचार, अफवाहो, सामाजिक तनाओ, सामाजिक आयोजन, क्रान्ति, युद्ध, भीड इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

समाज कार्य इस मान्यता के आधार पर सेवार्थी को सहायता प्रदान करता है कि उसकी समस्याये, विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों मे उसके द्वारा अनुकूलनपूर्ण व्यवहार कर पाने में असमर्थता के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है और यदि इनका प्रभावपूर्ण समाधान किया जाना हे तो सेवार्थी के सामाजिक एव सास्कृतिक परिवेश को ध्यान मे रखते हुये उसके अपने व्यक्तित्व एवं पर्यावरण मे आवश्यक परिवर्तन किये जाने होंगे। इसीलिये समाज कार्यकर्ता व्यक्ति के व्यवहार तथा पर्यावरण के बीच अन्तर्सम्बन्ध को समझने के लिये सामाजिक मनोविज्ञान का आश्रय लेता है।

समाज कार्य मे सामाजिक मनोविज्ञान के इन क्षेत्रो के ज्ञान का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है व्यक्तित्व पर सामूहिक एव सास्कृतिक परिवेश का प्रभाव, व्यवहार के सम्प्रेरक, सीखने की प्रक्रिया, मनोवृत्तिया एव विश्वास, पूर्वाग्रह एव रूढिबद्ध अवधारणाये, नेतृत्व, मनोबल, सामूहिक सघर्ष, सामाजिक तनाव, सामाजिक आयोजन, जनमत, प्रचार इत्यादि। इससे यह सुस्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक मनोविज्ञान के विषय क्षेत्र मे आने वाली सम्पूर्ण सामग्री समाज कार्य के लिये उपयोगी है।

समाज कार्य भी अपने ढग से सामाजिक मनोविज्ञान को सुदृढ बनाने मे सहायता प्रदान करता है। सामाजिक वास्तविकता के विभिन्न स्तरो पर व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय के साथ कार्य करता हुआ समाज कार्यकर्ता सामान्य रूप से और समाजकार्य शोध के माध्यम से सामाजिक परिस्थितियो मे व्यक्ति के व्यवहार से सम्बन्धित प्रमाणित ज्ञान मे वृद्धि करते हुये विशेष रूप से सामाजिक मनोविज्ञान की सम्पूर्ण विषय वस्तु को सुदृढ बनाता है।

इस प्रकार समाजकार्य और सामाजिक मनोविज्ञान के बीच एक दूसरे को पूर्ण बनाने वाली अन्योन्याश्रितता का सम्बन्ध है।

IV *समाज कार्य तथा मानवशास्त्र*
(Social Work and Anthropology)

मानवशास्त्र मनुष्य के शारीरिक स्वरूप, प्रजातीय विशेषताओ तथा सास्कृतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करता है। मानवशास्त्र के तीन क्षेत्र हैं (1) भौतिक मानवशास्त्र जिसके अन्तर्गत आदिम मानव की शारीरिक विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है, (2) प्रागैतिहासिक मानवशास्त्र जिसके अन्तर्गत प्रागैतिहासिक युग की सस्कृतिया, मकानो तथा प्रविधियो का अध्ययन किया जाता है, तथा (3) सामाजिक मानवशास्त्र जिसके अन्तर्गत जनजातीय समाजो एव उनकी सस्कृति का अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक मानवशास्त्र समाजकार्य के लिये विशेष रूप से उपयोगी

करता है ताकि उसे सुख का अनुभव हो सके। मार्शल[14] के शब्दो मे, "अर्थशास्त्र मानव जीवन के सामान्य व्यवसाय का अध्ययन है, यह वैयक्तिक एव सामाजिक क्रिया के उस भाग की जाच करता है जो कल्याण की प्राप्ति तथा इसके लिये अपेक्षित सामग्री के प्रयोग से अत्यधिक घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।" राबिन्सन[15] के मत मे, "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो उद्देश्यो एव ऐसे सीमित साधनो जिनके वैकल्पिक उपयोग होते हैं के बीच सम्बन्ध के रूप मे मानव व्यवहार का अध्ययन करता है"।

इस प्रकार अर्थशास्त्र मानव व्यवहार के आर्थिक पहलुओ का वैज्ञानिक अध्ययन है, जो उसकी सुख एव समृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं। अर्थशास्त्र के अन्तर्गत उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय, वितरण तथा राजस्व के विविध पक्षो का अध्ययन किया जाता है। इन सबके अध्ययन के बिना मनुष्य की समृद्धि के लिये अपेक्षित वस्तुओ एव सेवाओ का न तो प्रभावपूर्ण रूप से उत्पादन किया जा सकता है, न ही इनका उपभोग। इन वस्तुओ एव सेवाओ की अनुपस्थिति मे एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर जो समाज कल्याण का लक्ष्य है, सुनिश्चित कर पाना सम्भव नही है। मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान भी जीवन के आर्थिक पहलू को सुनिश्चित किये बिना सम्भव नहीं है तथा अनेक मनो–सामाजिक समस्याओ के मूल मे आर्थिक कारको की भूमिका सापेक्षतया अधिक महत्वपूर्ण होती है। उदाहरण के लिये, अचानक आर्थिक स्थिति मे तीव्र गिरावट आ जाने पर व्यक्ति मनोवैज्ञानिक अवसाद का शिकार होता है जिसके परिणामस्वरूप उसकी सामाजिक क्रिया दोषपूर्ण हो जाती है और व्यक्ति वैयक्तिक एव सामाजिक असतुलन का शिकार हो जाता है। विशिष्ट रूप से अर्थशास्त्र से प्राप्त ज्ञान समाजकार्य के लिये निम्न क्षेत्रो मे उपयोगी सिद्ध होता है

(1) जीवन यापन के लिये किस प्रकार के कार्यो मे उद्यम का चुनाव किया जाये और इसे किस प्रकार प्रभावपूर्ण रूप से चलाया जाये ताकि यह लाभपूर्ण सिद्ध हो सके?

(2) समाज मे किन वस्तुओ एव सेवाओ की किस सीमा तक माग है,? यह माग कितनी स्थायी अथवा अस्थायी है,? इस माग की पूर्ति मे कौन–कौन से व्यक्ति तथा सगठन पहले से ही कार्यरत है,? इत्यादि।

(3) उत्पादित की गयी वस्तुओ एव सेवाओ को इनकी लक्ष्य जनसंख्या तक किस प्रकार पहुचाया जाये? जमाखोरी, जखरेवाजी तथा एकाधिकार पर किस प्रकार नियत्रण लागू किया जाय ताकि निर्बल वर्ग के लोगो को भी आवश्यक वस्तुये एव सेवाये सरलतापूर्वक प्राप्त हो सके? इत्यादि।

(4) जीवन को सुख एवं आराम के साथ व्यतीत करने के लिये कौन सी वस्तुये एव सेवाये सापेक्षतया अधिक महत्वपूर्ण हैं जो वस्तुये एव सेवाये अधिक महत्वपूर्ण है उनकी अनवरतं एव सामाजिक रूप से आपूर्ति किस प्रकार सुनिश्चित की जाये? इत्यादि।

(5) प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता एव क्षमता के अनुसार उसकी पसन्द का कार्य किस प्रकार उपलब्ध कराया जाये? दिये गये कार्य को अनुकूल परिस्थिति मे उपयुक्त शर्तो पर स्वतंत्रतापूर्वक सम्पादित करने के अवसर किस प्रकार प्रदान किये जॉये? उसे अपने कार्य को अपनी इच्छा एव सुविधानुसार किस प्रकार नियमित एवं नियंत्रित करने दिया जाये? इत्यादि।

(6) उत्पादित की गयी वस्तुओ एव सेवाओ के आपस मे आदान–प्रदान को किस प्रकार सुनिश्चित किया जाये? इस आदान–प्रदान के माध्यम क्या हो? इन माध्यमो को किस प्रकार विकसित एवं नियंत्रित किया जाये इनका दुरुपयोग करने वाले व्यक्तियो को किस प्रकार दण्डित किया जाये इत्यादि।

(7) अपेक्षित जनसेवाओ एव सुविधाओ की अनवरत आपूर्ति को सुनिश्चित कराने के लिये आवश्यक ससाधनो (वित्तीय संसाधनो सहित) की व्यवस्था किस प्रकार की जाये कौन से और किस

प्रकार के नये कर लगाये जाये ताकि राज्य के ससाधनो मे वृद्धि हो सके? इत्यादि।

(8) समाज के निर्बल वर्गो को भी आराम एव सुख के साथ जीवित रहने मे समर्थ बनाने के लिये किन वस्तुओ एव सेवाओ की पूर्ति उपलब्धि के आधार पर अथवा नि शुल्क रूप से सुनिश्चित करायी जाये? इस छूट का लाभ प्राप्त करने मे बाधा उत्पन्न करने वाले व्यक्तियो तथा जमाखोरी करने वालो, मुनाफाखोरी करने वालो, भ्रष्टाचार मे लिप्त सरकारी तत्र से सबद्ध भ्रष्ट कर्मचारियो इत्यादि के विरुद्ध क्या कार्यवाही की जाये, इत्यादि।

जहा एक ओर अर्थशास्त्र जीवनयापन के लिये अपेक्षित सुख–सुविधाओ को उपलब्ध कराते हुये समाज कल्याण के सभी वर्गो के लिये एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर के लक्ष्य की प्राप्ति मे सहायता प्रदान करता है जो समाज कार्य का भी उद्देश्य है, वही समाज कार्य जीवन के विविध पहलुओ मे आर्थिक क्रियाओ के प्रभावपूर्ण सम्पादन के लिये अपेक्षित ज्ञान प्रदान करता है। आर्थिक क्रियाओ के भी अनेक सामाजिक तथा सास्कृतिक कारण तथा परिणाम होते हैं। समाजकार्य सेवार्थियो की परम्पराओ, प्रथाओ, रूढियो, जनरीतियो, मनोवृत्तियो, विश्वासो, पूर्वाग्रहो, रूढिग्रस्त अवधारणाओ, अनौपचारिक समूहो, सगठनो तथा सचार व्यवस्थाओ इत्यादि का अध्ययन करते हुये आर्थिक क्रियाओ पर इनके प्रभावो को स्पष्ट करता है। समाज कार्य सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक अभिवृद्धि को विकास के एक आधारभूत सिद्धान्त के रूप मे स्वीकार करते हुये आर्थिक विकास से सम्बद्ध व्यक्तियो को सामाजिक विकास के विविध पहलुओ को ध्यान मे रखते हुये आर्थिक विकास सम्बन्धी क्रियाकलापो का अनुसरण करने की प्रेरणाएँ एव परामर्श प्रदान करता है। समाज कार्य यह सुस्पष्ट करता है कि व्यक्ति मात्र रोटी से जीवित नही रह सकता, उसकी आर्थिक आवश्यकताओ के साथ–साथ अन्य आवश्यकताये सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, इत्यादि भी महत्वपूर्ण हैं।

इस प्रकार समाज कार्य तथा अर्थशास्त्र एक दूसरे को सुदृढ बनाते हुये अन्योन्याश्रितता के सम्बन्ध की स्थिति मे पाये जाते हैं।

VI समाज कार्य तथा राजनीतिशास्त्र (Social Work and Political Science)

वर्तमान समय मे राजनीति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। आज जब राज्य की हस्तक्षेप न करने की नीति समाप्त हो गयी है तथा राज्य सामाजिक जीवन को प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत जीवन के प्रत्येक पहलू को नियमित एव नियत्रित करने का प्रयास कर रहा है, राजनीति सर्वोपरि है, राजनीति के विविध पहलुओं का अध्ययन राजनीतिशास्त्र द्वारा किया जाता है। गेटिल[16] (Gettle) का मत है, "राजनीतिशास्त्र राज्य का विज्ञान है। यह उन मनुष्यों के समुदायों का अध्ययन करता है जो राजनैतिक इकाइया बनाकर रहते हैं। यह उनकी सरकारो के सगठन तथा इन सरकारों के विधान निर्माण एव विधान प्रशासन तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध सचालन सम्बन्धी क्रियाओ का अध्ययन करता है।"

राजनीतिशास्त्र किसी भी देश के राजतत्र को चलाने के लिये सम्पादित की जाने वाली विविध प्रकार की राजनीतिक क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। इसके अन्तर्गत राज्य का स्वरूप क्या होगा, इसके उद्देश्य क्या होंगे? इन उद्देश्यों की प्राप्ति के साधन क्या होगे? राज्य की सगठनात्मक संरचना क्या होगी? राज्य की क्रियाओं का विनियमन किस प्रकार किया जायेगा? राज्य द्वारा अपेक्षित ससाधन किस प्रकार जुटाये जायेंगे? निर्बल एवं कमजोर वर्गो के हितो का संरक्षण एव सवर्द्धन किस प्रकार किया जायेगा? विभिन्न प्रजातीय एव सांस्कृतिक समूहो के साथ किस प्रकार का बर्ताव होगा? राज्य एव व्यक्ति के बीच किस प्रकार के सम्बन्ध होंगे? राज्यहित तथा व्यक्तिहित मे विरोधाभास अथवा सघर्ष होने की स्थिति मे किसे अधिक महत्त्व प्रदान किया जायेगा? राज्य हित एव जनहित मे क्या सम्बन्ध होगा? इन दोनो मे विरोधाभास अथवा सघर्ष होने की स्थिति में किसे अधिक महत्व प्रदान किया जायेगा? सार्वभौमिक रूप से मानव अधिकारो का

सरक्षण एव सवर्द्धन किस प्रकार किया जायेगा? इन अधिकारो की क्या सीमाए होगी, इत्यादि ऐसे अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न हैं जिनका उत्तर राजनीतिशास्त्र द्वारा प्रदान किया जाता है।

समाज कार्य के अन्तर्गत सेवार्थियो को सहायता एक दी हुई सामाजिक–सास्कृतिक परिस्थिति के सदर्भ मे प्रदान की जाती है जो पायी जाने वाली राजनीतिक व्यवस्था से नियमित एव नियत्रित होती है। राज्य द्वारा निर्धारित की गयी नीतिया, नियम तथा कानून और इसके द्वारा बनायी जाने गयी योजनाये तथा कार्यक्रम न केवल समाज कल्याण सस्थाओ के सगठनात्मक स्वरूप को प्रभावित करते हैं बल्कि इनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओ की प्रकृति तथा स्थिति भी प्रभावित होती है। राजनीतिशास्त्र का ज्ञान समाज कार्य को निम्न क्षेत्रो मे विशिष्ट रूप से सहायता प्रदान करता है

(1) समाज कल्याण से सम्बन्धित लोकनीतिया, नियम तथा कानून क्या हैं? इनके अन्तर्गत समाज के विभिन्न वर्गो, विशेष रूप से निर्बल वर्गो, के हितो के सरक्षण एव सवर्द्धन के लिये क्या प्रावधान किये गये है? इत्यादि।

(2) राज्य द्वारा बनायी गयी विभिन्न प्रकार की आर्थिक एव सामाजिक योजनाये क्या हैं? इन योजनाओ के अतर्गत सामान्य व्यक्तियो, विशेष रूप से निर्बल वर्गो, के हितो के सरक्षण एव सवर्द्धन के लिये क्या व्यवस्था की गयी है? इत्यादि।

(3) लोगो के कल्याण, विशेष रूप से निर्बल वर्गो तथा अल्प सख्यको के हितो की रक्षा के लिये, किस प्रकार की एजेन्सियो का प्रावधान किया गया है। इनकी प्रशासकीय व्यवस्था किस प्रकार की गयी है। इनमे सहयोग एव समन्वय स्थापित करने के लिये क्या प्रावधान किये गये हैं? इत्यादि। कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिये क्या क्या कार्यक्रम बनाये गये हैं? इन कार्यक्रमो से किस प्रकार से लोगो को लाभ हो सकता है? इनसे लाभान्वित होने के लिये निर्धारित की गयी पात्रता की शर्ते क्या हैं? इत्यादि।

(4) लोगो के कल्याण के लिये बनायी गयी योजनाओ तथा कार्यक्रमो और स्थापित की गयी सस्थाओ के उपयुक्त सचालन के लिए अधीक्षण एव नियत्रण सम्बन्धी क्या व्यवस्था की गयी है?, इत्यादि।

जहा एक ओर राजनीतिशास्त्र समाजकार्य को अपनी सहायता प्रदान करने मे सेवार्थी की मनो–सामाजिक समस्या के समाधान के लिये उसकी सम्पूर्ण परिस्थिति के विविध राजनीतिक प्रभावो की जानकारी प्रदान करते हुये उसकी प्रभावपूर्णता को बढाता है, वही समाजकार्य भी इस बात से सम्बन्धित ज्ञान प्रदान करते हुये कि नीतियो, कार्यरीतियो, नियमो तथा कानूनो मे विसगतिया क्या हैं? योजनाओ तथा कार्यक्रमो मे पायी जाने वाली कमिया क्या हैं? स्थापित की गयी कल्याणकारी सस्थाओ की सगठनात्मक सरचना तथा क्रियाविधि मे पायी जाने वाली गडबडिया क्या है? विनियमन एव नियत्रण के लिये स्थापित की गयी व्यवस्था मे क्या दोष है? इत्यादि, राजनीतिशास्त्र को सुदृढ बनाता है।

इस प्रकार समाजकार्य एव राजनीतिशास्त्र अपने ज्ञान की सहायता से एक दूसरे को पारस्परिक रूप से अधिक प्रामाणिक एव उपयोगी बनाते हुये घनिष्ठ अन्तर्सम्बन्ध की स्थिति मे पाये जाते हैं।

VII *समाजकार्य एवं विधि (Social Work and Law)*

जीवन का कोई भी क्षेत्र विधि की परिधि के बाहर नही है। यहा तक कि व्यक्ति का वैयक्तिक जीवन भी विधि की सीमाओ के अन्तर्गत पाया जाता है। विधि उन सभी क्षेत्रो मे हस्तक्षेप करता है जहां अन्य व्यक्तियो के सन्दर्भ मे विधिक अधिकारों का प्रश्न सामने आता है। विधि उन नियमो, प्रथाओ एव कानूनो का द्योतक है जो किसी एक विशेष अन्य व्यक्ति अथवा किसी भी अन्य व्यक्ति के सन्दर्भ में व्यक्ति के अधिकारो की पूर्ति तथा अपेक्षित कर्तव्यो के निर्वाह को सुनिश्चित करते हैं।

विधि किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत हितो, अन्य व्यक्तियो के हितो एव सामान्य सामाजिक हितो के बीच सतुलन बनाये रखने के लिये

समाज द्वारा स्थापित की गयी प्रथाओ तथा राज्य द्वारा बनाये गये नियमो–कानूनो की एक व्यवस्था है ताकि व्यक्ति के किसी एक विशेष अन्य व्यक्ति अथवा सभी अन्य व्यक्तियो के सन्दर्भ मे अधिकारो को सरक्षित किया जा सके और उसे इनके सन्दर्भ मे अपने कर्तव्यो को निभाने के लिये बाध्य किया जा सके।

विधि समाज के निर्बल एव शोषण किये जाने योग्य वर्गों के हितो की रक्षा करने के लिये आवश्यक वैधानिक प्रावधान करता है। उदाहरण के लिये अनुसूचित जातियो अनुसूचित जनजातियो अन्य पिछडे वर्गो महिलाओ बच्चो, युवको, वृद्धो, बाधितो श्रमिको, निराश्रितो इत्यादि के सन्दर्भ मे अनेक प्रकार के विशिष्ट कानून बने हुये हैं। इनके अतिरिक्त समाज कल्याण को नियमित एव नियत्रित करने के लिये सामान्य कानून भी बनाये गये हैं। सविधान जो सभी कानूनो का स्रोत है के अन्तर्गत सामान्य कल्याण के प्रोत्साहन निर्बल एव शोषण किये जाने योग्य वर्गो के हितो के सरक्षण एव सवर्द्धन तथा समाज सेवाओ के आयोजन के सम्बन्ध मे अनेक प्रावधान किये गये हैं। इन वैधानिक एव सवैधानिक प्रावधानो के परिणामस्वरूप समाज कल्याण को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है तथा अनेक प्रकार की सामाजिक कुरीतिया दूर हुई हैं जो समाज कार्य के लिये गम्भीर अभिरुचि के विषय हैं।

समाज कार्य पेक्टिस के दौरान इन नियमो एव कानूनो की अनेक प्रकार की कमिया सामने आती हैं। न केवल इतना सामाजिक जीवन के अनेक ऐसे क्षेत्र सामने आते है जिनमे सामाजिक विधान बनाते हुये वैधानिक रूप से नियत्रण लागू किये जाने की आवश्यकता का अनुभव होता है। इनके परिणामस्वरूप शासन को न केवल नये विधान बनाने के लिये बाध्य होना पडता है बल्कि उसे इनके निर्माण से सम्बन्धित आवश्यक मार्गदर्शन भी प्राप्त होता है।

इस प्रकार जहा एक ओर विधि समाज कार्य को एक ऐसा विधिक आधार प्रदान करता है जिनका प्रयोग करते हुये समाज कार्य अपने सेवार्थियो के हितो की अधिकार के रूप मे रक्षा कर पाने मे

सामर्थ होता है, वहीं दूसरी ओर समाज कार्य ऐसे नवीन क्षेत्रो को उजागर करते हुये जिनमे वैधानिक कमियो को दूर किये जाने अथवा नये विधान बनाये जाने की आवश्यकता होती है तथा आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान करते हुये विधि को और अधिक सुदृढ तथा आवश्यकताओ के अनुरूप बनाते हुये उसकी प्रभावपूर्णता को बढाता है।

VIII *समाज कार्य एवं सांख्यिकी* *(Social Work and Statistics)*

वर्तमान सूचना के युग मे जीवन के विविध क्षेत्रो से सम्बन्धित आकडो को एकत्रित करने तथा इनका वैज्ञानिक विश्लेषण एव विवेचन करते हुये निष्कर्ष निकालने की आवश्यकता का अनुभव प्राय होता है क्योकि इनकी अनुपस्थिति मे प्रभावपूर्ण नीतियो, योजनाओ एव कार्यक्रमो का निर्माण किया जाना सम्भव नहीं होता है। साख्यिकी एक ऐसा विज्ञान है जो हमे इस कार्य मे सहायता प्रदान करता है। सेलिगमैन[17] के मत मे, "साख्यिकी एक ऐसा विज्ञान है जो किसी जाच के क्षेत्र पर कुछ प्रकाश डालने के लिये एकत्रित किये गये सख्यात्मक आकडो को इकट्ठा करने, वर्गीकरण करने, प्रस्तुत करने, तुलना करने तथा निर्वचन करने के ढंगो के साथ कार्य करता है।"

लेविट[18] के अनुसार, "साख्यिकी एक ऐसा विज्ञान है, जो किसी घटना के स्पष्टीकरण, विवरण तथा तुलना के आधार के रूप मे संख्यात्मक तथ्यों के संग्रह, वर्गीकरण तथा सारिणीकरण का कार्य करता है।"

इस प्रकार साख्यिकी एक ऐसा विज्ञान है जो मानव को वास्तविकता के विविध क्षेत्रो से सबधित विविध प्रकार की घटनाओ के अध्ययन के दौरान संख्यात्मक आकडो का एकत्रीकरण, सम्पादन, वर्गीकरण, सारिणीकरण एव विश्लेषण एवं निर्वचन करते हुये सामान्यीकरण करने का प्रयास करता है। इसके अन्तर्गत प्राय अध्ययन के लिये ली गयी घटना से संबंधित इकाइयो का प्रतिदर्शन के आधार पर चयन करते हुये अध्ययन किया जाता है और प्रतिदर्श से प्राप्त परिणामो के

अध्ययन को भी सम्भव वनाते हैं और एक ही श्रृखला के अन्तर्गत भी इसे उपभागो मे विभाजित करते हुये इसके अन्तर्गत पाये जाने वाले प्रसरण का विश्लेषण करते हुये इसके लिये उत्तरदायी विभिन्न कारको को स्पष्ट करने मे सहायता प्रदान करते है।

(6) यह विभिन्न श्रेणियो के वीच पाये जाने वाले सहपरिवर्तन की प्रवृत्ति को समझने मे सहायक सिद्ध होती है।

(7) यह साहचर्य गुणाक की सहायता से अध्ययन की इकाइयो मे पाये जाने वाले गुणों में साहचर्य स्थापित करने में सहायता प्रदान करती है।

(8) यह काई स्क्वायर परीक्षण की सहायता से चरो (Variables) के वीच पाये जाने वाले सम्वन्ध की सार्थकता के अध्ययन को सम्भव वनाती है।

(9) यह समय श्रृखला विश्लेपण का प्रयोग करते हुये एक समय के दौरान विभिन्न विन्दुओ पर एकत्रित किये गये आकडो के विश्लेपण एव विवेचन को सम्भव वनाते हुये निष्कर्ष निकालने मे सहायता प्रदान करती है। अन्तर्वेशन (Interpolation) तथा वाह्यवेशन (Extrapolation) का आश्रय लेते हुये समय श्रृंखला के अन्तर्गत तथा इसके वाहर पाये जाने वाले समय के विन्दुओ पर अध्ययन की जा रही घटना की स्थिति की गणना को सम्भव वनाती है।

(10) समाश्रयण का प्रयोग करते हुये कार्य–कारण सम्वन्ध की मान्यता के आधार पर एक दिये हुये चर के मान की पृष्ठभूमि मे अध्ययन मे सम्मिलित किसी अन्य चर के मान की गणना करने मे सहायक सिद्ध होती है।

(11) यह सूचकांको का प्रयोग करती हुई जीवन निर्वाह सूचकाको तथा अन्य विभिन्न प्रकार के सूचकाकों की गणना को सम्भव वनाती हे।

(12) यह सम्भाविता का सहारा लेती हुई विभिन्न प्रकार की घटनाओ के घटित होने की सम्भाविता की गणना करने मे सहायक सिद्ध होती है।

(13) यह चित्रों तथा रेखाचित्रो की सहायता से आकडो को प्रस्तुत करती हुई इन्हे आकर्षक एव सग्राह्य बनाती है।

इस प्रकार साख्यिकी और समाजकार्य दोनो एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं।

सन्दर्भ

1 Social Sciences may be defined as those mental or cultural sciences which deal with the activities of the individual as a member of a group

Seligman E R A , *What are the Social Sciences?* Encylopaedia of Social Sciences, The Macmillan Co , New York, 1930 Vol I, p 3

2 Sociology is about social relationship the net work of relationship we call society

MacIver, R M and Page, C H , *Society* Macmillan Co New York 1950 (Preface)

3 Sociology is the systematic description and explanation of society viewed as a whole

Giddings, F H , *Principles of Sociology*, The MacMillan Co New York, 1913, p 9

4 Sociology in its broadest sense may be said to be the study of interactions arising from the association of living beings

Gillin, J L and Jillin, J P *Cultural Sociology* The Macmillan Comp, New York, 1954, P 5

5 Sociology is a generalizing science of socio-cultural phenomena viewed in their generic forms, types and manifold inter-connections

Sorokin, P A., *Society Culture and Personality* Harper and Bros Co New York, 1948 p 16

6 Timms, N , *Social Casework - Principles and Practice* Routledge and Kegan Paul Ltd London 1964

7 Meyor H Social Work and Social Welfare Pergamon Press Newyork 1970 p 21

8 Psychology is the study of human nature

Boring E , *Psychology* The Macmillan Co New York 1957 P 27

9 Psychology is the positive science of conduct and behaviour

McDougall W *The Frontiers of Psychology* Nisbet & Co London 1936 P 2

समाज कार्य का इतिहास
(HISTORY OF SOCIAL WORK)

इंग्लैण्ड मे समाज कार्य का इतिहास
(History of Social Work in England)

आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियो की सहायता करने का कार्य मानव समाज की स्थापना से ही होता आ रहा है। आदिकाल से ही धर्म गुरुओ, प्रचारको तथा अनुयायियो ने दीन दुखियो की सहायता करने का उत्तरदायित्व प्रदान किया। 1520 मे जर्मनी मे मार्टिन लूथर ने भिक्षावृत्ति को रोकने तथा सभी पैरिशो मे दीन दुखियो की सहायता हेतु भोजन, वस्त्र इत्यादि प्रदान करने के लिए दानपेटी की स्थापना किये जाने की अपील की। 1525 मे उल्रिच ज्विन्गली(Ulrich Zwingli) ने इसी प्रकार की अपील स्विटजरलैण्ड मे की। 17वीं शताब्दी मे फ्रास मे फादर विन्सेन्ट द पाल (Father Vicent de Paul) ने अनेक प्रकार के सुधार किये। चान्सलर बिस्मार्क (Chancellor Bismark) ने 18वी शताब्दी मे जर्मनी मे अनेक प्रकार के सुधार सबधी कार्यक्रम चलाये। इन सभी सुधारो के परिणामस्वरूप समाज कार्य के विकास के लिए उचित भूमि तैयार हुई।

इंग्लैण्ड मे समाज कार्य के इतिहास को 4 श्रेणियो के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है (i) अविवेकपूर्ण दान का युग, (ii) सुपात्र निर्धनो के लिए सहायता एव शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व्यक्तियो की सहायता का युग, (iii) समन्वय एव नियत्रण का युग, तथा (iv) आय अनुरक्षण का युग।

(i) अविवेकपूर्ण दान का युग 14वीं शताब्दी तक निर्धना, अपगों एव अपाहिजो को भिक्षा देना एक पुण्य का कार्य समझा जाता था। चर्च का प्रमुख कार्य निर्धनों का दान देना तथा उनकी सहायता करना था। निर्धनों की सहायता सम्बन्धी कार्यों का उत्तरदायित्व मुख्य पादरियो, स्थानीय पादरियो और पादरियों के नीचे के तीसरे स्तर क डेकन्स के नाम से सम्बोधित किये जाने वाले अधिकारियो द्वारा किया जाता था। ईसाई धर्म को राज धर्म का स्तर प्राप्त होने क साथ–साथ मठा मे निर्धना के लिए सस्थाये स्थापित की गयीं जो अनाथा, वृद्धा रोगिया और अपगो की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति करती थी तथा बेघरा का शरण देती थीं। इससे भिक्षावृत्ति मे वृद्धि हुई जिस राज्य न अच्छा नहीं समझा। निर्धनों की सहायता क एक ऐतिहासिक उल्लेख के अनुसार 1839 मे इग्लैण्ड तथा वल्स की 1,53,57,000 जनसख्या मे निर्धनों पर किया जाने वाला व्यय 44,06,907 पाउण्ड था। निर्धन सहायता पर इतना अधिक व्यय किये जाने के बावजूद भी इससे कोई लाभ नहीं होता था।

(ii) सुपात्र निर्धनो के लिए सहायता एव शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व्यक्तियों की सहायता का युग 1349 मे किग एडवर्ड III ने यह आदेश दिया कि शारीरिक दृष्टि से हृष्ट–पुष्ट प्रत्येक व्यक्ति कोई न कोई कार्य अवश्य करें तथा वह अपने पैरिश (निवास स्थान) को छोडे बिना किसी भी ऐसे व्यक्ति के यहा काम करें जो उसे काम देना चाहे। यह पहला प्रयास था जिसके अधीन निर्धनता के लिए स्वय निर्धन व्यक्ति को उत्तरदायी ठहराया गया तथा शारीरिक दृष्टि से सक्षम व्यक्तियो को दान एव भिक्षा पर निर्भर रहने के बजाय काम करने के लिए बाध्य किया गया। 1531 मे हेनरी VIII के कानून (Statute of Henry VIII) के अधीन भिखारियो के लिए पजीकरण आवश्यक कर दिया गया तथा उन्हें एक विशेष क्षेत्र के अतर्गत भिक्षा मागने के लिए लाइसेन्स दिये गये। इस कानून के अधीन नगर प्रमुख तथा शान्ति के न्यायाधीशो को यह आदेश दिया गया कि वे कार्य करने मे असमर्थ वृद्धो एवं निर्धनो के प्रार्थना पत्र की जाच करे और उनका

पजीकरण करते हुए उन्हे एक निर्धारित क्षेत्र मे भिक्षा मागने के लिए लाइसेन्स दे। स्वस्थ शरीर वाले भिखारियो को कोडे लगाने तथा उन्हे अपने जन्म स्थान पर जाकर मजदूरी करने की भी व्यवस्था की गयी। हेनरी द्वारा चर्च की सम्पत्ति के जब्त कर लिये जाने के कारण यह आवश्यक हो गया कि निर्धनो की दूसरे तरीको से सहायता की जाये। 1532 मे कारीगरो के कानून (Statute of Artificers) के अधीन मजदूरी और काम करने का समय निश्चित किया गया तथा बेकार घूमने वाले तथा आवारो को कठिन काम करने के लिए बाध्य किया गया। 1536 मे ही पहली बार इग्लैण्ड की सरकार के तत्वावधान मे निर्धनो की सहायता के लिए एक योजना बनायी गयी जिसके अधीन ऐसे निर्धनो के जो 3 वर्ष से काउन्टी मे रह रहे हो, उनकी पैरिसो मे पजीकरण की व्यवस्था की गयी। चर्चो द्वारा पैरिस के निवासियो से एकत्रित किये गये स्वेच्छापूर्ण दान से पैरिसो मे पाये जाने वाले असमर्थ निर्धनो के पालन–पोषण के लिए धन की व्यवस्था से की गयी। हृष्ट–पुष्ट भिक्षुको को काम करने के लिए बाध्य किया गया और 5 से 14 वर्ष की आयु के बीच के निकम्मे बच्चो को उनके माता–पिता से लेकर प्रशिक्षण के लिए मास्टरो को दिया गया। निर्धनो के निरीक्षको को नया कानून लागू करने हेत नियक्त किया।

इसी दौरान [illegible] कानून (Statute of Charitable Uses) बनाया गया जिसके अधीन सभी प्रकार के दानो को एक वर्ग के अन्तर्गत परिभाषित किया गया। इसके अन्तर्गत बन्धको की मुक्ति, अकिंचनो की सहायता, शिक्षा के प्रावधान तथा अनाथो की देखभाल एव प्रशिक्षण जैसे मसलो को सम्मिलित किया गया।

1576 मे सुधारगृह (House of Correction) स्थापित किये गये जिनमे पटसन, पटुआ, लोहा एकत्रित किया जाता था और स्वस्थ शरीर वाले निर्धनो, विशेष रूप से युवको को कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता था। निर्धनो के लिए 1601 मे एलिजाबेथ का निर्धन कानून (Elizabethen Poor Law) बनाया गया जिसे 43

एलिजावेथ" के नाम से जाना जाता था। इस कानून के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित हैं

(1) किसी भी ऐसे व्यक्ति का पजीकरण न किया जाये जिसके सम्बन्धी, पति अथवा पत्नी, पिता अथवा पुत्र सहायता कर सकने की स्थिति मे हो।

(2) निर्धन कानून के अन्तर्गत 3 प्रकार के निर्धनो को सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी।

(क) स्वस्थ शरीर वाले निर्धन

स्वस्थ शरीर वाले निर्धनो एव भिक्षुओ को सुधारगृहो अथवा कार्यगृहो मे काम करने के लिए बाध्य किया गया। नागरिको को इस बात का आदेश दिया गया कि वे स्वस्थ शरीर वाले निर्धनो को भिक्षा न दे। दूसरे गावो से आये हुए निर्धनो को उन्ही स्थानो पर भेजने की व्यवस्था की गयी जहा वे पिछले एक वर्ष से रह रहे थे। ऐसे स्वस्थ शरीर वाले भिक्षुओ अथवा आवारो को जो सुधारगृह मे काम करने से मना करे, जेल मे डाल दिया जाये ओर उनके गले तथा पैरो मे बधन डाल दिये जाये।

(ख) शक्तिहीन निर्धन

कार्य करने मे असमर्थ रोगियो, वृद्धो, अधो, गूगो, बहरो, बच्चों और अल्प आयु के शिशुओ वाली माताओ को इस श्रेणी मे सम्मिलित किया गया। इनके पास अपना निवास स्थान होने की स्थिति मे उन्हे उनके घरो मे ही रखकर निर्धनो के ओवरसियरो द्वारा खाना, कपडा, ईंधन इत्यादि के रूप मे वाह्य सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी। आवास विहीन होने की स्थिति मे उन्हे सुधारगृहो मे रखे जाने की व्यवस्था की गयी।

(ग) आश्रित बच्चे

अनाथ माता–पिता द्वारा परित्यक्त, निर्धन माता–पिता अथवा

पितामह के बच्चो को इस श्रेणी के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया। इन्हे ऐसे नागरिको के पास रखे जाने की व्यवस्था की गयी जो सरकार से उनके पालन–पोषण के लिए कम से कम पैसे की माग करे। 8 वर्ष या इससे अधिक आयु के ऐसे बच्चो को जो कुछ घरेलू अथवा अन्य काम कर सकते थे, किसी नागरिक के साथ बधक करते हुए रख दिया जाता था। ऐसे बच्चे मालिको का घरेलू व्यवसाय सीखते थे और 24 वर्ष की आयु तक मालिको के साथ रहते थे। लडकियो को घर की नौकरानी के रूप मे रखा जाता था और उन्हे 21 वर्ष की आयु अथवा विवाह होने तक मालिको के घर मे रहना पड़ता था।

(3) यदि बच्चे अपने निर्धन माता–पिता या सम्बन्धियो के साथ रह सके तो उन्हे उत्पादन के लिए आवश्यक ऐसी वस्तुए प्रदान की जाये जिनसे वे घरेलू उद्योग चला सके। ऐसा सम्भव न होने की स्थिति मे इन बच्चो को निर्धन गृहो मे रखा जाये।

(4) निर्धनो के ओवरसियरो को इस कानून को लागू करने तथा इसका प्रशासन करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया था। इन ओवरसियरो की नियुक्ति शान्ति न्यायाधीशो या मजिस्ट्रेटो द्वारा की जाती थी। ये ओवरसियर निर्धनो से प्रार्थनापत्र लेते थे, उनकी सामाजिक दशाओ का पता लगाते थे और समुचित सहायता प्रदान करने के सम्बन्ध मे आवश्यक निर्णय लेते थे।

(5) निर्धन सहायता हेतु वित्तीय व्यवस्था करने के लिए निर्धन कर लगाकर एक कोष स्थापित किया गया था जिसमे निजी दान, कानून का उल्लघन करने पर किये गये जुर्माने इत्यादि से प्राप्त धनराशि जमा की जाती थी।

इस प्रकार 1601 का यह निर्धन कानून इग्लैण्ड मे 300 वर्षो तक जन सहायता के क्षेत्र मे अपेक्षित मानदण्ड निर्धारित करते हुए निर्धनो को सहायता प्रदान करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा।

1662 मे एक वस्ती कानून (Law of Settlement) बनाया गया जिसके अधीन शान्ति के न्यायाधीशो (Justice of Peace) को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वे ऐसे किसी भी नवागन्तुक को उसके पुराने निवास स्थान पर वापस भेज सकते थे जो निर्धनो के ओवरसियरो के मत मे भविष्य मे इस समुदाय के लिए एक बोझ बन सकता था।

1696 मे कार्य गृह कानून (Work Houses Act) के बन जाने के बाद ब्रिस्टल तथा अन्य शहरो मे कार्य गृहो की स्थापना की गयी जिनमे वहा निर्धन प्रौढो एव बच्चे को कताई–बुनाई इत्यादि के प्रशिक्षण अवसर प्रदान किये गये।

1722 मे ओवरसियरो को इस बात का अधिकार प्रदान किया गया कि वे ऐसे उत्पादन कर्ताओ के साथ अनुबध करे जो निर्धनो को सेवायोजित करने के लिए तैयार हो।

1782 मे बनाये गये निर्धन कानून सशोधन अधिनियम (Poor Law Amendment Act) जिसे गिलबर्ट कानून के नाम से भी जाना जाता है, के अधीन कार्यगृहो की ठेकेदारी व्यवस्था का उन्मूलन कर दिया गया, अवैतनिक निर्धनो के ओवरसियरो के स्थान पर वेतनिक निर्धनो के सरक्षको (Guardians of Poor) की नियुक्ति की गयी तथा तब तक घर पर ही सहायता प्रदान करने की व्यवस्था की गयी जब तक कि निर्धन सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति को सेवायोजन न प्रदान किया जाये। 1795 मे स्पीन्हमलेण्ड कानून की घोषणा की गयी जिसके अधीन एक सार्वभौमिक कार्य सारिणी (Table of Universal Practice) अथवा आजीविका मापक्रम (Bread Scale) का विकास किया गया ताकि श्रमिको की मजदूरी का पूरण किया जा सके और कम मजदूरी की पूर्ति के लिए श्रमिक के परिवार के आधार को ध्यान मे रखते हुए अपेक्षित सहायता निर्धनो को घर पर ही पहुचायी जा सके।

(iii) समन्वय एव नियत्रण का युग 1832 मे निर्धन कानून के प्रशासन एवं व्यावहारिक कार्यान्वयन की जाच करने के लिए शाही

आयोग की नियुक्ति की गयी। इस आयोग के सचिव एडविन चाडविक थे। इस आयोग ने कहा कि निर्धन सहायता बच्चो एव स्वस्थ शरीर वाले व्यक्तियो मे आवारापन एव भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहित करती है। इस आयोग ने निम्नलिखित संस्तुतिया कीं (1) स्पीन्हमलैण्ड विधि से प्रदान की जाने वाली आंशिक सहायता का उन्मूलन किया जाये, (2) सहायता प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले सभी समर्थ अभ्यर्थियो को कार्यगृहो मे रखा जाये (3) केवल रोगियो वृद्धो अशक्तो एव नवजात शिशुओ वाली विधवाओ को ही बाहरी सहायता प्रदान की जाये (4) विभिन्न पैरिसो के सहायता सम्बन्धी कार्यो को मिलाकर एक निर्धन कानून संघ (Poor Law Union) का संगठन किया जाये, (5) निर्धन सहायता प्राप्त करने वालो के स्तर को समुदाय मे कार्य करने वाले व्यक्तियो के स्तर से नीचे रखा जाये अर्थात् 'कम पात्रता' (Less Eligibility) के सिद्धान्त को लागू करते हुए सहायता पाने वाले व्यक्तियो को कार्य करने वाले व्यक्तियो की स्थिति से नीचे रखा जाये तथा (6) नियन्त्रण स्थापित करने के लिए एक केन्द्रीय परिषद की स्थापना की जाये।

इन संस्तुतियो के आधार पर 1834 मे नया निर्धन कानून बनाया गया जिसके अधीन शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व्यक्तियो को कार्यशालाओ मे रखने, संरक्षक परिषद द्वारा प्रसारित निर्धन कानून संघो का निर्माण करने तथा निर्धन सहायता के क्षेत्र मे एकरूपतापूर्ण नीति का निर्धारण करने हेतु एक स्थायी शाही निर्धन कानून आयोग के बनाये जाने का प्रावधान किया गया। इस नये कानून ने आयोग की सभी संस्तुतियो को लागू करने पर बल दिया। 1869 मे दातव्य सहायता संगठन एव भिक्षावृत्ति दमन समिति (Society for Organizing Charitable Relief and Repressing Mendicity) का लदन मे गठन हुआ जिसका कुछ वर्षो बाद ही नाम बदलकर दातव्य संगठन समिति (Charity Organization Society) कर दिया गया।

(iv) आय अनुरक्षण युग इस युग का विवरण दो उपश्रेणियो के

अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है (क) वेवरिज रिपोर्ट के पहले, तथा (ख) वेवरिज रिपोर्ट एव उसके बाद।

(क) वेवरिज रिपोर्ट के पहले आय सरक्षण

1905 मे लार्ड जार्ज हेमिल्टन की अध्यक्षता मे निर्धन कानून एव दु ख निवारण शाही आयोग (Royal Commission on Poor Laws and Relief of Distress) का गठन किया गया। इस आयोग की सस्तुतियो के अनुसरण मे 1905 मे वेकार कर्मकार अधिनियम पारित किया गया जिसके अधीन स्थानीय कष्ट निवारण समिति (Local Stress Committee) द्वारा वेकारो को सहायता देने का प्रावधान किया गया।

1908 मे वृद्धावस्था पेशन कानून पास हुआ जिसके अधीन 70 वर्ष से अधिक आयु के आवश्यकताग्रस्त निर्धनो को 5 शिलिग प्रति सप्ताह की पेशन दिये जाने की व्यवस्था की गयी। 1909 मे श्रम कार्यालय अधिनियम (Labour Exchanges Act) पारित किया गया।

1911 मे राष्ट्रीय बीमा कानून बना जिसके अधीन निम्न आय समूह के श्रमिको के अनिवार्य स्वास्थ्य बीमे की व्यवस्था की गयी। 1925 मे विधवा, अनाथ एव वृद्धावस्था अशदायी पेशन अधिनियम (Widows, Orphans and Old Age Contributory Pension Act) पारा किया गया जिसके अन्तर्गत 65 वर्ष से अधिक आयु के पुरुषो, 60 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओ, विधवाओ, अनाथो और 14 वर्ष से कम आयु के (यदि स्कूल जा रहे हो तो 16 वर्ष से कम आयु के) आश्रित वच्चो को बीमा योजना के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया जिसकी वित्तीय व्यवस्था मालिको और श्रमिको द्वारा दिये गये अशदानो से की जाती थी। इन अंशदानो का सग्रह अनुमोदित समितियो द्वारा किया जाता था। बीमा की इस योजना के अन्तर्गत लाभ भोगियो को डाकघर के माध्यम से समान दर पर लाभ प्रदान किये जाते थे। दावो के उचित होने का निर्णय स्वास्थ्य मत्रालय की स्थानीय शाखा के कार्यालय द्वारा किया जाता था। अशदान और लाभ दोनो के लिए एक

जसी दर ही रखी गयी थी ताकि विभिन्न श्रेणियो के श्रमिक लाभभोगियो को समान धनराशि का भुगतान किया जा सके। 1925 मे स्थानीय शासन अधिनियम (Local Government Act) पारित किया गया जिसने निर्धन कानून सघो एव सरक्षक परिषदो को समाप्त कर निधन सहायता के प्रशासन का उत्तरदायित्व काउन्टी काउसिलो और शहरो मे बरो कौसिलो (Borough Council) को दे दिया। 1931 मे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था अधिनियम (National Economy Act) बनाया गया जिसके अधीन ऐसे बेकार व्यक्तियो को राज्य कोष से बेकारी सहायता देने की व्यवस्था की गयी जिन्होने बेकारी बीमा के अधीन उपलब्ध सभी लाभ प्राप्त कर लिये हो अथवा जो इन लाभो के लिए पात्र न हो। 1934 मे बेकारी अधिनियम (Unemployment Act) पास किया गया जिसके अधीन बेकारी सहायता के प्रशासन का उत्तरदायित्व बेकारी सहायता बोर्ड को सौपा गया। 1939 मे इस बोर्ड को युद्ध के शिकार व्यक्तियो को भत्तो का भुगतान करने का दायित्व भी प्रदान किया गया और 1940 मे वृद्धावस्था पेशन अधिनियम बना जिसके अधीन वृद्धो को विशेष रूप से चिकित्सकीय उपचार क लिए उनकी आवश्यकता पर आधारित अतिरिक्त पेशनो के भुगतान की व्यवस्था की गयी।

(ख) बेवरिज रिपोर्ट एव उसके बाद

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान जून 1941 मे इग्लैण्ड ने अपने सभी कल्याणकारी कार्यक्रमो मे सुधार करना प्रारम्भ किया और लार्ड विलियम बेवरिज की अध्यक्षता मे एक सामाजिक बीमा एव सम्बन्धित सेवाओ पर अन्तर्विभागीय आयोग (Inter-departmental Commission on Social Insurance and Allied Services) गठित किया। इस आयोग की रिपोर्ट मे 5 कार्यक्रमो पर आधारित सामाजिक सुरक्षा की एक व्यापक योजना प्रस्तुत की गयी। ये कार्यक्रम इस प्रकार हैं (1) सामाजिक बीमा (2) जन सहायता (3) बच्चो के भत्ते (4) व्यापक नि शुल्क स्वास्थ्य एव पुनर्वास सेवाये तथा (5) पूर्ण रोजगार का अनुरक्षण।

वेवरिज रिपोर्ट के आधार पर 1944 मे अपग व्यक्ति कानून(Disabled Persons Act) बना जिसके अधीन वाणिज्य तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानो के लिए यह आवश्यक कर दिया गया कि वे अपगो को रोजगार दे। 1944 मे ही पेशन एव राष्ट्रीय बीमा मत्रालय का गठन किया गया और इसके अधीन एक राष्ट्रीय सहायता परिषद् बनायी गयी जो सहायता प्रदान करने के लिए उत्तरदायी थी। 1945 मे परिवार भत्ता कानून (Family Allowance Act) पास किया गया। 1946 मे राष्ट्रीय बीमा कानून (National Insurance Act) बनाया गया जिसके अधीन स्वास्थ्य अपगता एव वृद्धावस्था बीमा इत्यादि योजनाये बनायी गयी। 1946 मे कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम (Workmen's Compensation Act) बनाया गया। इसी वर्ष राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा कानून (National Health Service Act) बना। 1948 में राष्ट्रीय सहायता बोर्ड बना जिसका उत्तरदायित्व आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियो के लिए जन सहायता का प्रावधान करना था। 1959 मे राष्ट्रीय बीमा कानून मे सशोधन किया गया। समान कर प्रणाली के स्थान पर सेवायोजक तथा कर्मचारी की अवकाश ग्रहण पेशन के अशदान तथा लाभो का एक क्रमिक कार्यक्रम (Graduated Programme) चलाया गया। अक्तूबर, 1966 मे क्रमिक अशदानो एव लाभो के इसी सिद्धान्त को आय से सम्बन्धित पूरको को प्रदान करने के लिए भी लागू किया गया और इसके अधीन बेकारी, बीमारी तथा विधवाओ को समान दर पर प्रदान किये जाने वाले लाभ क्रमिक दर पर दिए जाने लगे। अप्रैल 1976 मे कर्मचारियो द्वारा दिये जाने वाले अशदान को उनकी आय से पूर्णरूपेण सम्बद्ध कर दिया गया और अंशदानो की समान एव क्रमिक दरो को समाप्त कर दिया गया।

1975 मे सामाजिक सुरक्षा लाभ अधिनियम (Social Security Benefit Act) बनाया गया जो इग्लैण्ड के निवासियो को व्यापक सामाजिक सुरक्षा प्रदान करते हुए समाज कल्याण के विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 1986 मे सामाजिक सुरक्षा अधिनियम पारित किया गया था। इसके अधीन सम्पूर्ण व्यवस्था मे व्यापक सुधार किये गये है इनमे राज्य की आय से सम्बन्धित पेशन योजना (State

Earnings Related Pension Scheme) वैयक्तिक एव व्यावसायिक पेशन योजनाओ को प्रोत्साहित करने वाली नवीन व्यवस्थाओ तथा पारिवारिक आय पूरक, पूरक लाभ एव आवास लाभ के स्थान पर आय से सबधित अनेक प्रकार के लाभो का प्रदान किया जाना उल्लेखनीय है। अप्रैल 1987 मे सामाजिक कोष से मातृ एव दाह सस्कार पर होने वाले व्यय हेतु धनराशि दिये जाने का प्रावधान किया गया।

वर्तमान समय मे राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा वैयक्तिक समाज सेवाये तथा सामाजिक सुरक्षा इग्लेण्ड मे पाई जाने वाली समाज कल्याण व्यवस्था के प्रमुख अग है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा के अतर्गत सभी नागरिको को उनकी आय पर ध्यान दिये बिना व्यापक रूप से चिकित्सकीय सेवाये प्रदान की जा रही हैं। स्थानीय प्राधिकरण वैयक्तिक समाजसेवी एव ऐच्छिक सगठन वृद्धो असमर्थो तथा देखभाल की आवश्यकता रखने वाले बच्चो को सहायता एव परामर्श प्रदान करते हैं। सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था वित्तीय आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियो को एक मूलभूत जीवन स्तर का आश्वासन प्रदान करती है और इसके लिए इस व्यवस्था के अधीन रोजी–रोटी कमाने मे असमर्थता की अवधि मे आय प्रदान की जाती है तथा परिवारो को सहायता दी जाती है और असमर्थता के कारण होने वाले अतिरिक्त व्यय का वहन करने के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष रूप से ग्रहण किया जाता है। यह सहायता इसके एजेण्टो के रूप मे कार्य करने वाले स्वास्थ्य प्राधिकरणो एव बोर्डो द्वारा दी जाती है। केन्द्र सरकार सामाजिक सुरक्षा के लिए भी प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी है। स्थानीय प्राधिकरणो द्वारा प्रदान की जाने वाली वैयक्तिक समाज सेवाओ के क्षेत्र मे केन्द्र सरकार अप्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायित्व वहन करती है।

इग्लैण्ड मे समाज कार्य शिक्षा का विकास

इग्लैण्ड मे 1950 तक समाज कार्य शिक्षा का शुभारम्भ कहीं भी

नहीं हो पाया था। समाज कार्य के क्षेत्र में प्रशिक्षित जनशक्ति बहुत कम थी क्योंकि प्रशिक्षण की सुविधायें ही उपलब्ध नहीं थी किन्तु मानसिक स्वास्थ्य चिकित्सकीय समाज कार्य बच्चों की देखरेख परिवीक्षा, इत्यादि विशिष्ट क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए अल्पकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाये जाते थे।

कार्नेजी की पहली रिपोर्ट (1947) जो समाज कार्यकर्ताओं के सेवायोजन एवं प्रशिक्षण से सम्बन्धित थी, के अन्तर्गत इस बात की संस्तुति की गयी कि किसी विश्वविद्यालय के अन्तर्गत स्वतंत्र रूप से चलने वाला समाज कार्य विद्यालय खोला जाय।

संस्तुति के आधार पर एक परिषद का गठन किया गया। 1950 में इस परिषद ने एक और उपसमिति बनायी जिसे एक वर्षीय वैयक्तिक समाज कार्य सम्बन्धी परा प्रमाणपत्र (Post Certificate) के लिए पाठ्यक्रम बनाने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। इस समिति ने इस मान्यता के आधार पर एक सामान्य पाठ्यक्रम बनाया कि विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले सभी समाज कार्यकर्ताओं को एक सी मूलभूत निपुणताओं की आवश्यकता होती है। समाज कार्यकर्ताओं को मानव व्यवहार सम्बन्धी ज्ञान सर्वप्रथम प्रदान किया जाना चाहिए क्योंकि वे चाहे जहां कार्य करें उन्हें एक ही प्रकार के व्यक्ति मिलेंगे।

कार्नेजी ट्रस्ट की दूसरी रिपोर्ट 1951 में प्रकाशित हुई। इसके अंतर्गत इस विद्यालय का नाम बदल कर समाज कार्य विद्यालय के स्थान पर व्यावहारिक समाज अध्ययन संस्थान (Institute of Applied Social Studies) कर दिया गया।

1951 में टाविस्टाक क्लीनिक ने मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में कार्य करने वाले समाज कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए एक वर्ष का प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाने का निर्णय लिया। 1959 तक 24 समाज विज्ञान विभागों में से 6 में व्यावसायिक समाज कार्य शिक्षा प्रदान की जाने लगी थी।

पहला द्विवर्षीय स्नातकोत्तर समाज कार्य शिक्षा का कार्यक्रम 1966 मे यार्क यूनिवर्सिटी मे प्रारम्भ किया गया। ससेक्स विश्वविद्यालय मे 14 महीने के शैक्षिक पाठ्यक्रम को दो वर्ष का बना दिया गया। इसी प्रकार नाटिघम विश्वविद्यालय मे भी दो वर्षीय स्नातकोत्तर समाज कार्य पाठ्यक्रम प्रारम्भ किया गया। 1970 के अत तक समाज कार्य की सम्पूर्ण शिक्षा व्यक्ति, समूह तथा समुदाय को आधार मानकर सामान्य रूप से प्रदान की जाती थी। 1975 मे इग्लैण्ड के 35 विश्वविद्यालयों मे सामाजिक प्रशासन तथा समाज कार्य के विभाग थे।

सयुक्त राज्य अमरीका मे समाज कार्य का इतिहास
(History of Social Work in United States of America)

अमरीका में विभिन्न युगो मे निर्वल एव शोषित वर्गो को प्रदान की जाने वाली सहायता की प्रमुख विशेषताओ के आधार पर अमरीकी समाज कार्य के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को निम्नलिखित श्रेणियों मे वर्गीकृत किया जा सकता है

1 दान काल
2 स्थानीय सहायता काल
3 राज्य सहायता काल
4 अधीक्षण समन्वय एव प्रशिक्षण काल
5 युवको के साथ कार्य का काल
6 आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों के साथ कार्य करने एव रहने का काल
7 सामाजिक सुरक्षा काल
8 निर्धनता उन्मूलन काल

1. दान काल

17वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही इग्लैण्ड से आकर अमरीका मे बसने वाले लोग वहा की प्रथाओ, परम्पराओ एव कानूनो को भी अपने

साथ लाये। वे अपने अतीत के अनुभवो के आधार पर वेकारी, गरीवी तथा कामचोरी से इतना अधिक डरते थे कि वे वेकारी और कामचोरी को एक पाप और अपराध मानते थे, किन्तु हर समाज की तरह अमरीका मे भी ऐसे अनेक वर्ग थे, उदाहरण के लिए, अनाथ वालक, विधवाये, वीमार, निराश्रित बूढे, अशक्त व्यक्ति, इत्यादि जिन्हे सहायता की आवश्यकता थी। इन लोगो की सहायता परम्परागत ढगो का प्रयोग करते हुए की जाती थी। निर्धनो के लिए चिकित्सालय खोले गये। इन चिकित्सालयो मे निर्धनो के शारीरिक एव मानसिक रोगो का उपचार किया जाता था।

2. स्थानीय सहायता काल

उपनिवेशो द्वारा सिद्धान्तत एलिजावेथ के निर्धन कानून को अपना लिया गया और इस प्रकार निर्धनो के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व करवो को सोप दिया गया। न्यूयार्क मे रेने सेलर्सविक मे भिक्षुक गृह (Alms House) 1657 मे स्थापित किया गया तथा प्लाईमाउथ कालोनी द्वारा स्वस्थ शरीर वाले निर्धनो के लिए पहली कार्यशाला के निर्माण का आदेश 1658 मे दिया गया। कालातर मे ऐसे भिक्षुकगृहो एव कार्यशालाओं को कुछ उपनिवेशो के वडे शहरो मे स्थापित किया गया और इस प्रकार अकिंचनो के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व सामान्यतया या तो कस्बों अथवा काउन्टियो द्वारा ग्रहण किया जाता था। मैसोचुसेट्स के विधान मण्डल मे 1699 मे कानून बना जिसके अधीन आवारा, भिखारियो एवं अव्यवस्थित लोंगो को सुधारगृहो मे रखते हुए काम मे लगाने का प्रावधान किया गया।

1823 मे न्यूयार्क मे जे.वी.एन येट्स को निर्धन कानूनो की क्रियाविधि से सम्बन्धित सूचना एकत्रित करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। येट्स द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन मे निर्धनो के दो वर्गो का उल्लेख किया गया -

(1) ऐसे निर्धन जिन्हे स्थायी सहायता की आवश्यकता है, तथा
(2) अस्थायी निर्धन।

येट्स रिपोर्ट मे ये सस्तुतियो की गयी

(1) प्रत्येक काउण्टी मे एक सेवायोजन गृह की स्थापना की जाये जिसके द्वारा बच्चो की शिक्षा और कृषि कार्य के लिए भूमि प्रदान की जाये।

(2) सशक्त निर्धनो तथा आवारो के लिए कार्यगृह उपलब्ध कराया जाये जहा पर जबरदस्ती कठिन काम दिया जाये।

(3) निर्धन कल्याण के लिए धनराशि एकत्रित करने के उद्देश्य से शराब बनाने वाले कारखानो पर उत्पादन कर लगाया जाये।

(4) न्यूयार्क की एक काउण्टी मे एक वर्ष के निवास के आधार पर वैधानिक बन्दोबस्त (Settlement) करने का नियम बनाया जाये।

(5) निष्कासन आदेशो तथा निर्धन कानूनो से सम्बन्धित मुकदमों मे दिये गये फैसलो के विरुद्ध अपील करने की व्यवस्था समाप्त की जाये।

(6) 18 से 50 वर्ष के बीच की आयु तथा स्वस्थ शरीर वाले किसी भी व्यक्ति को अकिचन की श्रेणी मे न रखा जाये।

(7) गलियो मे भीख मागने वाले व्यक्तियो तथा राज्य के अन्दर अकिचनो को लाने वाले लोगो को दण्ड दिया जाये।

येट्स रिपोर्ट का अनुसरण करते हुए मैसाचुसेट्स, न्यूयार्क तथा अन्य कई राज्यो मे अनाथालयो एव कार्यगृहो की स्थापना की गयी। इस रिपोर्ट के तुरन्त बाद 1824 मे न्यूयार्क ने काउण्टी निर्धन गृह कानून बनाया। इसके द्वारा अनाथालयो के प्रबन्ध का कार्य कस्बो से लेकर काउन्टियो को दे दिया गया।

3. राज्य सहायता काल

सर्वप्रथम 1675 मे मैसाचुसेट्स राज्य ने भिखारियो के आवश्यक

व्ययो के भुगतान का उत्तरदायित्व ग्रहण किया। इस उत्तरदायित्व के अधीन ऐसे व्यक्तियो को सहायता प्रदान की जाती थी जो थोडे समय पूर्व ही इस राज्य मे आये हुए होते थे अथवा जिन्हे बाहर जाने की चेतावनी दी गयी होती थी। बाद मे अन्य राज्यो ने भी इस उत्तरदायित्व को ग्रहण किया। कालान्तर मे राज्यों ने ऐसी सस्थाओ को वित्तीय सहायता देना बद कर दिया जो बाधितो की सहायता करती थी क्योकि इनकी सख्या अत्यधिक बढ गयी थी। मानसिक रूप से बीमारो की चिकित्सकीय देखभाल की व्यवस्था सर्वप्रथम फिलाडेल्फिया के भिक्षागृह मे 1732 मे की गयी। तदुपरान्त 1753 मे पेन्सिलवैनिया के एक चिकित्सालय मे भी यह सुविधा उपलब्ध करायी गयी। वर्जीनिया की विलियम्सबर्ग पूर्वी राज्य ईस्टर्न स्टेट हास्पिटल ऐसी पहली सस्था थी जिसकी स्थापना 1773 मे मानसिक रूप से असामान्य व्यक्तियो के लिए की गयी थी। बहरो के लिए पहला सरकारी आवासीय स्कूल 1823 मे केन्टकी मे डैनविले मे खोला गया। 1824 मे लेक्सिगटन मे ईस्टर्न ल्यूनेटिक असाइलम की स्थापना की गयी। मैसाचुसेट्स के असाइलम फार द ब्लाइण्ड (जिसे बाद मे परकिन्स इन्स्टीट्यूट तथा मैसाचुसेट्स स्कूल फार द ब्लाइण्ड के नाम से जाना गया) तथा1832 में न्यूयार्क इन्स्टीट्यूशन फार द ब्लाइण्ड(जिसे बाद मे इन्स्टीट्यूशन फार द एजूकेशन आफ ब्लाइण्ड के नाम से जाना गया) तथा 1833 मे फिलाडेल्फिया मे अन्धो के लिए एक अन्य सस्था के खोले जाने से प्रेरित होकर ओहियो ने सर्वप्रथम 1837 मे एक ऐसी जनसस्था की स्थापना की जिसकी सम्पूर्ण वित्तीय व्यवस्था राज्य द्वारा की गयी। इण्डियाना ऐसा पहला राज्य था जिसने अकिचन अंधो के भरण–पोषण के लिए 1840 मे एक विशेष कानून बनाया। बाद मे इसी प्रकार के कानून अन्य राज्यो द्वारा भी बनाये गये। मूर्खो एव मदबुद्धि के युवको के लिए राज्य द्वारा सचालित स्कूल की सर्वप्रथम स्थापना मैसाचुसेट्स के साउथ बुस्टन मे 1848 मे की गयी। 1851 मे न्यूयार्क मे मदबुद्धि बच्चो के लिए राज्य द्वारा एक विद्यालय की स्थापना की गयी। 1854 मे पैन्सिलवैनिया राज्य द्वारा जर्मन टाउन मे चल रहे मूर्खो के लिए एक निजी स्कूल को

सहायता प्रदान की गयी। 1860 मे कैलीफोर्निया मे बहरा के साथ अधो के लिए पहले मिश्रित स्कूल की स्थापना की गयी। 1876 मे न्यायालयों द्वारा अपराधो के लिए दोषी ठहराये गये नवयुवको का सुधारगृह न्यूयार्क के अल्मीरा मे स्थापित किया गया तथा महिलाओ की पहली जेल की स्थापना मैसाचुसेट्स के शेरबोर्न मे 1879 मे की गयी।

(4) अधीक्षण, समन्वय एवं प्रशिक्षण काल

मैसाचुसेट्स ने 1863 मे राज्य द्वारा सचालित सभी दान सस्थाओ के अधीक्षण के लिए स्टेट बोर्ड ऑफ चैरिटीज की स्थापना की। दूसरे राज्यो ने भी ऐसा ही किया। अधीक्षण एव नियत्रण सम्बन्धी उत्तरदायित्व 1925 मे लोककल्याण विभाग (Department of Public Welfare) को सौंपे गये। इस विभाग का नाम 1927 मे बदल कर राज्य कल्याण विभाग (State Department of Welfare) रखा गया।

1870 और 1873 की मदियो के परिणामस्वरूप तत्कालीन सहायता व्यवस्था की अनेक कमिया उजागर हुई। 1870 मे बफैलो के रेवरेण्ड एस.एच. गुर्टीन नाम के पादरी ने न्यूयार्क मे बफैलो चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी की स्थापना की। इस समिति की मान्यता यह थी कि निर्धन जन सहायता लाभ भोगी के लिए हानिकारक है। 1908 मे पिट्सबर्ग मे एक काउन्सिल ऑफ सोशल एजेन्सीज स्थापित की गयी जिसका कार्य समाज कल्याण के क्षेत्र मे नियोजन एव समन्वय स्थापित करना था और इसीलिए इसका नाम काउन्सिल ऑफ सोशल एजेन्सीज पडा। किन्तु इन काउन्सिलो के लिए धन की व्यवस्था करने में अनेक प्रकार की कठिनाइया आयी। इसीलिए 1913 मे क्लीवलैण्ड मे निजी क्षेत्र के दान सम्बन्धी सभी कार्यो की सयुक्त वित्तीय व्यवस्था करने की आवश्यकता को स्वीकार किया गया। इसके परिणामस्वरूप सामुदायिक तिजूरी (Community Chest) की विचारधारा सामने आयी। इन सामुदायिक चेस्टो का कार्य लोगो से अशदान लेते हुए एक कोष एकत्रित करने के पश्चात इसे समाज कल्याण के क्षेत्र मे कार्यरत सस्थाओ को वितरित करना था।

5. युवको के साथ कार्य का काल

इग्लैण्ड मे 1844 मे जार्ज विलियम्स द्वारा स्थापित किये गये यग मेन्स क्रिश्चियन एसोशियेशन की सफलता से प्रभावित होकर कैप्टन जे.वी. सलीवान ने अमरीका मे 1851 मे बूस्टन मे पहली अमरीकी यगमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन की स्थापना की जिसका कार्य अमरीकी युवको की अनेक प्रकार की आवश्यकताओ की पूर्ति करना था। इसी प्रकार अमरीका मे 1886 मे ल्यूक्रीशिया ब्वायड पहली यग वीमेन्स क्रिश्चियन एसोसिएशन की स्थापना बूस्टन मे द्वारा की गयी। 1910 मे अमेरिकन ब्वाग स्काउट्स का गठन किया गया। कैम्प फायर गर्ल्स की स्थापना 1911 मे की गयी। 1912 मे गर्ल्स गाइड को स्थापित किया गया।

6. आवश्यकताग्रस्त लोगो के साथ काम करने एवं रहने का काल

प्रारम्भिक काल मे अमरीका पहुचने वाले अप्रवासियो की स्थिति अत्यन्त सोचनीय थी। ये अप्रवासी विभिन्न वशो एव पृष्ठभूमियो के थे और विभिन्न प्रकार की भाषाये बोलते थे। इनमे पारस्परिक मेलजोल नगण्य था। लदन मे निवासियो मे पडोस की भावना स्थापित करने के उद्देश्य से कैनन सेम्युअल वार्नेट द्वारा स्थापित टवायनवी हाल के अनुभवो से प्रेरित होकर चार्ल्स वी स्टोवर ने नेबरहुड गिल्ड ऑफ न्यूयार्क सिटी की 1887 मे स्थापना की। इसे वर्तमान समय मे यूनिवर्सिटी सेटिलमेंट हाउस के नाम से जाना जाता है। बाद मे मिस जेन ऐडम्स ने शिकागो मे 1889 मे हाल्स्टेड स्ट्रीट में एक हल हाउस की स्थापना की। इसकी सफलता के परिणामस्वरूप न्यूयार्क मे कालेज सटिलमेट फॉर वीमेन, बूस्टन मे ऐण्डोवर हाउस (जिसे बाद मे साउथ यण्ड हाउस का नाम दे दिया गया) शिकागो मे शिकागो वीमेन्स, न्यूयार्क मे हेन्री स्ट्रीट सेटिलमेट तथा कोआपरेटिव सोशल सेटिलमेट (जिसे बाद मे ग्रीनविच हाउस के नाम से सम्बोधित किया गया), शिकागो मे द यूनिवर्सिटी शिकागो सेटिलमेट न्यूयार्क मे गेलार्ड व्हाइट यूनियन सेटिलमेट्र क्लीवलैण्ड मे गुडरिच हाउस, पिट्सबर्ग मे

आईरीन कॉफमैन सेटिलमेंट, सैन्फ्रान्सिस्को मे टेलीग्राफ हिल नेबरहुड हाउस तथा इण्डियानापॉलिस में प्लेनर हाउस की स्थापना हुई।

7. सामाजिक सुरक्षा काल

अमरीकी सविधान में समाज कल्याण के लिए कोई स्थान नहीं था। महान मदी की स्थिति मे बहुत बडी सख्या में बेकार व्यक्ति निजी कल्याण सस्थाओ से सहायता की अपेक्षा करने लगे। स्थानीय स्तर पर निजी क्षमता मे कार्य करने वाले दातव्य सगठनो ने इन बेकारों की सहायता करने का प्रयास किया किन्तु समस्या इतनी गम्भीर थी कि इन सस्थाओ के सभी वित्तीय ससाधन समाप्त हो गये। इन परिस्थितियो मे अमरीकी काग्रेस ने 1932 मे आपात्कालीन सहायता एव निर्माण अधिनियम (Emergency Relief and Construction Act) को पारित किया। इस अधिनियम के अधीन पुनर्निर्माण वित्त निगम (Reconstruction Finance Corporation) को राज्यो, काउन्टियो और शहरो को सहायता कार्य तथा जन कार्य सहायता परियोजनाओ को ऋण देने का अधिकार प्रदान किया गया।

1933 में सघीय आपात्कालीन सहायता अधिनियम (Federal Emergency Relief Act) पारित किया गया। इस अधिनियम के अधीन अल्प अवधि वाली ऋण की व्यवस्था को समाप्त कर इसके स्थान पर समाज कल्याण हेतु सघीय उत्तरदायित्व वाली व्यवस्था का निर्माण किया गया। हैरी एल हॉप्किन्स की अध्यक्षता मे संघीय आपातकालीन सहायता प्रशासन (Federal Emergency Relief Administration) की स्थापना की गयी।

सघीय आपात्कालीन सहायता अधिनियम के अन्तर्गत इस बात का स्पष्ट रूप से प्रावधान था कि सभी आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियो को उनकी न्यूनतम भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति को सुनिश्चित करने तथा उनकी यातनाओ को रोकने के लिए समुचित सहायता प्रदान की जानी चाहिए। राज्यो तथा स्थानीय समुदायो को वित्तीय सहायता

प्रदान करने के लिए इस बात को अनिवार्य बना दिया गया कि वे कार्यक्रमों का अधीक्षण करने हेतु प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की नियुक्ति करें। एजेन्सियों में कार्य करने वाले कर्मचारियों के सेवाकालीन प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की गयी।

राबर्ट फेचनर के निर्देशन में मार्च, 1933 में आपातकालीन संरक्षण कार्यक्रम जिसे नागरिक संरक्षण कोर (Civil Conservation Copse) के नाम से जाना जाता है, प्रारम्भ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य युवकों को राष्ट्रीय संसाधनों के संरक्षण के कार्य मे सम्मिलित करते हुए उन्हें अस्थायी सेवायोजन प्रदान करना तथा स्वस्थ वातावरण, समुचित भोजन, शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था करना था।

जनवरी 1935 में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने यह घोषणा की कि संघ रोजगार दिये जाने योग्य बेकारो के लिए एक कार्य .हायता सबंधी कार्यक्रम का उत्तरदायित्व ग्रहण करे और इसके परिणामस्वरूप मई 1935 मे कार्य प्रगति प्रशासन (Work Progress Administration) की स्थापना की गयी। इस प्रशासन ने केन्द्रीकृत संघीय नियंत्रण के अधीन कार्यक्रम को प्रतिस्थापित किया। आपातकालीन सहायता विनियोग अधिनियम (Emergency Relief Appropriations Act) 1935 मे पारित किया गया जिसके अधीन कार्य प्रगति प्रशासन (Work Progress Administration) हेतु आवश्यक कोष उपलब्ध कराये गये। 1939 में इस संगठन का नाम बदल कर कार्य परियोजना प्रशासन (Work Project Administration) कर दिया गया।

8. निर्धनता उन्मूलन काल

1961 के बाद प्रारम्भ होने वाले इस काल की प्रमुख विशेषता निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रम हैं। अमरीका के समाज वैज्ञानिको द्वारा इस बात को उजागर किये जाने के कारण कि अमरीकी समाज में भी निर्धनता है, इस समस्या की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ

और 1960 के पश्चात संघीय सरकार निर्धनता उन्मूलन कार्यक्रमो को चलाने के क्षेत्र मे आगे आयी। निर्धनता को दूर करने की दृष्टि से समय–समय पर कानून बनाये गये। 1961 मे क्षेत्र विकास अधिनियम 1962 मे जनशक्ति विकास एव प्रशिक्षण अधिनियम तथा 1964 मे आर्थिक अवसर अधिनियम पारित किये गये। आर्थिक अवसर अधिनियम निर्धनता उन्मूलन की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और इसके अधीन युवा कार्यक्रम, नगरीय एव ग्रामीण सामुदायिक क्रिया कार्यक्रम, ग्रामीण क्षेत्रो मे निर्धनता उन्मूलन के विशिष्ट कार्यक्रम, सेवायोजन एव निवेशो के लिए प्रलोभन कार्यक्रम तथा कार्य अनुभव सबधी कार्यक्रम चलाये गय।

निर्धनता उन्मूलन के विभिन्न कार्यक्रमो के साथ–साथ काली प्रजाति के लोगो को भी विशेष सरक्षण प्रदान किया जा रहा है। धनात्मक समर्थन (Positive Affirmation) का कार्यक्रम चलाते हुए काली प्रजाति के लोगो को कुछ निर्धारित नियमो के अनुसार सेवायोजन मे प्राथमिकता प्रदान की जाती है।

भारत मे समाज कार्य का इतिहास
(History of Social Work in India)

मजूमदार,[1] मेहता,[2] गोरे,[3] राजाराम शास्त्री,[4] इत्यादि अनेक विद्वानो ने भारत मे समाज कार्य के ऐतिहासिक विकास का वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। 19वी शताब्दी मे, विशेष रूप से राजाराम मोहन राय के समय मे, भारतीय साहित्य मे समाज सुधार तथा बाद मे समाज कार्य का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त मुस्लिम तथा मराठा काल के साहित्य मे भी कहीं–कहीं समाज कल्याण सम्बन्धी उल्लेख प्राप्त होते हैं। विभिन्न प्राचीनकालीन ग्रथो का अध्ययन करने पर तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था मे समाज कल्याण सम्बन्धी कार्यों की स्पष्ट झलक मिलती है और इसीलिए यह कहा जाता है कि भारतीय समाज मे समाज कार्य की जडे बहुत ही पुरानी हैं।[5a]

भारत मे समाज कल्याण के विकास का वर्णन निम्नलिखित श्रेणियो मे प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है :

1 सामुदायिक जीवन काल
2 दान काल ([illegible])
3 धार्मिक सुधार काल
4 व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं सगठन काल

1. सामुदायिक जीवन काल

सिंधु घाटी की सभ्यता के मोहनजोदडो तथा हडप्पा मे प्राप्त अवशेषो से यह पता चलता है कि इस अवधि मे नगरीकरण उच्चतम सीमा पर था किन्तु दास प्रथा किसी न किसी रूप मे विद्यमान थी और इन दासो की आवश्यकताओ की पूर्ति और उनके कल्याण के लिए भी व्यवस्था की जाती थी।

वैदिक काल में तीन प्रकार के सामाजिक कार्य स्पष्ट रूप से सम्पादित किये जाते थे। ये कार्य शासन, सुरक्षा तथा व्यापार से सम्बन्धित थे। इन कार्यों को सम्पादित करने वाले तीन वर्ग विद्यमान थे। इस युग मे यज्ञ, हवन एवं दान का प्रचलन था। समाज के सभी सदस्य उत्पादन संबंधी कार्यो मे भाग लेते थे और उनके सामूहिक श्रम के फलो को सभी सदस्यों मे वितरित किया जाता था। यज्ञ जीवन तथा उत्पत्ति को बनाये रखने के लिए समुदाय की क्रियाओ का सकलन था। हवन सामूहिक प्रयासो के परिणामस्वरूप दिन–प्रतिदिन होने वाले लाभो का व्यक्तिगत सदस्यो मे वितरण था। दान प्रसन्नता के अवसरो पर समुदाय के सदस्यो मे युद्ध से प्राप्त वस्तुओ का वितरण था। इस व्यवस्था में समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करने का उत्तरदायित्व अन्य प्रत्येक व्यक्ति पर था।

वैदिक काल में विशेष प्रकार की सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियो का उत्तरदायित्व शासको, धनी व्यक्तियो तथा सामान्य

समुदाय के साधारण सदस्यो द्वारा आपस मे बाट लिया जाता था। सभी लोग अपने साधनों के अनुसार अपने कार्य का पालन करने मे एक दूसरे से आगे बढ़ने का प्रयास करते थे। ये कार्य मंदिरो एव आश्रमो की स्थापना, उन्हे सुचारु रूप से चलाने के लिए किये गए सम्पत्ति के समर्पण, सन्तो एव महात्माओ के लिए मठो के निर्माण, घुमक्कड योगियो तथा मदिरो एव आश्रमों मे रहने वालो के लिए भोजन, इत्यादि की आपूर्ति के रूप में किया जाता था।

बौद्ध काल मे भी लोगो के कल्याण के लिए भगवान बुद्ध ने सडके बनवायीं, ऊबड–खाबड मार्गो को बराबर करवाया, बाध बनवाये, पुलो का निर्माण कराया तथा तालाब खुदवाये और समाज में पायी जाने वाली परम्परावादी अनेक प्रकार की कुरीतियों का विरोध किया।

2. दान काल

धार्मिक प्रेरणा से समाज सेवाये प्रारम्भ हुई। अनेक प्रकार के सार्वजनिक कल्याणकारी कार्य सम्पादित किये जाने लगे। उदाहरण के लिए, नहरें, तालाब तथा कुए खुदवाना, पेड लगवाना, मंदिर बनवाना, धर्मशाला तथा आश्रम बनवाना, विद्यालय तथा चिकित्सालय स्थापित करना, इत्यादि, इन सभी कल्याणकारी कार्यो का उद्देश्य आवागमन से मुक्ति दिलाने वाले मोक्ष तथा सामाजिक स्वीकृति को प्राप्त करना था। अनेक प्रकार की धार्मिक सस्थाओं ने भी सार्वजनिक कल्याण सम्बन्धी कार्य प्रारम्भ किये। अनेक धनवानों ने अपनी सम्पत्ति धार्मिक सस्थाओं को सौंप दी या ट्रस्ट बना दिये जिनके माध्यम से अनेक प्रकार के कल्याणकारी कार्यक्रम आयोजित किये जाने लगे।

मुसलमानो के भारत में आने के बाद उनके द्वारा भारतीय सामाजिक व्यवस्था को इस्लाम के सिद्धातो के अनुसार चलाने का प्रयास किया गया। इस्लाम की "जकात" एव "खैरात" की अवधारणाओ को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हुई। भारतीय मुसलमान अपनी आय का 25 प्रतिशत अनिवार्य रूप से निर्धनों एव आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियो

को प्रदान करते रहे हैं। इसी प्रकार से वे स्वैच्छिक रूप से अकिंचनो एवं निराश्रितों को खैरात के रूप में भिक्षा प्रदान करते रहे हैं। अनेक मुसलमान शासकों ने आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियों के लिए समय–समय पर अनेक प्रकार की समाज सेवाओ का प्रावधान किया। उदाहरण के लिए, रोगियो के उपचार के लिए चिकित्सालय, बच्चों की शिक्षा के लिए शिक्षा संस्थायें, यात्रियो के लिए बारादरियां एवं मुसाफिरखाने, इत्यादि। मस्जिद से सम्बद्ध मदरसो के रूप मे कार्य करने वाली शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करना मुसलमान समुदाय मे अत्यधिक प्रचलित रहा है। इसके अतिरिक्त बूढों, बीमारों और अपगों की सहायता संयुक्त परिवार करते रहे हैं।

अकबर के शासनकाल मे अनेक प्रकार के समाज सुधार किये गये। अकबर ने दीन इलाही चलाया। उसने अपने राज्य को एक धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया। दास प्रथा को समाप्त किया और यात्री कर तथा जजिया कर लगाया ताकि कल्याण सबंधी कार्य सम्पादित किये जा सके। अकबर ने सती प्रथा के सम्बन्ध में भी यह आदेश दिया कि यदि कोई विधवा सती न होना चाहे तो उसे ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा। उसने द्विपत्नी विवाह पर रोक लगायी तथा विवाह के आयु की सीमा को बढाया।

3. धार्मिक सुधार काल

1780 में बगाल मे सेरामपुर मिशन की स्थापना की गयी और धार्मिक प्रचारकों ने भारतीय जनता मे यह प्रचार करना आरम्भ किया कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के विविध क्षेत्रो में, विशेष रूप से बाल विवाह, बहुविवाह, बालिकाओ की हत्या, सती प्रथा, विधवा विवाह सम्बन्धी निषेधों जैसे क्षेत्रो में सुधार किये जाने की आवश्यकता है।

चार्टर ऐक्ट, 1813 के अतर्गत शिक्षा के विकास का प्रावधान किया गया तथा ईसाई मिशनरियो द्वारा किये जाने वाले कार्य को स्वीकृति प्रदान की गयी। ईसाई मिशनरियो द्वारा पाश्चात्य शिक्षा के

प्रसार पर बल दिया गया। अच्छी सेवाओ तथा ईसाई धर्म के बढते हुए प्रभाव के कारण भारतीयो की मनोवृत्ति में अनेक प्रकार की सामाजिक बुराइयो यथा सती प्रथा, विधवा, पुनर्विवाह पर निषेध, इत्यादि की ओर ध्यान आकर्षित हुआ। यद्यपि सेरामपुर के मिशनरियो ने सती प्रथा के विरुद्ध कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था फिर भी राजा राम मोहन राय पहले भारतीय थे जिन्होंने इस दिशा मे आन्दोलन चलाया। राजा राम मोहन राय ने जातीय विभेदो एव सती प्रथा को समाप्त करने की सलाह दी। एक धार्मिक प्रचारक, शिक्षा शास्त्री एव समाज कार्यकर्ता के रूप में उन्होने भारतीय सामाजिक व्यवस्था को अत्यधिक प्रभावित किया। सती प्रथा के विरोध मे उनका पहला लेख 1818 में प्रकाशित हुआ। उनके प्रयासो का ही परिणाम था कि 1829 में लार्ड विलियम बैटिंग द्वारा विनियमन अधिनियम (Regulatory Act) पारित करते हुए सती प्रथा को अवैध घोषित कर दिया गया। 1815 में राजा राम मोहन राय ने भारतीय समाज की स्थापना की जो बाद में 1828 में ब्रह्म समाज के रूप में हमारे सामने आया। ब्रह्म समाज द्वारा अकाल के शिकार लोगो के कल्याण, बालिकाओं की शिक्षा, विधवाओं की स्थिति में सुधार, जाति बधनो के उन्मूलन तथा दान एवं संयम को प्रोत्साहित करने के क्षेत्र में अनेक प्रकार के कार्य किये गये। राजा राम मोहन राय के अनुयायियो के रूप में द्वारिकानाथ टैगोर, देवेन्द्र नाथ टैगोर तथा केशव चन्द्र सेन ने ब्रह्म समाज की गतिविधियो को तीव्रगति से चलाया।

1894 मे हिन्दू बालिकाओ के लिए पहली शिक्षा सस्था स्थापित की गयी। 1893 मे केशव चन्द्र सेन ने महिलाओ की शिक्षा के कार्य को और आगे बढाया। ईश्वरचन्द विद्यासागर पहले व्यक्ति थे जिन्होने यह सिद्ध करते हुए कि विधवा पुनर्विवाह हिन्दू धर्म ग्रन्थो मे दिये गये निर्देशो के विरुद्ध नहीं है, इसके विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया और इन्हीं के अनवरत प्रयासो का, विशेष रूप से 1855 मे सरकार से की गयी अपील, का परिणाम था कि कट्टरपथी हिन्दुओं के कठोर विरोध के बावजूद 1856 मे हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित हुआ।

न्यायाधीश रानाडे ने विधवा पुनर्विवाह के लिए घनीभूत प्रयास किये और 1861 मे विधवा विवाह समिति (Widows' Marriage Association) की स्थापना की। उन्होने 1870 मे सार्वजनिक सभा की स्थापना मे भी सहायता प्रदान की। शशीपदा बनर्जी ने भी महिलाओ की शिक्षा एवं विधवा पुनर्विवाह को प्रोत्साहित करते हुए उनकी स्थिति मे सुधार लाने का प्रयास किया। वे ऐसे व्यक्ति थे जिनकी कथनी एव करनी में कोई अन्तर नही था। पत्नी की मृत्यु के बाद उन्होने एक विधवा से विवाह किया। उन्होने दलित वर्ग के उत्थान के लिए उस समय प्रयास किए जबकि यह बात लोगो के मस्तिष्क मे भी नहीं थी।

1872 में विवाह अधिनियम पारित किया गया जिसके अधीन पुनर्विवाह तथा अन्तर्जातीय एवं अन्तर्साम्प्रदायिक विवाहो का प्रावधान किया गया तथा एक विवाह और वयस्कता की प्राप्ति होने पर ही विवाह किये जाने पर बल दिया गया। इस अधिनियम का उद्देश्य विभिन्न जातियों एवं सम्प्रदायो के धार्मिक अनुष्ठानों एवं रीति रिवाजो का पालन किये बिना किये गये विवाहों को वैध करार देना था।

1875 मे मूलशकर (स्वामी दयानन्द सरस्वती) द्वारा बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की गयी।

1875 मे सर सैयद अहमद खां ने जिनका अंग्रेजी शिक्षा में गहरा विश्वास था, अलीगढ मे ऐंग्लो मोहम्मडन कालेज की स्थापना की जो अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय के रूप मे आज भी विद्यमान है। उन्होने अपने विचारो को जनता तक पहुचाने के लिए मोहम्मडन सोशल रिफार्मर नाम का एक पत्र भी निकाला। उन्होंने 1888 में मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन का प्रारम्भ किया।

1882 मे पाण्डिया रमाबाई जो भारत की एक ईसाई मिशनरी थी, ने महिलाओ की स्थिति मे सुधार करने के लिए आर्य महिला समाज की स्थापना की।

1881 मे मैडम ब्लावात्स्की तथा कर्नल ऑल्कट ने मद्रास में

थियासाफिकल सोशायटी की स्थापना की। यह संस्था 1893 तक समाज सुधार एव समाज सेवा के क्षेत्र मे तब तक कोई विशेष कार्य नहीं कर सकी जब तक कि श्रीमती ऐनी बेसेण्ट ने सक्रिय रूप से हिन्दू धर्म सिद्धान्तो को उजागर करना तथा अनुष्ठानो एव सस्कारो के पक्ष मे तर्क प्रस्तुत करना नहीं प्रारम्भ किया। श्रीमती ऐनी बेसेन्ट ने बनारस मे एक सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की स्थापना भी की।

स्वामी रामकृष्ण परमहस के अनन्य भक्त स्वामी विवेकानन्द ने 1897 मे रामकृष्ण मिशन की स्थापना की जो अनेक प्रकार की सेवाये आज भी प्रदान कर रहा है। यह मिशन "आवश्यकताग्रस्त व्यक्तियो की सेवा" के सिद्धान्त का आज भी अनुसरण कर रहा है।

धर्मनिरपेक्ष सुधार काल

ईसाई मिशनरियो ने निर्धनता की स्थिति का लाभ उठाकर निर्धनो के कल्याण के लिए सस्थाये खोलीं जिनका प्रमुख उद्देश्य सहायता प्रदान करना न होकर धर्म परिवर्तन करना था। बम्बई मे 1830 के बाद ही एल्फिस्टन इन्स्टीट्यूट के अध्यापको ने ऐच्छिक प्रयासो के माध्यम से शिक्षा का प्रसार करने का कार्य प्रारम्भ कर दिया था। बाल गगाधर शास्त्री जम्भेकर जो एल्फिस्टन इन्स्टीट्यूट से निकलने वाले पहले विद्यार्थी थे, के नेतृत्व मे महिलाओ के लिए कक्षायें प्रारम्भ की गयीं। कट्टर हिन्दुओ को इस बात के लिए प्रेरित करना प्रारम्भ किया गया कि वे धर्म परिवर्तन किये हुए हिन्दुओ को हिन्दू धर्म मे पुन वापस ले तथा विवाह से सम्बन्धित अनुष्ठानो एव सस्कारो को सरल बनाये।

1867 मे प्रार्थना सभा की स्थापना हुई। मार्के भण्डारकर, चिन्तामणि चन्द्रावर्कर, नरेन्द्र नाथ सेन, इत्यादि व्यक्तियो ने समाज सुधार के क्षेत्र मे सक्रिय रूप से कार्य करना प्रारम्भ किया। 1880 मे ऐलेन ऑक्टेवियन ह्यूम ने सम्पूर्ण देश मे लोगो को समाज सेवाये प्रदान करने के कार्य में लगे हुए समाज सेवियो द्वारा अनुभव की जा रही विभिन्न प्रकार की समस्याओं के विश्लेषण के लिए एक अखिल भारतीय सगठन का

निर्माण करने की आवश्यकता का अनुभव किया किन्तु लार्ड डफरिन के सुझाव पर ह्यूम इस संगठन की गतिविधियों में राजनीति को सम्मिलित करने के लिए भी तैयार हो गये और परिणामतः एक सामाजिक राजनीतिक संगठन के रूप में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। किन्तु राजनीतिक मुद्‌दों के सर्वोपरि हो जाने के कारण सामाजिक मुद्‌दों की अवहेलना होने लगी और इसीलिए न्यायमूर्ति एम. जी. रानाडे ने इण्डियन सोशल कान्फ्रेन्स की स्थापना की जो देश में प्रबुद्धजनों को तैयार करने मे सफल रही।

1887 में ससिपदा बनर्जी ने हिन्दू विधवाओं के लिए एक गृह की स्थापना की जिसका अनुसरण करते हुए बम्बई, मद्रास, इत्यादि नगरों में भी इस प्रकार के गृह स्थापित किये गये। प्रा. डी. के. कर्वे ने 1896 में पूना मे एक विधवा गृह स्थापित किया। मद्रास में भी ऐसा ही विधवा गृह 1898 में स्थापित किया गया।

1897 में शंकरन नायर ने कांग्रेस अध्यक्ष से एक विशुद्ध धर्म निरपेक्ष सरकार की मांग की। 1904 मे बम्बई के समाज सुधारकों के महत्व पर महिलाओं का विशेष सत्र आयोजित किया गया और यहीं पर उन बीजों का रोपण किया गया जो 20 साल बाद आल इण्डिया वीमन्स कान्फ्रेन्स के रूप में प्रस्फुटित हुए।

1905 में समाज सेवा में गम्भीर अभिरुचि रखने वाले गोपाल कृष्ण गोखले ने सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोशायटी की स्थापना की। इस सोशायटी ने समाज के बहुमुखी विकास के साथ-साथ दलित वर्गों के उत्थान पर विशेष रूप से बल दिया। इस सोशायटी की गतिविधियों से जी.के. देवधर, एन.एम. जोशी, वी.एस. श्रीनिवास शास्त्री तथा पंडित एच.एन. कुन्जरू सक्रिय रूप से सम्बद्ध थे। ए.वी. ठाकुर ने सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोशायटी के माध्यम से गुजरात की जनजातियों के विकास का कार्य प्रारम्भ किया।

डा. एनी बेसेण्ट तथा श्रीमती मार्गेरेट कजिन्स ने महिला संगठनों

की स्थापना के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। उनके प्रयासो से ही 1917 मे वीमन्स इण्डियन एसोशियेशन की स्थापना हुई। इसके 8 साल बाद 1925 मे महिलाओ का एक राष्ट्रीय सगठन नेशनल काउसिल ऑफ वीमन के नाम से सामने आया। इसके 2 साल बाद 1927 मे ऑल इण्डिया वीमन्स कान्फ्रेन्स का सत्र पूना में हुआ।

1920 मे भारतीय समाज सेवा क्षितिज पर महात्मा गाधी का अभ्युदय हुआ। गाधी जी प्रत्येक व्यक्ति का सुधार चाहते थे और इसीलिए उन्होने सर्वोदय (सबका कल्याण) की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होने 'अधिक से अधिक लोगो की अधिक से अधिक भलाई'के स्थान पर 'सभी लोगों की अधिकतम भलाई' का विचार सामने रखा। वे रामराज्य की स्थापना अर्थात् ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते थे जिसमे प्रेम सर्वत्र व्याप्त हो और व्यक्ति के बहुमुखी विकास के लिए आवश्यक परिस्थितियां विद्यमान हो। उन्होने एक रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसके प्रमुख अगभूत (1) साम्प्रदायिक एकता, (2) अस्पृश्यता निवारण, (3) मद्य निषेध, (4) खादी, (5) ग्रामोद्योग, (6) नई तालीम (बेसिक शिक्षा), (7) प्रौढ शिक्षा, (8) ग्राम स्वच्छता, (9) पिछडी जातियो की सेवा, (10) नारी उद्धार, (11) स्वास्थ्य एव सफाई की शिक्षा, (12) राष्ट्रभाषा का प्रसार, (13) प्राकृतिक शिक्षा, (14) आर्थिक समानता से सबधित कार्य, (15) किसानो, मजदूरों एव युवको के संगठनो की स्थापना, (16) निरन्तर आत्मिक उत्थान, (17) सर्वधर्म समभाव, तथा (18) शारीरिक श्रम सम्मिलित थे।

4. व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं संगठन काल

इस देश मे व्यावसायिक समाज कार्य प्रशिक्षण के क्षेत्र मे वर्ष 1936 एक अत्यधिक महत्वपूर्ण वर्ष है क्योकि 1936 मे समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रो में विविध प्रकार के पारितोषिकपूर्ण कार्यों को करने के लिए अपेक्षित ज्ञान एव निपुणताओ से उपयुक्त रूप से सुसज्जित करने हेतु प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ को तैयार करने के इरादे से सर

दोराव जी टाटा ट्रस्ट के ट्रस्टियो ने अमरीकी मराठा मिशन के डा0 किलफर्ड मैन्सहर्ट की सलाह पर अमरीका के समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओ के प्रतिमान पर सर दोराव जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल आफ सोशल वर्क की स्थापना की। 1947 तक सर दोराव जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क एकमात्र ऐसी संस्था थी जो इस देश मे व्यावसायिक समाज कार्य का प्रशिक्षण प्रदान करती थी। 1947 मे स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रश्चात काशी विद्यापीठ, वाराणसी तथा कालेज ऑफ सोशल सर्विस, गुजरात विद्यापीठ, अहमदावाद की स्थापना हुई। इसके वाद 1948 में डेलही स्कूल ऑफ सोशल वर्क स्थापित किया गया। 1949 मे समाज कार्य विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय की स्थापना हुई।

1951 में योजनाबद्ध विकास का युग प्रारम्भ हुआ जिसके परिणामस्वरूप समाज कल्याण के क्षेत्र मे अनेक प्रकार के कार्यो का सृजन हुआ। 1953 मे भारत सरकार द्वारा समाज कल्याण के क्षेत्र मे स्वयंसेवी संगठनो के प्रयासो को प्रोत्साहित करने एवं सुदृढ बनाने की दृष्टि से केन्द्रीय समाज कल्याण योर्ड की स्थापना हुई। जिसके द्वारा स्वैच्छिक समाज कल्याण संस्थाओ को समाज कल्याण के क्षेत्र मे विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमो को आयोजित करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाने लगी। परिणामतः समाज कल्याण के क्षेत्र मे विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्वो को ग्रहण करने के लिए प्रशिक्षित जनशक्ति तैयार करने की आवश्यकता और अधिक घनीभूत हुई और इसकी पूर्ति के लिए समाज कार्य का व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने वाली संस्थाओ की सख्या मे भी वृद्धि हुई।

वर्तमान समय में समाज कार्य का प्रशिक्षण देने वाली सस्थाओ की संख्या 44 है। इन सस्थाओ द्वारा प्रदान किये जा रहे सर्टिफिकेट, डिप्लोमा तथा डिग्रियो का विवरण निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है :

दी गयी सर्टिफिकेट / डिप्लोमा एव डिग्री	समाजकार्य प्रशिक्षण सस्थाओ की सख्या
स्नातक	4
परास्नातक	11
पी एच डी	13
डी लिट	1
परास्नातक डिग्री तथा परास्नातक डिप्लोमा	5
सर्टिफिकेट तथा परास्नातक डिप्लोमा	1
परास्नातक डिग्री, पी एच डी डिग्री तथा परास्नातक डिप्लोमा	2
स्नातक, परास्नातक तथा पी एच डी डिग्री और सर्टिफिकेट	1
स्नातक तथा परास्नातक डिग्री तथा सर्टिफिकेट	1
परास्नातक डिप्लोमा	2
स्नातक डिग्री तथा सर्टिफिकेट	1
स्नातक तथा परास्नातक डिग्री तथा सर्टिफिकेट एव परास्नातक डिप्लोमा	1
कुल योग	44

इनमे से कुछ स्नातक की डिग्री, कुछ सर्टिफिकेट तथा स्नातक की डिग्री दोनो तथा कुछ परास्नातक डिप्लोमा प्रदान कर रही हैं। इनमे से अधिकतर परास्नातक डिग्री दे रहे हैं। लगभग 1/3 सस्थाये पी–एच डी की उपाधि दे रही हैं। दो सस्थाये शोध के क्षेत्र मे डी लिट की उच्चतम उपाधि का भी प्रावधान करती है। इन विभिन्न समाज कार्य प्रशिक्षण सस्थाओ से प्रशिक्षित होकर आने वाले विद्यार्थियो का विवरण निम्नलिखित तालिका की सहायता से प्रदर्शित किया जा रहा है

भारत मे 1950-51 से लेकर 1984 तक समाज कार्य में विभिन्न प्रकार की दी गयी डिग्रियां/डिप्लोमा तथा सर्टिफिकेट

	डिग्रियां			डिप्लोमा/सर्टिफिकेट			
वर्ष	स्नातक	परास्नातक	पी–एच डी	डी लिट	सर्टिफिकेट	डिप्लोमा	परास्नातक
1	2	3	4	5	6	7	8
1950-51	16	579**					
1952-56	52	548					
1957-61	129	1443					
1962-66	387	1717					
1967	123	378					
1968	129	427					
1969	112	430					
1970	147	409					
1971	151	459					
1972	144	542					
1973	230	573					
1974	238	466					
1975	223	676	98*				
1976	241	708	7				
1977	186	775	28	-	255	14	163
1978	276	678	18	-	289	40	44
1979	434	1051	18	-	60	79	40
1980	306	1224	18	-	169	34	69
1981	413	929	25	-	267	-	312
1982	395	994	20	-	226	-	329
1983	422	958	23	1	240	-	289
1984	456	992	22	-	207	-	200

*1950 से 1976 तक के आंकडे उपलब्ध नहीं

**पूर्व वर्षों के आकडे सम्मिलित

स्रोत : महिला एव समाज कल्याण मत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

प्रशिक्षण संस्थाओ तथा व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओ की संख्या मे वृद्धि के साथ–साथ व्यावसायिक संगठनो का भी विकास हुआ है ताकि व्यावसायिक मानदण्डो को विकसित एवं कार्यान्वित

किया जा सके और प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओ की अभिरुचियो का सरक्षण किया जा सके। प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओ का सगठन बनाने का विचार सर्वप्रथम 1951 मे डा जे एम कुमारप्पा के मस्तिष्क मे आया था जबकि जमशेदपुर मे इण्डियन कान्फ्रेन्स ऑफ सोशल वर्क का वार्षिक सत्र हो रहा था। जमशेदपुर मे इण्डियन एसोसियेशन ऑफ अल्युम्नाई ऑफ द स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क की स्थापना हुई। इसकी वार्षिक बैठके इण्डियन कान्फ्रेन्स आफ सोशल वर्क की वार्षिक बैठको के समय ही अलग से हो जाती थी। यह सुसगठित नही था तथा अनोपचारिक सगठन होने के कारण इसके सदस्यो के सम्बन्ध भी सुपारिभाषित नही थे। 1959-60 मे इस सगठन को पुन गतिशील बनाया गया। 1961 मे इसके सविधान का सशोधन किया गया तथा 1962 मे इसका पजीकरण कराते हुए इसकी शाखाये देश के विभिन्न भागो मे खोली गयी तथा इसे इण्टर्नेशनल फेडरेशन ऑफ सोशल वर्कर्स से सम्बन्धित भी कराया गया। 1964 मे इसका नाम बदलकर इण्डियन एसोसियेशन ऑफ ट्रेण्ड सोशल वर्कर्स कर दिया गया जिसका उद्देश्य समाज कार्य के व्यावसायिक मानदण्डो की स्थापना करना तथा प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओ की व्यावसायिक अभिरुचियो का सरक्षण करना था। दुर्भाग्य से प्रबन्ध मण्डल की निष्क्रियता के कारण यह सगठन मृतप्राय हो गया। 1960 मे समाज कार्य शिक्षा के क्षेत्र मे गेर सरकारी सगठन के रूप मे कार्य करने के लिए एसोसियेशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया की स्थापना की गयी।

इन सगठनो के अतिरिक्त विभिन्न समाज कार्य शिक्षा सस्थाओ के स्तर पर भी स्थानीय सगठनो का निर्माण किया गया है।

सन्दर्भ

1 Majumdar R C *Social Work in Ancient India* in A R Wadia(ed) History and Philosophy of Social Work in India Allied Publishers Bombay 1968

2 Mehta B N *Historical Development of Social Work in India* Indian Journal of Social Work Vol 13 June 1952

3 Gore, M S , *Historical Background of Social Work in India*, in Social Welfare in India, Planning Commission, Govt. of India, New Delhi, 1955

4 Shastri, R R *Social Work Tradition in India*, Welfare Forum and Research Organization Varanasi, 1966

5 Banerjee, G R , *Social Welfare in Ancient India* in Papers on Social Work An Indian Perspective, Tata Institute of Social Sciences, Bombay, 1972

6 Natrajan, S A., *Century of Social Reform in India*, Asia Publishing House New Delhi, 1962

समाज कार्य दर्शन

(PHILOSOPHY OF SOCIAL WORK)

दर्शन सामाजिक जीवन के मौलिक सिद्धान्तो और धारणाओ की व्याख्या करता है। यह सामाजिक जीवन के सर्वोच्च मूल्यो को प्रभावपूर्ण बनाता है तथा व्यक्ति, समाज, आदि के आदर्शो तथा नैतिक व्यवहारो की व्याख्या करता है। दर्शन सामाजिक सबधो के सर्वोच्च आदर्श का निरूपण करता है। समाज कार्य का अस्तित्व व्यक्ति की भलाई मे निहित है। इसका मूलाधार ही मानवतावादी है, लेकिन मानवतावादी विचार सिद्धान्तो तथा तथ्यो पर आधारित है। समाज कार्य वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग जन कल्याण के लिए करता है।

I *दर्शन क्या है?*

लियोनार्ड (Leonard)[1] के अनुसार "दर्शन विश्व के विभिन्न दृष्टिकोणो की प्रत्यात्मक अभिव्यक्ति से अधिक कुछ और है। आदर्शात्मक रूप के अतिरिक्त यह मनुष्य–मनुष्य के बीच तथा मनुष्य व सम्पूर्ण जगत के बीच सम्बन्धो की मूल सत्यताओ का निरूपण करता है। मानव विज्ञानो को वैज्ञानिक होने के लिए दार्शनिक होना होगा।"[1]

समाज कार्य मानव जीवन को अधिक सुखमय तथा प्रकार्यात्मक बनाने का सकल्प रखता है। अत बट्रिम (Butrym) का मत है कि समाज कार्य को वास्तविक होने के लिए दार्शनिक होना आवश्यक है।[2] परन्तु यह सकल्प तभी पूरा हो सकता है जब समाज कार्य उन विश्वासो पर आधारित हो जो सुखमय जीवन का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इसी सदर्भ

मे समाज कार्य दर्शन का वर्णन किया जा रहा जिसमे समाज कार्य के प्रत्ययो, मनोवृत्तियों तथा मूल्यो का निरुपण किया जायेगा।

II *समाज कार्य के मूल प्रत्यय*
(Basic concepts of social work)

समाज कार्य के निम्नलिखित प्रत्यय महत्वपूर्ण हैं

1. व्यक्ति का प्रत्यय (Concept of individual)

जान्सन[3] का मत है कि समाज कार्य व्यक्ति के अन्तनिर्हित महत्व (Inherent Worth), सत्यनिष्ठा (Integrity) तथा गरिमा (Dignity) के प्रति आस्था रखता है। इस प्रत्यय को ध्यान मे रखकर कार्यकर्ता सम्बन्ध स्थापित करता है तथा समस्या समाधान करने का प्रयास करता है। कार्यकर्ता यह विश्वास भी रखता हे कि व्यक्ति समग्रता मे प्रतिक्रिया करता है तथा उसकी वाह्य एव आन्तरिक परिस्थितिया भिन्न–भिन्न होती हैं। अत उनका व्यवहार भी भिन्न–भिन्न होता हे। उसके वेयक्तिक मूल्य महत्वपूर्ण होते हें ओर वह सपूर्ण पर्यावरण के प्रति प्रतिक्रिया करता है। उसको अपना निर्णय लेने का अधिकार होता है। समाज कार्य मे इन्ही बिन्दुओ को महत्वपूर्ण नाना जाता हे तथा ये ही समाज कार्यकर्ताओ द्वारा किए जाने वाले कार्य का मार्ग निर्देशन करते हैं।

2. व्यवहार का प्रत्यय (Concept of behaviour)

व्यवहार का तात्पर्य व्यक्ति के वाह्य पर्यावरण के प्रति किये गये प्रत्युत्तर से है। व्यक्ति पर्यावरण के साथ समायोजन करने के ि ? प्रत्युत्तर करता है। प्रत्येक क्षण व्यक्ति को आन्तरिक तथा वाह्य प्रेरक, आवश्यकताए तथा सामाजिक पर्यावरण प्रभावित करते हैं जिसके कारण उस पर दवाव पडता है। फलत उसे तनाव एवं चिता की अनुभूति होती है। इस चिता को कम करने तथा तनाव को हटाने के लिए व्यक्ति जो कार्य करता है उसे उस व्यक्ति का व्यवहार कहा जाता हे। इस प्रकार व्यवहार के अन्तर्गत एक समय मे व्यक्ति द्वारा

किये गये समस्त सवेग, विचार, दृष्टिकोण तथा कार्य आते है। मानव व्यवहार अनेक सिद्धान्तो पर आधारित है जिनमे निम्न प्रमुख हैं

(1) सभी प्रकार का व्यवहार अर्थपूर्ण होता है।

(2) व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थिति उसके व्यवहार को प्रभावित करती है।

(3) अतीत मे प्राप्त किए गए अनुभव व्यवहार को प्रभावित करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(4) सामाजिक पृष्ठभूमि व्यवहार के ढग को प्रभावित करती है।

(5) वश परम्परा की विशेषताओ का व्यवहार पर प्रभाव पडता है।

(6) व्यवहार चेतन व अचेतन दोनो प्रकार का होता है।

(7) वर्तमान दशाओ का व्यवहार पर प्रभाव पडता है।

(8) भावी आशाओ का भी व्यवहार मे महत्त्वपूर्ण स्थान है।

(9) सम्पर्क मे आने वाले व्यक्तियो का व्यवहार व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है।

(10) नवीन तथ्यो की जानकारी के पश्चात् व्यवहार बदलता भी रहता है।

समाज कार्यकर्ता व्यवहार के इन सिद्धान्तो को ध्यान मे रखकर ही अपनी भूमिका सपादित करता है।

3. समस्या का प्रत्यय (Concept of problem)

जब एक व्यक्ति पहले से सीखी हुई आदतो, सम्प्रेरणाओ तथा नियमो की सहायता से उद्देश्य पर पहुच नहीं पाता है, तब समस्या की स्थिति उत्पन्न होती हे। समस्या उस समय भी उत्पन्न होती है जब व्यक्ति एक उद्देश्य तो रखता है, परन्तु यह नही जानता है कि उस उद्देश्य को कैसे प्राप्त किया जाये। समस्या किसी एक या एक से अधिक आवश्यकता से सम्बन्धित होती है जो व्यक्ति के जीवन मे व्यवधान एव कष्ट उत्पन्न करती हे। समस्या किसी दबाव (शारीरिक,

मनोवैज्ञानिक, सामाजिक) के रूप मे भी हो सकती है जो सामाजिक भूमिका पूरी करने मे बाधा उत्पन्न करती है। समस्या के अनेकानेक रूप होते हैं तथा इसकी प्रकृति गत्यात्मक होती है। यह सदैव श्रृखलाबद्ध रूप मे प्रतिक्रिया करती है। कोई भी समस्या जिससे व्यक्ति ग्रसित होता है वस्तुगत(वाह्य) तथा विषयगत(आन्तरिक) दोनो प्रकार से महत्वपूर्ण होती है। समस्या के वाह्य तथा आन्तरिक तत्व न केवल एक साथ घटित होते हैं वल्कि इनमे से कोई भी एक दूसरे का कारण हो सकता हे। समस्या की प्रकृति कैसी भी हो लेकिन सेवार्थी की प्रतिक्रियाओ का प्रभाव समस्या समाधान पर अवश्य पडता है।

समाज कार्यकर्ता मे समस्या समाधान के लिए निम्न योग्यताए होनी आवश्यक होती हैं

(1) समस्या के तथ्यो का पूर्ण ज्ञान
(2) समस्या के सभी तत्वो के अन्तर्सम्बन्धो का ज्ञान
(3) तत्वो को व्यवस्थित करने की योग्यता तथा विकास की गति का ज्ञान
(4) परिस्थिति का उचित प्रत्यक्षीकरण
(5) पूर्व अनुभवो का उचित उपयोग
(6) सम्प्रेरणाओ की जटिलता तथा इनके प्रकार का ज्ञान

समाज कार्य का दृढ विश्वास हे कि समस्या सभी व्यक्तियो को किसी न किसी रूप मे प्रभावित करती हे। परन्तु जो व्यक्ति समाधान कर लेता हे, वह सेवार्थी नहीं बनता। अत समाधान करने की क्षमता का विकास व्यक्ति मे सन्निहित है।

4. सम्बन्ध का प्रत्यय (Concept of relationship)

सम्बन्ध एक प्रत्यय है जो मौखिक अथवा लिखित वार्तालापो मे प्रकट होता हे जिसमे दो या दो से अधिक व्यक्ति लघुकालीन, दीर्घकालीन, स्थायी अथवा अस्थायी सामान्य अभिरुचियो एव भावनाओ

के साथ अन्त क्रिया करते हैं। सामाजिक एव सावेगिक होने के नाते मनुष्य दूसरो के साथ सम्बन्धो, उनकी वृद्धि एव विकास को प्रभावित करते हैं। इसके साथ ही साथ उसका सम्पूर्ण समायोजन भी इसकी परिधि क्षेत्र मे आ जाता है। बीस्टेक (Biestek)[4] ने सम्बन्ध के इन तत्वों का उल्लेख किया है भावनाओ का उद्देश्यपूर्ण प्रगटन, नियत्रित सावेगिक भागीकरण (Involvement), स्वीकृति, वैयक्तीकरण, अनिर्णायक मनोवृत्ति, आत्म निश्चयीकरण तथा गोपनीयता।

5. भूमिका का प्रत्यय (Concept of role)

सामाजिक सास्कृतिक व्यवस्था मे व्यक्ति अपनी आयु लिग, जाति, प्रजाति एव व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर जिस स्थिति को प्राप्त करता है उसे उसकी प्रस्थिति (Status) कहा जाता है और प्रस्थिति के सदर्भ मे सामाजिक परम्परा, प्रथा, नियम एव कानून के अनुसार कार्य करने होते हैं, वह उसकी भूमिका (Role) होती है। लिटन का मत है कि प्रत्येक स्थिति का एक क्रियापक्ष होता है, इस क्रिया पक्ष को ही भूमिका कहते हैं। अपनी स्थिति का औचित्य सिद्ध करने के लिए व्यक्ति को कुछ करना होता है, उसी को भूमिका कहा जाता है।[5]

जब व्यक्ति की प्रेरणाये एव क्षमताये उसकी अपेक्षित भूमिका के अनुकूल नही होती हैं तो उसका अनुकूलन नहीं हो पाता है और उसे दाह्य सहायता की आवश्यकता होती है।

6. अह का प्रत्यय (Concept of ego)

अह मस्तिष्क का वह भाग है जिसके द्वारा व्यक्ति अपना मानसिक सन्तुलन बनाये रखता है। व्यक्ति मे ऐसी अनेक मूल प्रवृत्तिया होती हैं जो सन्तुष्ट होने के लिए चेतन मे आने का प्रयत्न करती हैं, परन्तु अह ऐसा करने से रोकता है क्योंकि उन्हे सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नही होती है।

अह की शक्ति (Ego Strength) की असफलता की अवस्था में व्यक्ति अतार्किक एव अचेतन सुरक्षात्मक उपायो (Defence Mechanisms) का प्रयोग अह की सुरक्षा के लिए करता है। इस प्रकार की युक्तियो द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार को तार्किक बनाता है और समाज द्वारा अस्वीकृत उत्प्रेरकों को सही मानता है। वह अह की रक्षा के लिए प्रक्षेपण, प्रतिगमन, अस्वीकृति, स्थानापन्न, प्रतिक्रिया निर्माण, आदि युक्तियो का प्रयोग सचेतन रूप से करता है।

कार्यकर्ता सेवार्थी के समाज द्वारा स्वीकृत अनुकूलन के ढगों तथा अतार्किक सुरक्षात्मक उपायों द्वारा अनुकूलन मे अन्तर स्पष्ट करता हे। वह सेवार्थी की अह शक्ति का मूल्यांकन करता है तथा वर्तमान स्थितियों का सेवार्थी की दृष्टि से मूल्याकन करता है। कार्यकर्ता अहं की कार्य प्रणाली तथा कार्यात्मकता के अध्ययन तथा निदान द्वारा सेवार्थी की शक्ति, विचार पद्धति, प्रत्यक्षीकरण, मनोवृत्ति, आदि की जानकारी प्राप्त करता है। इस ज्ञान के आधार पर उसे चिकित्सा प्रक्रिया निश्चित करने मे सुविधा होती है।

7. अनुकूलन का प्रत्यय (Concept of adaptation)

व्यक्ति को दो कारणो से तनावपूर्ण स्थिति का अनुभव होता है :

(1) पहले अपनाए गए तथा अभ्यस्त ढगो के द्वारा परिवर्तित स्थिति की माँगों से समबन्धित भूमिकाओ का प्रतिपादन न हो पाना।

(2) व्यक्तिगत सम्प्रेरणाओं एवं क्षमताओं में परिवर्तन होने की स्थिति में पहले की भूमिकाओं को पूरा करने में व्यक्तिगत असन्तुलन होना।

व्यक्ति तनावपूर्ण स्थिति से तीन प्रकार से अनुकूलन करता है

(1) प्रयोग में लाए गए तथा पूर्व निश्चित ढगो के उपयोग द्वारा।

(2) कल्पना की उडान द्वारा।

(3) उदासीनता, मानसिक उन्मुखता, प्रत्याहार, अगतिमानता अथवा अतिसक्रियता द्वारा।

व्यक्ति सबसे पहले अपनी समस्या का समाधान अपने पहले प्रयोग में लाए गए ढगो एव प्रयुक्त प्रविधियो द्वारा करने का प्रयत्न करता है। यदि इस प्रकार समस्या का समाधान नहीं होता है तो वह या तो सघर्ष करता है या अपने को उस स्थिति के अनुकूल बना लेता है अथवा उस स्थिति से दूर होने का प्रयत्न करता है। यदि ये तरीके भी असफल हो जाते हैं तो वह समस्या के प्रति उदासीन होकर मानसिक रोगी बन जाता है।

समाज कार्य सेवार्थी की अनुकूलन करने की प्रविधियो की शक्तियो, क्षमताओ, प्रभावो, आदि को महत्त्व देता है। सेवार्थी मे अनुकूलन करने की क्षमता सामाजिक पर्यावरण से समायोजन करने की स्थिति को प्रभावित करती है। वह यह निश्चित करता है कि सेवार्थी तनावपूर्ण स्थिति को किस प्रकार सुलझाने का प्रयत्न करता है तथा अपने प्रयत्नो को किस सीमा तक परिवर्तित करता है, और उसकी कठिनाई एव समस्या को कितनी जल्दी दूर किया जा सकता है। कार्यकर्ता यह जान लेने के पश्चात दो प्रकार के प्रयत्न करता है वह या तो व्यक्ति की आन्तरिक शक्तियो को सम्बल प्रदान करते हुए अनुकूलन सम्भव बनाता है या फिर सामाजिक परिस्थिति मे ही परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

III *समाज कार्य के मौलिक मूल्य*
(Basic values of social work)

समाज कार्य का उद्‌देश्य मानव कल्याण करना है। यह कल्याण कार्य तभी सम्भव हो सकता है जब वह सामाजिक मूल्यो को अपनी क्रियाविधि में समाहित करे, क्योंकि मूल्य ऐसे सामाजिक प्रतिमान लक्ष्य तथा आदर्श होते हैं जिनके आधार पर सामाजिक परिस्थितियो तथा व्यक्ति के व्यवहार का मूल्याकन किया जा सकता है। मूल्यो के आधार पर ही मनुष्य के सामाजिक जीवन की शैली का निर्धारण होता है तथा अन्त क्रियाये सम्भव होती हैं।

जान्सन[6] (Johnson) के अनुसार मूल्यो को एक सास्कृतिक या केवल वैयक्तिक धारणा या मानक के रूप मे पारिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा वस्तुओ की एक–दूसरे के सन्दर्भ मे तुलना की जाती है, उन्हे स्वीकृत या अस्वीकृत किया जाता है, उन्हे सापेक्ष रूप से अपेक्षित या उपेक्षित, अधिक या कम, बुद्धिमत्तापूर्ण या मूर्खतापूर्ण, अधिक या कम सही माना जाता है।

मुकर्जी[7] के मत मे "मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाये तथा लक्ष्य हैं जिनका अभ्यन्तरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता है और जो विषयात्मक प्रतिष्ठा, उद्‌देश्य एव आकाक्षाये बन जाते हैं।"

कॉस[8] के अनुसार "मूल्य को किसी वस्तु, अवधारणा, सिद्धान्त, क्रिया अथवा परिस्थिति के विषय में किसी व्यक्ति, समूह या समुदाय के बौद्धिक एव सवेगात्मक निर्णय के रूप मे देखा जा सकता है।"

प्रत्येक व्यवसाय मे जो मानव व्यवहार से सम्बन्धित है कुछ न कुछ मूल्य अवश्य होते हैं और इन मूल्यो के आधार पर ही वह व्यवसाय अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है। सामाजिक मूल्यो का अत्यधिक महत्त्व होता है क्योकि वे सामाजिक सन्तुलन बनाये रखते हैं, व्यवहारो मे एकता लाते हैं, जीवन के मनोवैज्ञानिक आधार निश्चित करते हैं, निश्चित व्यवहार प्रदान करते हैं, भूमिका का निर्धारण करते है तथा सामाजिक घटनाओ एवं समस्याओं के मूल्यांकन को सम्भव बनाते हैं।

समाज कार्य के मूल्य

कॉस[9] ने समाज कार्य के 10 प्राथमिक मूल्यो का उल्लेख किया है:

(1) मनुष्य की महत्ता तथा गरिमा, (2) मानव प्रकृति मे पूर्ण मानवीय विकास की क्षमता, (3) मतभेदो के लिए सहनशीलता, (4) मौलिक मानवीय आवश्यकताओ की सन्तुष्टि, (5) स्वाधीनता मे विश्वास, (6) आत्म निर्देशन, (7) अनिर्णायक प्रवृत्ति, (8) रचनात्मक सामाजिक

सहयोग (9) कार्य का महत्व तथा रिक्त समय का रचनात्मक उपयोग (10) मनुष्य एव प्रकृति द्वारा उत्पन्न किए गए खतरो से अपने अस्तित्व की रक्षा।

कोनोप्का (Konopka)[17] ने समाज कार्य के 2 प्राथमिक मूल्यो का उल्लेख किया है

(1) प्रत्येक व्यक्ति का आदर तथा प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमताओ के पूर्ण विकास का अधिकार।

(2) व्यक्तियो की पारस्परिक निर्भरता तथा एक–दूसरे के प्रति अपनी योग्यता के अनुसार उत्तरदायित्व।

सयुक्त राष्ट्र[18] ने समाज कार्य के निम्न दार्शनिक एव नैतिक मूल्यो एव मान्यताओं का उल्लेख किया है

(1) किसी व्यक्ति की सामाजिक पृष्ठभूमि (स्थिति, जाति, धर्म राजनैतिक विचारधारा) तथा व्यवहार को ध्यान मे रखे बिना उसके महत्व मूल्य या योग्यता को मान्यता प्रदान करना तथा मानव प्रतिष्ठा एव आत्म–सम्मान को प्रोत्साहित करना।

(2) व्यक्तियों, वर्गो एव समुदाय के विभिन्न मतो का आदर करने के साथ-साथ जन कल्याण के साथ उनका सामन्जस्य स्थापित करना।

(3) आत्म–सम्मान एव उत्तरदायित्व पूरा करने की योग्यता बढाने की दृष्टि से स्वावलम्बन को प्रोत्साहित करना।

(4) व्यक्तियो वर्गो अथवा समुदायो की विशेष परिस्थितियो मे सतोषमय जीवन निर्वाह करने हेतु समुचित अवसरो मे वृद्धि करना।

(5) समाज कार्य के ज्ञान एव दर्शन जो मानवीय इच्छाओ एव आवश्यकताओ के सम्बन्ध मे उपलब्ध है के अनुरूप अपने व्यावसायिक उत्तरदायित्व को स्वीकार करना ताकि प्रत्येक व्यक्ति को अपने पर्यावरण एव अपनी कार्य क्षमता का सदुपयोग करने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो सके।

(6) व्यावसायिक सम्बन्धो की गोपनीयता को बनाये रखना।

(7) सेवार्थियो (व्यक्ति, समूह या समुदाय) को अधिक स्वतत्र एव आत्म निर्भर बनाने मे सहायता देने के लिए इन सम्बन्धो का उपयोग करना।

(8) यथासम्भव विषयात्मकता एव उत्तरदायित्व के साथ व्यवसायिक सम्बन्धो का उपयोग करना।

मिर्जा आर अहमद" ने समाज कार्य के निम्नलिखित मूल्यो का उल्लेख किया है

(1) समाज कार्य आर्थिक एव राजनीतिक शक्ति के अधिक समतावादी ढगो की सहायता से पुनर्वितरण मे विश्वास करता है।

(2) समाज कार्य उत्पादन की सामाजिक व्यावहारिकता पर विश्वास करता हे तथा उत्पादन को सामाजिक उद्देश्य के अधीन मानता है।

(3) सगठित श्रम का सामुदायिक जीवन मे सकारात्मक योगदान होता है तथा उसे ध्वन्सात्मक शक्ति के रूप मे न मानकर रचनात्मक शक्ति के रूप मे स्वीकार किया जाना चाहिए।

(4) समाज कार्य का विश्वास हे कि आर्थिक भूमिका प्रदत्त प्रस्थिति (ascnbed status) के आधार पर न होकर उपलब्धि के मानक के आधार होनी चाहिए।

(5) समाज कार्य आर्थिक असन्तुलन को समाप्त करने में काले धन के स्रोतो को बन्द करने तथा सार्वजनिक क्षेत्र को निजी क्षेत्र के आक्रमण से बचाने तथा निष्कपट एव निश्छल प्रयासो द्वारा समाजवादी राज्य की स्थापना करने मे विश्वास रखता है।

(6) समाज कार्य सामाजिक नियोजन में विश्वास रखता है जिसे समाजवादी अर्थ व्यवस्था द्वारा अधिक से अधिक व्यक्तियो के कल्याण हेतु किया जाता है।

(7) समाज कार्य ऐसे सेवारत राज्य मे विश्वास करता है जिसका

मुख्य उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति का कल्याण हो तथा जो व्यक्ति के संरक्षण को मौलिक प्रजातान्त्रिक कर्तव्य के रूप मे स्वीकार करता है।

(8) समाज कार्य संचयात्मक मूल्यों के स्थान पर वितरक (Distributive) मूल्यो मे विश्वास रखता है।

(9) समाज कार्य सामाजिक न्याय मे विश्वास रखता है।

(10) समाज कार्य वितरक न्याय (Distributive Justice) मे विश्वास करता है जिसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके सामाजिक योगदान के अनुपात मे ही प्रतिफल (Return) मिले।

(11) समाज कार्य धार्मिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक विचारधाराओ की प्रतिबद्धता मे विश्वास रखता है।

(12) समाज कार्य आधुनिकीकरण मे विश्वास रखता है।

IV *समाज कार्य दर्शन (Social work philosophy)*

हर्बट बिस्नो[12] (Herbert Bisno) ने समाज कार्य के दर्शन का विस्तृत वर्णन किया है। उन्होंने समाजकार्य दर्शन को 4 क्षेत्रो मे विभाजित किया है व्यक्ति की प्रकृति के सन्दर्भ मे, समूहों, व्यक्तियो एव समूहो और व्यक्तियों के आपसी सम्बन्धो के सदर्भ मे, समाज कार्य की प्रणालियो एव कार्यो के सदर्भ में, सामाजिक कुसमायोजन एव सामाजिक परिवर्तन के सदर्भ मे।

1. व्यक्ति की प्रकृति के सदर्भ में

   (1) व्यक्ति अपने अस्तित्व के कारण ही मूल्यवान है।

   (2) मानवीय पीड़ा अवाछनीय है अत इसको दूर किया जाना चाहिए अन्यथा जहा तक सभव हो कम किया जाना चाहिए।

   (3) समस्त मानव व्यवहार जैविकीय अवयव तथा उसके पर्यावरण के बीच अन्त क्रिया का परिणाम है।

(4) मनुष्य सम्भवत विवेकपूर्ण कार्य नहीं करता है।

(5) जन्म के समय मनुष्य अनैतिक तथा असामाजिक होता है।

(6) मानव आवश्यकताये वैयक्तिक एव सामाजिक दोनो प्रकार की होती हैं।

(7) मनुष्यो मे महत्त्वपूर्ण अतर होते हैं। अत उन्हे अवश्य स्वीकार कर लेना चाहिए।

(8) मानव सम्प्रेरणा जटिल एव अस्पष्ट होती हे।

(9) व्यक्ति के प्रारम्भिक विकास मे पारिवारिक सम्बन्धो का प्राथमिक महत्व होता है।

(10) सीखने की प्रक्रिया मे अनुभव एक आवश्यक पहलू है।

2. समूहो, व्यक्तियो एवं समूहो और व्यक्तियो कें परस्पर सम्बन्धो के संदर्भ मे

(1) समाज कार्य हस्तक्षेप न करने की नीति (Laissez Faire) तथा सबसे अधिक उपयुक्त के जीवित रहने (Survival of the Fittest) के सिद्धांत को नहीं मानता है।

(2) यह आवश्यक नही है कि धनी तथा शक्तिशाली व्यक्ति ही योग्य हो तथा निर्धन एवं दुर्बल व्यक्ति अयोग्य हो।

(3) सामाजीकृत व्यक्तिवाद (Socialised Individualism) विषम व्यक्तिवाद (Rugged Individualism) की अपेक्षा अच्छा है।

(4) सदस्यो के कल्याण का मुख्य उत्तरदायित्व समुदाय पर होता है।

(5) सामाजिक सेवाओ पर समुदाय के सभी वर्गो का समान अधिकार है। समुदाय का उत्तरदायित्व है कि वह बिना भेदभाव के अपने सभी सदस्यों की कठिनाइयो का निराकरण करे।

(6) केन्द्रीय सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह स्वास्थ्य,

आवास, पूर्ण रोजगार, शिक्षा तथा अन्य विविध प्रकार से जन कल्याण एव सामाजिक बीमा योजना सम्बन्धी कार्यक्रमो को लागू करे।

(7) जन सहायता आवश्यकता की अवधारणा पर आधारित होनी चाहिए।

(8) संगठित श्रम का सामुदायिक जीवन मे सक्रिय योगदान होता है तथा उसकी शक्ति को विध्वसात्मक न मानकर रचनात्मक मानना चाहिए।

(9) सम्पूर्ण समानता एव पारस्परिक सम्मान के आधार पर सभी प्रजातियो एवं प्रजातीय समूहो मे सम्पूर्ण सहयोग होना चाहिए।

(10) स्वतन्त्रता एव सुरक्षा मे कोई पारस्परिक विरोध नहीं है।

3. समाज कार्य की प्रणालियो एव कार्यों के सदर्भ मे

(1) समाज कार्य का दृष्टिकोण द्विमुखी है। एक ओर समाज कार्य व्यक्तियो को संस्थागत समाज के साथ समायोजन स्थापित करने में सहायता देता है तो दूसरी ओर वह इस सस्थागत समाज के आवश्यक क्षेत्रो मे परिवर्तन लाने का प्रयास भी करता है।

(2) मानव व्यवहार के अध्ययन के लिए वैज्ञानिक पद्धति को ही आवश्यक साधन माना जाता है।

(3) सामान्यतया एक सक्षम व्यक्ति अपने हितो का सबसे अच्छा निर्णायक होता है। उसे स्वयं निर्णय लेना चाहिए तथा समस्या का निराकरण करना चाहिए।

(4) व्यवहार में सुधार एव सामाजिक विकास के लिए वातावरण के परिवर्तन एव अन्तर्दृष्टि के विकास पर विश्वास रखता है न कि आदेश, निर्णय, अथवा प्रबोधन मे

(5) समाज कार्य जनतन्त्र को एक प्रणाली के रूप मे मानता है।

4. सामाजिक कुसमायोजन एवं सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में

(1) हमारी सस्कृति मे गम्भीर राजनीतिक, आर्थिक एव सामाजिक कुसमायोजन है।

(2) क्रमिक विकास द्वारा किया गया सुधार हमारे समाज के लिए प्रासंगिक एवं वाछनीय है।

(3) सामाजिक नियोजन आवश्यक है।

V *समाज कार्य का भारतीय दर्शन*
(Indian philosophy of social work)

भारत के इतिहास का यदि हम अवलोकन करे तो पता चलता है कि समाज के निर्माण के साथ–साथ समाज सेवा के कार्य चलते रहे हैं। गरीबो, असहायो तथा अपगो की सहायता करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य माना गया है। वैदिक काल मे सामुदायिक जीवन का विकास हुआ तथा सामूहिक सम्पत्ति की परम्परा टूटी। ऋग्वैदिक काल के उत्तरार्द्ध मे पुरोहित को एक कुशल समाज कार्यकर्ता के रूप मे माना गया। उपनिषदो एवं प्राचीन ग्रन्थो से पता चलता है कि प्राचीन समय मे दान देना, धर्मशालाये बनवाना, सडके बनवाना तथा दीन–दुखियो की सहायता करना राजा का कर्तव्य होता था। व्यक्ति को सदैव महत्व दिया गया तथा उसकी पीडा को दूर करने के निरन्तर प्रयास होते रहे। सनातन धर्म के सबसे महत्वपूर्ण साहित्य रामायण, महाभारत, गीता, आदि से पता चलता है कि इस काल मे व्यक्ति तथा समुदाय की भौतिक सहायता ही केवल सेवार्थी की सेवा नही थी। क्योकि इससे हीनता एव आश्रितता की भावना पनपने का भय था इसीलिए उन्हे किसी न किसी उद्योग मे लगाना भी कर्तव्य समझा जाता था।

बौद्ध काल में समाज कार्य के भारतीय दर्शन की एक झलक मिलती है। विद्यार्थियो को अपने जीवन यापन के लिए स्वयं साधन

दूढने होते थे। विद्या दान पर विशेष बल दिया जाता था। युवको मे धार्मिक मनोवृत्ति के विकास के लिए अनेक मठो, मन्दिरो तथा धार्मिक सस्थाओ की स्थापना की गयी थी। इस शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक सम्बन्धो मे सुधार करना तथा उन्हे सुदृढ बनाना था।

अठारहवी तथा उन्नीसवी शताब्दी के समाज सुधारको ने समाज कार्य के मूल्यो को व्यावहारिक रूप प्रदान किया। जाति प्रथा तथा भेदभाव को समाप्त करने का प्रयास किया गया। राजा राममोहन राय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, शशिपदा बैनर्जी, महादेव गोविन्द रानाडे ने अनेक सराहनीय प्रयास किये। अनेक सस्थाओ जैसे ब्रह्म समाज आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, इत्यादि ने सामाजिक मूल्यो मे परिवर्तन लाने तथा सामाजिक सम्बन्धो मे सुधार करने के उद्देश्य से अनेक कार्य किये।

बीसवीं शताब्दी मे गाधी जी के कार्यो का राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक जीवन पर बहुत प्रभाव पडा। अत समाज कार्य के सदर्भ मे गाधी दर्शन को समझना आवश्यक प्रतीत होता है। समाज कार्य के आधुनिक प्रत्यय "समाज कार्य मनो–सामाजिक समस्याओ से ग्रस्त लोगो की इस प्रकार सहायता करता है कि वे स्वय अपनी सहायता कर सके" ने गाधी जी के नेतृत्व मे पर्याप्त सामाजिक स्वीकृति प्राप्त की। अपना तथा दूसरो का आदर एव सम्मान (Respect for self and others) समाज कार्य मे सभी प्रकार के सम्बन्धो का आधार है। गाधी जी ने मानव प्रतिष्ठा पर जोर दिया और उसकी प्राप्ति के लिए देश को स्वतत्र कराने का बीडा उठाया क्योकि परतत्रता की स्थिति मे आत्म सम्मान तथा प्रतिष्ठा को प्राप्त नही किया जा सकता है।

गाधी जी ने अपने आन्दोलन मे कभी भी जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि के आधार पर भेदभाव नही आने दिया। उनके कार्यो, भाषणो तथा व्याख्यानो मे सदैव जाति एव वर्ग विहीन समाज की स्थापना का स्वप्न झलकता था। गाधी जी के लिए लोग महत्वपूर्ण थे, न कि

उनकी जाति, धर्म तथा पृष्ठभूमि। उन्होने कभी भी सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कारको के आधार पर लोगो को समझने तथा उनकी सहायता करने का प्रयत्न नहीं किया। गाधी जी का मत था कि किसी को भी दूसरो पर अपना मत अथवा विचार नही थोपना चाहिए। उनका यह दृढ विश्वास था कि लोग अपने मन से ही अपने दृष्टिकोण मे परिवर्तन करेगे, दूसरो के विचार उन पर प्रभाव नही डाल सकते।

गाधी जी का यह दृढ विश्वास था कि स्वय अपनी सहायता सबसे अच्छी सहायता है। लोग तभी सक्रियता एव पूर्ण आस्था के साथ काम करेगे जब वे नियोजन एव कार्यक्रमो मे भाग लेगे। गाधी जी चाहे हरिजनो के साथ कार्य करते थे या महिलाओ के, उनके सामाजिक स्तर को ऊचा उठाने का कार्य करते थे तथा उन्हे यह अनुभव कराने का प्रयत्न करते थे कि उनकी भलाई उन्हीं मे निहित है।

गाधी जी ने आत्म–अनुशासन (Self-discipline) को जीवन की शैली माना तथा इसका उन्होने अपने जीवन मे अभ्यास भी किया। उनका दृढ विश्वास था कि नैतिक शक्ति के द्वारा बडे से बडे साम्राज्य से टक्कर ली जा सकती है और उसे हराया भी जा सकता है। उनके अनुसार सत्य और अहिसा (Truth and Non-violence) न केवल व्यक्ति के लिए आवश्यक हैं बल्कि समूहो, समुदायो तथा राष्ट्रो के विकास के आधार भी है। उनका विचार था कि लक्ष्य साधनो के औचित्य को सिद्ध नहीं करते हैं (Ends do not justify means) बल्कि साधन स्वयं महत्वपूर्ण हैं।

गांधी जी ने समाज कल्याण को "सर्वोदय" के रूप मे समझा जिसका तात्पर्य सभी क्षेत्रो मे सभी का कल्याण है। लेकिन साथ ही साथ भारतीय समाज के निर्बल एव दुर्बल वर्ग के कल्याण पर विशेष बल दिया। इसीलिए उन्होने रचनात्मक कार्यो का शुभारम्भ किया। गांधी जी ने सामाजिक बुराइयो को दूर करने के लिए जन आन्दोलन छेडा। उन्होने जनमत तैयार किया तथा जन साधारण के स्तर से कार्यक्रमो को प्रारम्भ किया।

गाधी जी 'सादा जीवन, उच्च विचार' के समर्थक थे। वे अपरिग्रह मे विश्वास रखते थे। उन्होने अपने न्यासधारिता (Trusteeship) के सिद्धान्त मे यह प्रतिपादित किया कि जिन लोगो के पास अपनी तथा अपने आश्रितो की आवश्यकता की पूर्ति से अधिक धन/वस्तुए हैं उन्हे आवश्यकताग्रस्त लोगो की धरोहर के रूप मे अपने पास रखना चाहिए और इससे सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियो की तुरन्त सहायता करनी चाहिए।

गाधी जी का दर्शन "श्रम की महत्ता" (Dignity of labour) पर आधारित है जो कि समाज कार्य दर्शन का महत्वपूर्ण अग है। उनका श्रम की महत्ता मे अटूट विश्वास था तथा उनका यह मत था कि जीविकोपार्जन का अधिकार सभी को मिलना चाहिए, और इसे साकार करने का वे सदैव प्रयत्न करते रहे। उन्होने अपने विचारो को दूसरो पर थोपने का प्रयास कभी भी नहीं किया। उनका यह प्रयास था कि लोगो मे जागृति आवे जिससे वे स्वय परिवर्तन का प्रयास करे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि गाधी जी ने भारत मे व्यावसायिक समाज कार्य की नींव डाली।

सन्दर्भ

1 Leonard P Social Work - Science or Mystique National Institute of Social Work, U S A 1969

2 Butrym, Zofia T The Nature of Social Work, Mac Millan Press Ltd Lon don 1976, p 42

3 Johnson A Development of Basic Methods of Social Work Practice and Education Social Work Journal Vol 36 No 3 1955 p 104

4 Biestek F P The Casework Relationship Loyola, University Press Chicago 1957 p 11

5 Linton R, The Cultural Background of Personality Appleton Century Crafts, Inc New York 1945 p 264

6 Values may be defined as a conception of a standard cultural or merely personal, by which things are compared and approved or disapproved in relation to one another held to be relatively desirable or undesirable

more meritorious or less, more or less correct

Johnson, H M , Sociology A systematic Interpretation, Macmillan Co , London, 1961, p 49

7 Values are socially approved desires and goals that are internalized through the process of conditioning, learning, socialization and that become subjective preferences, aims and aspirations

Mukerjee, R K , The Frontiers of Social Sciences B Singh, (ed) Macmillan Co , London, 1956, p 3

8 Kohs, S C , The Roots of Social Work, Association Press, New York, 1966, p 62

9 Ibid, p 64

10 Konopka, G , Edward C Lindman and Social Work Philosophy The University of Minnesota Press, Minneapolis, 1958, p 178

11 United Nations, Training for Social Work - Third International Survey, Dept of Economics and Social Affairs, New York, 1958, pp 194-195

12 Ahmad, M R , Perspectives on Social Work Philosophy, in Singh S and Soodan, K.S (ed), Horizons of Social Work Jyotsna Publications, Lucknow, 1985, pp 38-66

13 Bisno, Herbert, The Philosophy of Social Work, Public Affairs Press, Washington, D C , 1953, pp 5-111

एक व्यवसाय के रूप में समाज कार्य
(SOCIAL WORK AS A PROFESSION)

समाज कार्य एक व्यावसायिक सेवा है जो वैज्ञानिक ज्ञान एव मानव सम्बन्धो की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियो की अकेले या समूह या समुदाय मे सहायता करता है ताकि वे सामाजिक व वैयक्तिक सतुष्टि एव स्वतत्रता प्राप्त कर सके।[1] फ्रीडलैण्डर ने यह स्पष्ट रूप से कहा है कि समाज कार्य एक व्यवसाय है। सामान्यतया व्यवसाय के अन्तर्गत औषधि, कानून, प्रौद्योगिकी को सम्मिलित करते हैं और समाज कार्य ने यह रूप किस प्रकार से प्राप्त किया है अथवा उन विशेषताओं को जो इसे व्यवसाय का स्वरूप प्रदान करती हैं किस प्रकार प्राप्त किया है, यह चर्चा का विषय बन गया है। समाज कार्य का व्यावसायिक रूप उस समय से प्रारम्भ हुआ जब यह अनुभव किया गया कि वर्तमान सामाजिक समस्याओ को सुलझाने के लिए विशेष ज्ञान एव निपुणताओ की आवश्यकता है। सहानुभूति, सद्भावना, प्रेम, आदि गुणो के साथ–साथ विभिन्न निपुणताए होने पर ही इन समस्याओं से निपटा जा सकता है। इन निपुणताओ तथा ज्ञान का विकास प्रशिक्षण द्वारा ही सम्भव है तथा क्योकि लोगो की सहायता करना एक आवश्यक सामाजिक कार्य है अत जो लोग इसमें लगे हैं उन्हे उनकी सेवा के बदले मे भुगतान किया जाये।[2]

I *व्यवसाय का अर्थ (Definition of profession)*

व्यवसाय एक ऐसा कार्य है जिसका उद्देश्य जीविका उपलब्ध

कराना है, जिसमे विशिष्ट ज्ञान एव निपुणता होती है और उस व्यवसाय को करने वाले का व्यवहार दूसरो से भिन्न होता है। जोन्स, ब्राउन तथा ब्रैडशा के अनुसार व्यवसाय एक वृत्ति है जिसमे उच्चतर शैक्षिक योग्यता–एक डिग्री, डिप्लोमा या सर्टिफिकेट, की आवश्यकता होती है।[3] प्रोफेसर गोरे के अनुसार व्यवसाय को ज्ञान और निपुणताओ, कार्य करने के क्षेत्र,एक आचार सहिता तथा कुछ सीमा तक व्यवसायिक सदस्यो के संगठन के रूप मे समझा जा सकता है।[4]

मिलरसन (Millerson)[5] ने 21 ऐसे लेखो जिनमे व्यवसाय के सम्बन्ध मे लिखा गया था, का अध्ययन करने के पश्चात् व्यवसाय की निम्न विशेषताओ का वर्णन किया है

1. सैद्धान्तिक ज्ञान पर आधारित निपुणताये
2. प्रशिक्षण तथा वृत्ति का प्रावधान
3. सदस्यो की सक्षमता (Competence) का परीक्षण
4. संगठन
5. व्यवसायिक आचरण संहिता, तथा
6. परोपकारी सेवा

फ्रीडलैण्डर[6] ने व्यवसायो की शिक्षा के विकास के 3 चरणो का उल्लेख किया है :

1. अनुभवी अध्यापकों एवं अभ्यासकर्ताओ की देखरेख मे प्रशिक्षण
2. शिक्षा के लिए शिक्षा संस्थानों की स्थापना
3. विश्वविद्यालयो द्वारा व्यावसायिक शिक्षा संस्थाओ को मान्यता देना और उन्हें अपने शैक्षिक एवं एकैडमिक कार्यक्रम का भाग बनाना।

फ्लेक्सनर (Flexner) ने व्यवसाय के 6 गुणो का उल्लेख किया है

1. वैयक्तिक उत्तरदायित्व के साथ ज्ञान और विज्ञान का समावेश।

2 व्यवसाय के सदस्यो को इस बात का पूरा ज्ञान हो कि व्यवसाय सम्बन्धी क्या नवीन ज्ञान सामने आ रहा है और इस नवीन ज्ञान को समझने के लिए निरन्तर सम्मेलन आयोजित किये जाये।

3 व्यवसाय को केवल सैद्धान्तिक ही नही होना चाहिए। इसका व्यावहारिक रूप भी हो।

4 व्यवसाय मे एक प्राविधिक ज्ञान का परस्पर सम्बन्धित भडार हो और यह प्राविधिक ज्ञान व्यक्तियो को एक विशिष्ट शैक्षिक पद्धति द्वारा सिखाया जा सकता हो।

5 व्यवसाय को समाज से मान्यता प्राप्त होनी चाहिए। व्यवसाय से सबधित व्यक्तियो मे सामूहिक भावना का होना आवश्यक है। व्यवसायिक कार्यकर्ताओ को अपने कर्तव्यो एव उत्तरदायित्वो को कुशलता से निभाना चाहिए।

6 व्यवसाय का सम्बन्ध साधारण जनता से होना चाहिए, किसी व्यक्ति या समूह विशेष से नहीं। व्यवसाय को सामाजिक उद्देश्यो एव लक्ष्यो की पूर्ति का साधन बनने का प्रयास करना चाहिए।

जान्सन (Johnson)[7] ने व्यवसाय मे निम्न विशेषताओ का होना आवश्यक बताया है

1 बौद्धिक प्रशिक्षण से अर्जित विशेष सक्षमता जो न केवल यान्त्रिक कुशलताये बल्कि अन्य योग्यताए भी विकसित करती हो और जिसके लिए स्वतन्त्र एव दायित्वपूर्ण निर्णय का प्रयोग किया जाना अनिवार्य हो।

2 शैक्षिक अभिगम पर आधारित ज्ञान एव कौशल के प्रयोग के साथ एक व्यवस्थित एव विशेषीकृत शैक्षणिक विज्ञान के माध्यम से सचारित किये जाने योग्य अलग से पाई जाने वाली प्रविधियाँ।

3 व्यवसायिक कार्यकर्ता जिन्हे सामान्य बातो का ज्ञान हो और जो उच्च मानको के विकास तथा सामान्य हितो की रक्षा के लिए एक व्यवसायिक सघ के रूप मे सगठित हो।

4 व्यावसायिक सघ एक सम्पूर्ण इकाई के रूप म व्यवसाय के लिए सेवा मानको के विकास का ध्यान रखता हो। जनता के हित मे प्रयोग मे लाए जाने के लिए एक नीतिशास्त्र सहिता, विशिष्ट शिक्षा के प्रावधान और विशेषीकृत ज्ञान एव निपुणता की व्यवस्था।

5 एक व्यावसायिक व्यक्ति का अपने लिए कुछ निर्धारित मानको के लिए एक ही क्षेत्र के अन्य लोगो के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी तथा जिम्मेदार होना।

II *समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप में*
(Social work as a profession)

यहॉ पर उन गुणो का विवेचन किया जा रहा है जो समाज कार्य व्यवसाय मे उपलब्ध हैं

1. क्रमवद्ध एवं वैज्ञानिक ज्ञान
(Systematic and scientific knowledge)

समाज कार्य वेज्ञानिक ज्ञान पर आधारित हे। यह किसी कल्पना मे विश्वास नहीं रखता। यद्यपि इसका अधिकांश ज्ञान अन्य विज्ञानो से लिया गया है परन्तु वह पूरी तरह से परखा हुआ है। समाज कार्य मे निम्न प्रमुख क्षेत्रो का ज्ञान कराया जाता है .

(1) मानव व्यवहार तथा सामाजिक पर्यावरण व्यक्तित्व, इसके कारक, सिद्धान्त, सामाजिक पक्ष, तथा मनोचिकित्सकीय पक्ष, मानव सम्बन्ध, समूह, सामाजिक संस्थाये, समाजीकरण, सामाजिक नियत्रण, पर्यावरण, प्रौद्योगिकी, आदि।

(2) समाज कार्य की प्रणालिया तथा प्रविधिया · वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य, सामुदायिक संगठन, सामाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया तथा सामाज कार्य शोध।

(3) समाज कार्य के क्षेत्र बाल विकास, महिला सशक्तिकरण, युवा

कल्याण, वृद्धो का कल्याण, श्रम कल्याण, ग्राम्य विकास, नगरीय विकास, अनुसूचित एव जनजातीय कल्याण, परिवार कल्याण, सामाजिक सुरक्षा, अपराधी सुधार, आदि।

(4) सामाजिक समस्याये अपराध, बाल अपराध मद्यपान, मादक द्रव्य व्यसन, भिक्षावृत्ति, वेश्यावृत्ति, बेरोजगारी, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय एकीकरण, आदि।

समाज कार्य के विशिष्ट सिद्धान्त ये हैं वैयक्तीकरण का सिद्धान्त, स्वीकृति का सिद्धान्त, सेवार्थी के आत्म निश्चय का सिद्धान्त, गोपनीयता का सिद्धान्त, आत्मप्रकटन का सिद्धान्त, आदि। व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता को मानव व्यवहार का समुचित ज्ञान होता है। उसमे सुनने तथा अवलोकन करने की अभूतपूर्व क्षमता होती है। उसमें परानुभूति की योग्यता होती है। उसमें सेवार्थी की भावनाओ को समझने की क्षमता होती है। वह सेवार्थी की योग्यता, गरिमा एव महत्ता को स्वीकार करता है। उसका यह दृढ विश्वास है कि व्यक्ति मे समस्या समाधान की क्षमता होती है केवल उसे इसके बारे मे जागरूक करना होता है।

2. निपुणताये, प्रविधियां तथा यंत्र
(Skills, techniques and tools)

समाज कार्यकर्ता मे निपुणताओ का विकास शिक्षण तथा प्रशिक्षण द्वारा किया जाता है। समाज कार्यकर्ता कार्यक्रम की निपुणता द्वारा ही सेवार्थी के साथ उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करता है तथा किसी प्रकार्यात्मक समझौते पर पहुचता है। वह सामाजिक स्थितियो के विश्लेषण मे निपुण होता है। उसमे व्यक्तियो एव समूहो की भावनाओ को समझने तथा उनसे निपटने की क्षमता पायी जाती है। वह सेवार्थी को आत्मनिर्भर बनाने मे निपुण होता है। वह समुदाय तथा संस्था के स्रोतो एव साधनो को समयानुसार उपयोग मे लाता है। उसमे सबसे बडी निपुणता सम्बन्धो के रचनात्मक उपयोग की होती है। वह

आत्मबोधन, प्रत्यक्षीकरण समस्या विश्लेषण, व्यावसायिक सम्बन्धो का प्रयोग तथा निदान व उपचार के तरीको के उपयोग मे दक्ष होता है। कार्यकर्ता वैयक्तिक तथा सामूहिक आत्मा की चेतना के जागरण (Individual and Group conscientization) सगठन तथा नियोजन, प्रति व्यवस्था (Counter System) निर्माण तथा प्रशासनिक प्रविधियो का प्रयोग करता है। कार्यकर्ता के पास 3 पमुख यत्र होते हैं : (1) स्वय का प्रयोग, (2) कार्यक्रम नियोजन, (3) सेवार्थी के साथ सम्बन्ध। इन यत्रो का उपयोग वह समझ बूझ कर करता है।

3. समाज कार्य शिक्षा (Social work education)

समाज कार्य की शिक्षा की अलग से व्यवस्था की गई है। इसकी शिक्षा स्नातक, स्नातकोत्तर, पी-एच डी स्तर की दी जाती है। यह शिक्षा विश्वविद्यालयो के विभागो तथा स्वतन्त्र रुप से कार्यरत समाज कार्य विद्यालयो के माध्यम से दी जाती है। सिद्धान्त तथा व्यवहार दोनो प्रकार की शिक्षा दी जाती है। विद्यार्थियो को समाज कार्य अभ्यास के लिए विभिन्न संस्थाओ मे भेजा जाता है। उन्हे चिकित्सालयो, श्रम कल्याण केन्द्रो, आवास गृहो, विद्यालयो, मलिन बस्तियो, सामुदायिक विकास केन्द्रों, निर्देशन केन्द्रों आदि में क्षेत्रीय कार्य करने के लिए भेजा जाता है।

4. व्यावसायिक संगठन (Professional organization)

जैसे–जैसे समाज कार्य का विकास हुआ, वैसे–वैसे इसके व्यावसायिक सगठन भी बनते गये। इन व्यावसायिक सगठनो का कार्य समाज कार्य व्यवसाय के स्तर को ऊंचा उठाना तथा कार्यकर्ताओ मे उच्चतर योग्यताओं, क्षमताओ एव निपुणताओ का विकास करना है। ये संगठन कार्यकर्ताओं के हितो की रक्षा करते हैं तथा व्यावसायिक व्यवहार पर नियत्रण रखते हैं। अमरीका मे पाए जाने वाले प्रमुख सगठन ये हैं : अमेरिकन असोसियेशन ऑफ सोशल वर्कर्स, नेशनल असोशियेशन ऑफ सोशल वर्कर्स, अमेरिकन हास्पिटल सोशल वर्क असोशियेशन, साइक्याट्रिक सोशल वर्क असोशियेशन। भारत मे प्रमुख

व्यावसायिक सगठन है असोशियेशन ऑफ स्कूल्स आफ सोशल वर्क इन इण्डिया। महाराष्ट्र मे राज्य स्तर पर महाराष्ट्र असोशियेशन ऑफ सोशल वर्क एजूकेटर्स पाया जाता है।

5. सामाजिक अनुमोदन (Social approval)

समाज कार्य एक व्यवसाय के रूप मे सरकार द्वारा अनुमोदित है। सरकारी तथा गैर सरकारी दोनो प्रकार की सामाजिक सस्थाये समाज कार्य को सेवाये प्राप्त करती हैं। अधिकाश सस्थाओ मे प्रशिक्षित कार्यकर्ता कार्य करते हैं।

6. आचार सहिता (Code of ethics)

अमरीका मे समाज कार्यकर्ताओ के लिए एक निश्चित आचार सहिता है जिसका पालन करना सभी व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओ के लिए अनिवार्य है। इस आचार सहिता को 5 वर्गो मे विभाजित किया जा सकता है

(अ) सेवार्थियो से सम्बन्ध

1 सेवार्थी के कल्याण को समुदाय के कल्याण के अनुकूल रखना,
2 वैयक्तिक लक्ष्यो एव मतो की अपेक्षा व्यावसायिक उत्तरदायित्व को प्रधानता देना,
3 अपने विषय मे स्वय निर्णय लेने के सेवार्थी के अधिकार को स्वीकार करना,
4 सेवार्थी को गोपनीयता का आश्वासन देना
5 बिना भेदभाव के सेवार्थी की सहायता करना एव ऐसा करते समय वैयक्तिक भिन्नताओ का आदर करना।

(ब) नियोजक सस्था से सम्बन्ध

1 सस्था के कार्यक्रमो, नीतियो एव कर्मचारियो के व्यवहार का ज्ञान रखना और उनमे उन्नति करने का प्रयास करना

2 व्यावसायिक समाज कार्य की आचार सहिता के विरुद्ध नीति एव कार्यरीति वाली सस्था मे कार्य न करना

3 संस्था के साथ सेवायोजन के लिए किये गये समझौते का पालन करना

4 संस्था की नतियो एव कार्यरीतियो के निर्धारण मे कर्मचारियो को भाग लेने के अवसर उपलब्ध कराना।

(स) व्यावसायिक साथियो से सम्बन्ध

1. व्यवसायिक साथियो की स्थिति एव उनकी योग्यताओ का आदर करना

2 व्यवसायिक साथियो को अपने ज्ञान एव अनुभव से लाभान्वित करना

3 व्यवसायिक साथियो के आपसी मतभेदो का आदर करते हुए उन्हे दूर करने का प्रयास करना

4. निष्पक्षता एव विषयात्मक सूचना के आधार पर कर्मचारियो की नियुक्ति, पदोन्नति, पदच्युति, इत्यादि करना।

(द) समुदाय से सम्बन्ध

1 समुदाय की उन्नति के कार्यक्रमों मे ज्ञान एवं निपुणताओं का प्रयोग करना

2. संस्थाओ एव व्यक्तियो द्वारा समाज कार्य के अनैतिक प्रयोग से समुदायो को सुरक्षित रखना

3. व्यवसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण अनुभव एव कुशलता से समुदाय के साथ अपने सदधो को प्रभावित करना और इनकी व्याख्या करना

4. अपने कथनो को व्यक्त करते समय तथा व्यवहार करते समय यह स्पष्ट कर देना कि वे एक व्यक्ति के रूप में कहे और किये गये हैं, न किसी समिति या संस्था के प्रतिनिधि के रूप मे।

(य) समाज कार्य व्यवसाय से सम्बन्ध

1 व्यवसाय के आदर्शों का समर्थन करना और उनमे सुधार का प्रयास करना

2 एक उच्च स्तर की सेवा प्रदान करके व्यवसाय मे जनता के विश्वास को बनाये रखना और उसे बढाने का प्रयास करना

3 बाहरी न्यायहीन आक्रमणो और अनुचित प्रतिनिधित्व से व्यवसाय को सुरक्षित रखना

4 समाज कार्य एव व्यावसायिक सेवा मे विषयात्मक सुधार लाने के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना जिससे समाज कार्य को आलोचना से बचाया जा सके।

इस विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज कार्य एक पूर्ण *व्यवसाय है क्योकि उसमे व्यवसाय की सभी विशेषताये विद्यमान हैं।* परन्तु यह विश्वास केवल सिद्धान्त पर आधारित है, वास्तविकता इससे भिन्न है। आज भी अनेक विद्वानो का विचार है कि समाज कार्य व्यवसाय नही है क्योकि यह कोई ऐसा कार्य नहीं करता जो असाधारण हो। कार्यकर्ता का व्यवहार एव उसकी दक्षता कोई विशिष्ट नहीं होती। प्रशिक्षित तथा अप्रशिक्षित कार्यकर्ता में व्यावहारिक अतर स्पष्ट नहीं होता है। त्याग की भावना ही निपुणता तथा सहायता की इच्छा जाग्रत करती है, प्रशिक्षण का कोई विशेष महत्व नहीं है। कार्यकर्ता आत्म छवि को विकसित करने में असफल रहे हैं। व्यावसायिक सगठन महत्वपूर्ण भूमिका नही निभा पा रहे हैं तथा समाज कार्य का उपयुक्त वैज्ञानिक ज्ञान नही है। इन आलोचनाओ के बावजूद भी समाज कार्य व्यावसायिक विशेषताओ को धीरे–धीरे विकसित कर रहा है, इसे सभी विद्वान मानते हैं।

III *भारत में समाज कार्य की व्यावसायिक छवि (Professional image of social work in India)*

भारत मे व्यावसायिक समाज कार्य का विकास अमरीका की तरह

से ही शुरू हुआ। सन् 1936 मे पहली बार समाज कार्य के प्रशिक्षण के लिए बम्बई मे सर दोराब जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क खोला गया। तबसे समाज कार्य धीरे–धीरे व्यावसायिक रूप ग्रहण करता जा रहा हे तथा लगभग व्यवसाय की सभी विशेषताओ को प्राप्त कर चुका है। इन विशेषताओ के आधार पर हम यहा भारत मे समाज कार्य के व्यावसायिक स्वरूप की विवेचना करेगे।

1 क्रमागत एवं वैज्ञानिक ज्ञान

समाज कार्य ज्ञान मे निरन्तर वृद्धि हो रही हे। अनेक समाज कार्य के स्कूलो मे शोध की सुविधा पाई जाती है जिनमे ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र मे खोजे की जा रही हे। इसके अतिरिक्त सभी स्कूलो मे मानव व्यवहार, पर्यावरण, सस्कृति, प्रौद्योगिकी, सामाजिक विकास, आदि विषयो का अध्ययन किया जाता है। यद्यपि वैज्ञानिक ज्ञान मे वृद्धि हुई हे परन्तु भारतीय सदर्भ मे समाज कार्य की प्रणालियों एव विधियो को किस प्रकार लागू किया जाये, हम निश्चित नहीं कर सके हें। भारतीय परिस्थितियो के अनुसार समाज कार्य नहीं विकसित हो पा रहा है।

2. व्यावसायिक शिक्षा

भारत मे समाज कार्य शिक्षण सन् 1936 से प्रारंभ हुआ है। इस वर्ष बम्बई मे सर दोराब जी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ सोशल वर्क की स्थापना हुई। बाद मे इसका नाम टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस हो गया। सन् 1947 मे काशी विद्यापीठ मे समाज विज्ञान विद्यालय खुला। इसी वर्ष डेल्ही स्कूल ऑफ सोशल वर्क खुला। सन् 1949 मे लखनऊ विश्वविद्यालय मे समाज कार्य प्रशिक्षण प्रारम्भ हुआ। 1950 मे बडोदा विश्वविद्यालय मे समाज कार्य सकाय खोला गया। 1952 मे मद्रास स्कूल ऑफ सोशल वर्क तथा 1955 मे आगरा मे समाज कार्य की शिक्षा प्रारम्भ हुई। आज समाज कार्य का प्रशिक्षण बम्बई, आगरा, मद्रास, पटना, लखनऊ, वाराणसी, जमशेदपुर, कलकत्ता,

वाल्टेयर, उदयपुर, भागलपुर, बगलौर, मगलौर, इन्दौर कोयम्बटूर, कर्नाटक, आदि स्थानो पर होता है। वर्तमान समय मे 60 से अधिक विद्यालय एव सस्थाये समाज कार्य प्रशिक्षण प्रदान कर रही है। कुछ सस्थानो मे स्नातक, कुछ मे स्नातकोत्तर तथा कुछ मे दोनो स्तर की शिक्षा दी जाती है। पी-एच.डी. की उपाधि के लिए भी व्यवस्था है। दो सस्थानो मे डी.लिट की उपाधि भी दी जाती है। इस दृष्टि से भारत मे समाज कार्य व्यवसाय के रूप मे खरा उतरता है।

3. निपुणताये एवं प्रणालियां

भारतीय समाज कार्यकर्ता के पास अमरीका मे प्रयोग मे लाई जाने वाली निपुणताये हैं। ये भारतीय परिवेश मे प्रासगिक नहीं सिद्ध हो रही है। जिन विशेष प्रविधियो तथा निपुणताओ की आवश्यकता है उनका विकास अभी नही हो पाया है। सामाजिक क्रिया की प्रविधि, आत्मा को जागृत करने की प्रविधि, विचारो मे क्रान्ति लाने की प्रविधि, सप्रेषण की प्रविधि, आदि प्रविधियो के विकसित किए जाने की आवश्यकता है। इसी प्रकार प्रणालियो को भी भारतीय रूप प्रदान किए जाने की आवश्यकता है।

4. आचार सहिता

भारत मे आचार सहिता के विकास का उत्तरदायित्व असोशिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इडिया को 1960 मे सौपा गया था। असोशिएशन के निम्नलिखित कार्य हैं

(1) समाज कार्य की व्यवसायिक शिक्षा का स्तर ऊचा करना।

(2) समाज कार्य को वैज्ञानिक आधार प्रदान करना।

(3) सकाय के अध्यापको को आपस मे मिलने तथा विचारो के आदान–प्रदान का अवसर देना।

(4) सगोष्ठियो तथा पुनश्चर्या पाठ्यक्रमो (Refresher Courses) को आयोजित करना।

(5) अनुसधान को वढावा देना।

(6) समाज कार्य का साहित्य प्रकाशित करना।

(7) राष्ट्रीय फोरम के रूप मे कार्य करना।

वर्तमान समय मे टाटा इन्सटीटयूट ऑफ सोशल साइन्सेज के प्रयास से एक आचार सहिता का निर्माण हुआ है जिसे अल्यूमनाई असोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इडिया ने स्वीकार कर लिया है।

5. सामाजिक मान्यता एवं अनुमोदन

भारत मे समाज कार्य को धीरे–धीरे मान्यता प्राप्त हो रही है। कारखाना अधिनियम के अनुसार उन कारखानो मे जिनमें श्रमिको की संख्या 500 से अधिक है श्रम कल्याण अधिकारी का नियुक्त किया जाना अनिवार्य है। वाल विकास, महिला सशक्तिकरण, परिवार कल्याण, आदि क्षेत्रो मे भी समाज कार्य मे प्रशिक्षित लोगो को वरीयता दी जाती है। चिकित्सालयों मे समाज कार्यकर्ता नियुक्त किये जाते हैं। शोध कार्यो मे भी समाज कार्य मे प्रशिक्षित व्यक्तियो को प्राथमिकता दी जाती है। लेकिन यह मान्यता वहुत निर्वल है। दुर्भाग्य से वर्तमान समय मे कोई भी ऐसा पद नहीं है जो पूर्णरूपेण समाज कार्य मे प्रशिक्षित व्यक्तियो के लिए आरक्षित हो। आज जहां कहीं भी प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओ की नियुक्ति के अवसर होते हैं वहां पर दूसरे विषयो के लोगो को भी चयनित कर लिया जाता है।

6. व्यावसायिक संगठन

सन् 1951 मे इंडियन असोसियेशन ऑफ अलुमनाई ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क वनाया गया जिसका सन् 1964 में नाम बदल कर इडियन एसोशियेशन ऑफ ट्रेण्ड सोशल वर्कर्स कर दिया गया। इसकी शाखाये वम्बई, चंडीगढ, कोयम्वटूर, दिल्ली, हैदरावाद, इदौर, जमशेदपुर, मद्रास, नागपुर, त्रिवेन्द्रम, उदयपुर, बनारस, वाल्टेयर तथा

लखनऊ मे थी। सन 1960 मे एसोशियेशन आफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इडिया का गठन किया गया जिसका उददेश्य समाज कार्य शिक्षा को प्रोत्साहन देना है। असोसियेशन ऑफ मेडिकल एण्ड साइक्याट्रिक सोशल वर्क भी समाज कार्य व्यवसाय की सहायता कर रहा है। इसके अतिरिक्त समाज कार्य के विद्यालयो के स्तर पर भी सगठन बनाए गए है जो समाज कार्य के हितो की रक्षा कर रहे हैं।

इस प्रकार भारत मे समाज कार्य धीरे–धीरे व्यावसायिक गुणो को अर्जित करता जा रहा है। लेकिन व्यवसायीकरण की गति धीमी है। इसके अनेक कारण हैं और यदि इन कारणो को दूर नही किया गया तो समाज कार्य की स्थिति और अधिक बिगड जायेगी।

IV *भारत मे समाज कार्य व्यवसाय के रूप मे विकास की धीमी गति के कारण* ***(Reasons for the slow development of social work as profession in India)***

व्यवसाय के रूप मे भारत मे समाज कार्य आज भी बाल्यावस्था मे है। किन्तु इसका व्यावसायिक रूप अभी तक विकसित नहीं हो सका है। कुछ लोगो के मन मे यह आशका है कि क्या समाज कार्य मे कोई विशेष सैद्धान्तिक ज्ञान एव प्रत्यय हैं जिनके आधार पर इसे एक विद्या विशेष या ज्ञान की शाखा समझा जाये। समाज कार्य का सबध मानव अन्त करण से है। समाज कार्य करने के लिए यह आवश्यक है कि समाज कार्यकर्ता अपनी सोच एव व्यवहार मे मानवतावादी तथा प्रजातान्त्रिक हो। उसमे परानुभूति की क्षमता हो तथा दूसरो को सहायता प्रदान करने की भावना एव वचनबद्धता हो। वह स्वय कष्ट उठाकर पीडित मानवता को दु खो से छुटकारा दिलाने के त्याग तथा बलिदान करने की इच्छा हो। वाह्य प्रशिक्षण मात्र से समाज कार्य के लिए आपेक्षित गुणो को अर्जित नही किया जा सकता है। समाज कार्य का आधुनिक अर्थ समाज कार्यकर्ताओ को भी भमित किये हुये है। यद्यपि यह सत्य है कि व्यावसायिक समाज कार्यकर्ता अपनी सेवाओ के लिए पारितोषिक लेता है किन्तु यह भी

सत्य है कि वह पूर्ण निष्ठा एव लगन के साथ अपने सेवार्थी की सहायता करता है।

यह बडे दुर्भाग्य की बात है कि भारत मे व्यवसाय के रूप मे समाज कार्य का प्रारम्भ ठीक से नहीं हुआ। समाज कार्य का दर्शन, सिद्धान्त, प्रणालियॉ, प्रविधिया, इत्यादि उसी रूप मे भारत मे समाज कार्य के विद्यालयो मे स्वीकार कर ली गयी हैं जैसी वे अमरीका मे हैं। अमरीका पूजीवादी देश हैं तथा वहा की सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था व्यक्ति केन्द्रित उपागम के अनुकूल है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था उससे भिन्न है। यहा पर बहुसख्यक समस्याओ की जडे सामाजिक सरचना मे सन्निहित हैं इसलिए इसमे अपेक्षित परिवर्तन लाने के पश्चात् ही इनका समाधान किया जा सकता है। इसके बावजूद भी समाज कार्य स्कूलो मे वैयक्तिक उपागम को स्वीकार किया है। इसीलिए समाज कार्य का अभ्यास ठीक प्रकार से नहीं हो पा रहा है।

भारत मे समाज कार्य के अर्थ के विषय मे ही आज तक भ्रम बना हुआ है। कभी यह परोपकार का कार्य समझा जाता है। कभी इसे दान के रूप मे देखा जाता है। कभी इसे चरित्र निर्माण, नि:स्वार्थ सेवा श्रमदान अथवा आपात्कालीन सेवा के रूप मे समझा जाता है। ऐच्छिक शारीरिक श्रम को भी समाज कार्य की श्रेणी मे माना जाता है। इसी प्रकार समाज कार्यकर्ता के अर्थ के विषय मे भ्रम है। समाज सुधारक, दानी, परोपकारी, स्वैच्छिक कार्यकर्ता तथा नेता सभी को समाज कार्यकर्ता कहा जाता है तथा वे अपने कार्यो को समाज कार्य कहते है। परिणामत आधुनिक समाज कार्य का व्यवसायिक रूप उभरने मे कठिनाई हो रही है।

भारतीय सदर्भ मे शिक्षण सामग्री का नितान्त अभाव है। जो भी पुस्तके उपलब्ध हैं वे पश्चिमी देशो की शिक्षा के आधार पर रची गयी हैं। उनका यहा पर औचित्य स्थापित नही हो पा रहा है। सिद्धान्त तथा व्यवहार मे काफी अन्तर है। कक्षाओ मे उन सिद्धान्तो को बताया जाता है जो पश्चिमी देशों के लिए प्रामाणिक है लेकिन वे सिद्धान्त

भारत मे लागू नहीं हो पा रहे हैं। उदाहरण के लिए, अमरीकी पुस्तके इस मूल मान्यता के आधार पर लिखी गयी हैं कि सेवार्थी स्वय सस्था मे आता है और सेवा प्राप्त करने की प्रार्थना करता है। लेकिन भारत मे यह स्थिति नही है। यहा पर विद्यार्थियो को लोगो को, विशेष रुप से निरक्षर एव अज्ञानियो को, सस्था की सेवा लेने के लिए प्रेरित करना पडता है। इन सभी कारणो से विद्यार्थी निराशा का सामना करते हैं और स्वय मे परिपक्व नहीं हो पाते हैं।

समाज कार्य मे विशेषीकृत क्षेत्र का अभी भी अभाव है। इस दिशा मे कुछ प्रयत्न किये गये हैं लेकिन इनसे यह पता नहीं चलता है कि यह कार्य समाज कार्य व्यवसाय मे प्रशिक्षित व्यक्ति ही कर सकता है। भारतीय परिस्थिति के अनुकूल कार्य की प्रणालियो का विकास नहीं हो पाया है जिससे प्रयास एव त्रुटि (Trial and Error) का सिद्धान्त सदैव लागू किया जाता है।

समाज कार्य के व्यावसायिक सगठन भी प्रभावपूर्ण ढग से कार्य नही कर रहे हैं। ये समाज कार्य को व्यवसायिक रूप देने मे विशेष रुचि नहीं ले रहे हैं। इन सगठनो का कार्य इतना सकुचित है कि समाज कार्यकर्ता स्वय इनके अस्तित्व को समझ नही पा रहे हैं।

सबसे महत्वपूर्ण कारक समाज कार्यकर्ताओ मे लगनशीलता एव कर्तव्यपरायणता की कमी है। उनमे मानवतावादी दृष्टिकोण नहीं है जिससे वे प्राय अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ करने मे लगे रहते हैं। वे व्यावसायिक आचार सहिता को ताख पर रखकर अपने स्वार्थ की पूर्ति मे लगे हुए हैं। परिणामस्वरुप यह खतरा उत्पन्न हो गया है कि कही समाज कार्य अपना व्यावसायिक स्वरूप ही न खो दे और सामान्य जनता मे इसकी बची–खुची साख भी समाप्त हो जाये। समाज कार्यकर्ताओ को विशेष लगन एव निष्ठा से कार्य करना होगा तभी समाज कार्य अपना व्यावसायिक रूप ग्रहण कर सकेगा।

सन्दर्भ

1 Fnedlander, W A , Introduction to Social Welfare, op cit , p 4

2 Ranade, S N , "Trends in Social Work" in Khinduka, S K (ed) Social Work in India, op cit., pp 206-207

3 A profession is an occupation which requires a higher educational qualification - a degree, diploma or certificate

Jones, K , Brown, J and Bradshaw, J , Issues in Social Policy, Routledge and Kegan Paul Ltd , London, 1978, p 60

4 A profession is characterized by a specialized body of knowledge and skills, an area of operations, a code of ethics, and a certain degree of organization among the members of the profession

Gore, M S , Social Work and Social Work Education, Asia Publishing House, Bombay, 1965, p 86

5 Millerson, G , The Qualifying Associations, Routledge and Kegan Paul Ltd , London, 1964

6 Fnedlander, W A , Introduction to social welfare, op cit , p 620

7 Johnson, A , Quoted by Fnedlander, W A., Introduction to social welfare op cit, pp 620-21

8 Ahmad Mirza, R , Samaj Karya, Darshan Avam Pranaliya, op cit , pp 168-70

वैयक्तिक समाज कार्य
(SOCIAL CASEWORK)

समाज कार्य की 6 प्रणालिया हैं जिनका प्रयोग करते हुये सेवार्थियो की सहायता की जाती है। इन प्रणालियो को दो श्रेणियो मे वर्गीकृत किया गया है

(1) प्राथमिक प्रणालिया (Primary methods) जिनके अन्तर्गत वैयक्तिक समाज कार्य, सामूहिक समाज कार्य तथा सामुदायिक सगठन को सम्मिलित किया गया है, तथा

(2) द्वितीयक (Secondary methods) अथवा सहायक प्रणालिया जिनके अन्तर्गत समाज कल्याण प्रशासन, सामाजिक क्रिया और समाज कार्य शोध को रखा गया है।

वैयक्तिक समाज कार्य एक व्यक्ति के रूप मे मनो–सामाजिक समस्याओं से ग्रस्त सेवार्थी को सहायता प्रदान करने की प्राथमिक प्रणाली है जिसका प्रयोग करते हुये कार्यकर्ता सेवार्थी की क्षमताओ मे विकास करते हुये उसे अपनी समस्या का समाधान कर समायोजन स्थापित करने के योग्य बनाता है।

I *वैयक्तिक समाज कार्य की परिभाषा (Definition of social casework)*

समय–समय पर विभिन्न विद्वानो द्वारा वैयक्तिक समाज कार्य की भिन्न–भिन्न परिभाषाये प्रदान की गयी हैं जो एक काल एव स्थान

विशेष पर वैयक्तिक समाज कार्य के सम्बन्ध मे पाये जाने वाले ज्ञान का परावर्तन करती हैं।

(1) मेरी रिचमण्ड (1915)

वैयक्तिक समाज कार्य "विभिन्न व्यक्तियों के साथ सहयोग करते हुये उनकी अपनी तथा समाज की एक साथ भलाई प्राप्त करने हेतु उनके साथ विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने की एक कला है।"[1]

(2) मेरी रिचमण्ड (1917)

वैयक्तिक समाज कार्य "व्यक्ति के रूप मे पुरुषो तथा स्त्रियो अथवा बच्चो के सामाजिक सम्बन्धो मे अधिक अच्छे समायोजन लाने की एक कला है।"[2]

(3) टैफ्ट (1920).

वैयक्तिक समाज कार्य "व्यक्ति के व्यक्तित्व, व्यवहार और सामाजिक सम्बन्धो को समझने तथा एक अधिक अच्छे सामाजिक एव वैयक्तिक समायोजन को लाने मे उसकी सहायता करने के प्रयासयुक्त कुसमायोजित व्यक्ति का सामाजिक उपचार है।"[3]

(4) मेरी रिचमण्ड (1922).

वैयक्तिक समाज कार्य का अर्थ "ऐसी प्रक्रियाओ जो व्यक्तियो एव उनके सामाजिक पर्यावरण के बीच एक–एक करके चेतन रूप से लाये गये समायोजन के माध्यम से व्यक्तित्व का विकास करती हैं से है।"[4]

(5) स्वीथन वावर्स (1949)

"वैयक्तिक समाज कार्य एक ऐसी कला है जिसके अन्तर्गत मानव सम्बन्धो के विज्ञान के ज्ञान तथा सम्बन्ध की निपुणता का प्रयोग व्यक्ति की उपयुक्त क्षमताओ तथा समुदाय के ससाधनो को सेवार्थी तथा उसके सपूर्ण पर्यावरण के समस्त अगो अथवा

किसी अग के बीच अधिक अच्छे समायोजन के लिये गतिशील बनाने हेतु किया जाता है।"[5]

(6) देसाई (1956)

वैयक्तिक समाज कार्य "व्यक्ति की न केवल यथास्थिति के साथ समायोजन करने बल्कि परिवर्तन तथा नये–नये स्तरो पर अपने परिवर्तित होते हुये पर्यावरण के साथ सश्लेषण करने की प्रक्रिया मे सक्रिय भागीदार बनने मे सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया है।"[6]

(7) पर्लमैन (1957)

"वैयक्तिक समाज कार्य कुछ मानव कल्याण अभिकरणो द्वारा व्यक्तियो की सामाजिक क्रिया मे अपनी समस्याओ का अधिक प्रभावपूर्ण रूप से समाधान करने मे सहायता प्रदान करने हेतु प्रयोग मे लायी जाने वाली एक प्रक्रिया है।"[7]

उपरिलिखित परिभाषाओ पर विश्लेषणात्मक दृष्टि डालने पर यह पता चलता है कि वैयक्तिक कार्य सर्वप्रथम मेरी रिचमण्ड द्वारा एक कला के रूप में वर्णित किया गया जिसका उद्देश्य अपना तथा समाज की उन्नति करना था। तदुपरान्त टैफ्ट ने वैयक्तिक समाज कार्य को एक सामाजिक चिकित्सा के रूप मे चिन्हित करते हुये इसका उद्देश्य अधिक अच्छा वैयक्तिक एव सामाजिक समायोजन बताया। बाद मे वैयक्तिक समाज कार्य को एक प्रक्रिया के रूप मे स्वीकार कर लिया गया तथा इस प्रक्रिया के दौरान किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के कार्यो तथा अगभूतो का निरूपण करते हुये समायोजन लाने को प्रोत्साहित करने के अतिरिक्त परिवर्तन की प्रक्रिया मे सक्रिय रूप से भाग लेने के उद्देश्य पर भी बल दिया जाने लगा।

इन परिभाषाओ के आधार पर निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि वैयक्तिक समाज कार्य एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे मनो–सामाजिक समस्या के शिकार एक व्यक्ति का मनो–सामाजिक अध्ययन निदानात्मक मूल्याकन तथा परामर्श मनोपचार, पर्यावरण मे

परिवर्तन एव सेवाओ के प्रावधान के माध्यम से उपचार करते हुये समस्या का समाधान कर सेवार्थी का उसके पर्यावरण के साथ सर्वोत्तम सम्भव समायोजन कराने का प्रयास किया जाता है ताकि वह सामाजिक क्रिया मे प्रभावपूर्ण रूप मे सम्मिलित हो सके और व्यक्तिगत स्तर पर सुख एव शान्ति का अनुभव कर सके।

II *वैयक्तिक समाज कार्य के अंगभूत* *(Elements of social casework)*

पर्लमैन के अनुसार वेयक्तिक कार्य का मूल बिन्दु इस प्रकार हे "एक समस्याग्रस्त व्यक्ति एक स्थान पर आता है जहा एक व्यावसायिक प्रतिनिधि एक दी हुई प्रक्रिया द्वारा उसकी सहायता करता है।" इस कथन से यह सुस्पष्ट हे कि वैयक्तिक समाज कार्य के 4 अगभूत होते हें .

1. व्यवित (Person)

यह व्यक्ति एक पुरुष, स्त्री अथवा बच्चा कोई भी हो सकता है जिसे अपने जीवन के किसी सामाजिक सवेगात्मक पहलू मे सहायता की आवश्यकता होती है। इस व्यवित का व्यक्तित्व एक सम्पूर्णता के रूप मे पाया जाता है। उसके व्यक्तित्व के सभी भौतिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सास्कृतिक, इत्यादि पहलू एक दूसरे के साथ एकीकृत रूप से सम्बद्ध होते हैं। यह व्यक्तित्व अतीत के अनुभवो, वर्तमान के प्रत्यक्षीकरणो एव प्रतिक्रियाओ और भावी आशाओ एवं प्रत्याशाओ का सगम होता हे। व्यक्ति द्वारा किये गये व्यवहार का उद्देश्य संतोष प्राप्त करना, निराशा से बचना अथवा इसे कम करना और व्यक्तित्व के संतुलन को बनाये रखना होता हे। व्यक्ति के कल्याण को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से उसके व्यवहार की क्षमता बहुत कुछ सीमा तक उसकी व्यक्तित्व सम्बन्धी संरचना की कार्य प्रणाली पर निर्भर करती है।

सहायता के लिये आने वाला व्यक्ति सदैव समस्याओ (Problems) से युक्त होता है। ये समस्याएँ उसके पर्यावरण की असफलता

अथवा दबावो, व्यक्ति के अन्दर चलने वाले आन्तरिक संघर्ष, किसी महत्वपूर्ण सामाजिक भूमिका को प्रतिपादित करने की निराशा अथवा उसके लक्ष्य एव सामर्थ्य के बीच आने वाले व्यवधानो के कारण उत्पन्न हो सकती हैं। उसकी यह समस्या द्विनुखी होती है (1) वह स्वय समस्या का एक खतरे अथवा आक्रमण के रूप मे अनुभव करता है, तथा (2) उसकी इस समस्या पर काबू पाने मे असमर्थता उसके तनाव को बढाती है।

2. समस्या (Problem)

समस्याये अनेक प्रकार की हो सकती हैं। इनका स्वरूप शारीरिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सास्कृतिक, इत्यादि हो सकता है। वैयक्तिक समाज कार्य के क्षेत्र मे केवल वही समस्याये आती हैं जो व्यक्ति की सामाजिक क्रिया को गम्भीर रूप से प्रभावित करती हैं अथवा उसकी सामाजिक क्रिया से गभीर रुप से प्रभावित होती हैं।

मानव जीवन के किसी भी पहलू से सम्बन्धित समस्याओ की श्रृखलाबद्ध प्रक्रिया होती है अर्थात वह व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओ पर अपना प्रभाव डालती हैं। प्रत्येक समस्या का विषयात्मक तथा रागात्मक दोनो प्रकार का महत्व होता है। ये दोनो प्रकार के विषयात्मक (वाह्य) तथा रागात्मक (आन्तरिक) पहलू न केवल एक साथ पाये जाते हैं बल्कि इनमे से एक दूसरे का कारण भी हो सकता है।

एजेन्सी मे सहायता के लिये आने वाले व्यक्ति की समस्या की प्रकृति चाहे जो भी हो, इसके साथ सदेव उसके सेवार्थी होने की समस्या सम्बद्ध होती है और यह इसे प्राय और अधिक गभीर बनाती हैं। एजेन्सी मे सहायता के लिये जाना, उसके द्वारा निर्धारित पात्रता की शर्तों की पूर्ति करना, सेवाओ के लिये पात्र पाये जाने पर एजेन्सी द्वारा निर्धारित किये गये समय पर सेवाओ को प्राप्त करने के लिये जाना, इत्यादि समस्याये व्यक्ति की मौलिक समस्या को अधिक गभीर बना देते हैं।

3. स्थान (Place)

समस्याग्रस्त व्यक्ति जिस स्थान पर सहायता के लिये आता है उसे सामाजिक एजेन्सी के नाम से संबोधित करते हैं। सामाजिक एजेन्सिया एक दूसरे से भिन्न होती हैं क्योकि इनके वित्तीय स्रोत भिन्न होते हैं, व्यावसायिक निपुणता के स्रोत भिन्न होते हैं तथा इनके विशिष्ट कार्य एव क्षेत्र भिन्न होते हैं। ये संस्थाये सरकारी राजस्व अथवा ऐच्छिक अशदानो अथवा दोनो पर आधारित हो सकती हैं। ऐसी एजेन्सिया जिनकी सम्पूर्ण वित्तीय व्यवस्था सरकारी राजस्व से की जाती है, सरकारी एजेन्सियो के नाम से जानी जाती हैं तथा वे एजेन्सियां जो पूर्णरूपेण स्वैच्छिक अशदानो अथवा प्रमुख रूप से ऐच्छिक अशदानो के साथ-साथ आशिक रूप से सरकारी राजस्व से प्राप्त वित्तीय सहायता का उपयोग करते हुये चलायी जाती हैं, उन्हे निजी संस्थाओ के रूप मे सम्बोधित किया जाता है।

कुछ एजेन्सियां ऐसी होती हैं जिनके पास अपने समाज कल्याण सम्बन्धी प्रकार्यों का पूर्ण अधिकार एवं दायित्व होता है इन्हे प्राथमिक एजेन्सियो के नाम से सम्बोधित किया जाता है। कुछ एजेन्सियां ऐसी होती हैं जो अपने अधिकारों एवं दायित्वो को पोषक एजेन्सी से प्राप्त करती हैं। इन एजेन्सियो को द्वितीयक एजेन्सियो की संज्ञा प्रदान की जाती है।

कुछ एजेन्सियां बहु उद्‌देशीय होती हैं। वे अनेक क्षेत्रो में सेवायें प्रदान करती हैं। उदाहरण के लिये, एक बाल कल्याण संस्था बच्चो के पोषण गृह के रूप मे कार्य कर सकती है, बच्चों के गोद लेने मे सहायता प्रदान कर सकती है, बच्चों को मार्गदर्शन दे सकती है, बच्चो को स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवायें प्रदान कर सकती है, इत्यादि। कुछ संस्थाये ऐसी होती हैं जो किसी एक विशिष्ट उद्‌देश्य प्राप्ति के लिये कार्य करती हैं।

4. प्रक्रिया (Process)

वैयक्तिक समाज कार्य प्रक्रिया वास्तव मे समस्या समाधान की

प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के कार्यक्षेत्र को समझने के लिये यह आवश्यक है कि उन व्यवधानों को भली प्रकार समझ लिया जाये जो लोगो के समस्या समाधान के सामान्य प्रयासो मे घटित होते हैं। ये व्यवधान सामान्यतया 6 प्रकार के होते हैं

(i) समस्या–समाधान के लिये आवश्यक साधनो एव ससाधनो का उपलब्ध न होना,

(ii) समस्या अथवा इसके समाधान के वर्तमान ढगो से सम्बन्धित तथ्यों के सम्बन्ध में अज्ञानता अथवा निराधार शकाओ का पाया जाना,

(iii) समस्याग्रस्त व्यक्ति मे अपेक्षित सवेगात्मक अथवा शारीरिक ऊर्जा का न पाया जाना,

(iv) चेतन नियत्रणो के ऊपर सवेगो का आवश्यकता से अधिक प्रभाव होना,

(v) समस्या का व्यक्ति के अन्दर ही पाया जाना अर्थात व्यक्ति का ऐसे सवेगो का शिकार हो जाना जो एक लम्बे समय तक उसकी सोच तथा कार्यो को नियन्त्रित करते रहे हो, तथा

(vi) व्यक्ति मे सोचने अथवा योजना बनाने की क्रमबद्ध आदतो अथवा ढगों का न पाया जाना।

वैयक्तिक समाज कार्य प्रक्रिया का उद्देश्य सेवार्थी को उसकी एक अथवा अनेक समस्याओ के साथ कार्य करने अथवा समाधान करने मे लगाना है और इस कार्य को ऐसे साधनो के द्वारा सम्पादित कराना है कि वह भविष्य मे अपने जीवन मे अधिक अच्छी स्थिति मे रह सके। ये साधन उपचारात्मक सम्बन्ध के प्रावधान, क्रमबद्ध ढग के प्रावधान तथा समस्या के प्रति अनुकूलनपूर्ण क्रिया को प्रोत्साहित करने वाले अवसरो एव सहायताओ के रूप मे प्रमुखता से पाये जाते हैं।

III वैयक्तिक समाज कार्य का विकास
(Development of social casework)

समस्याग्रस्त व्यक्ति को वैयक्तिक स्तर पर सेवायें प्रदान करने का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना मानव सभ्यता का। सभी प्राचीन धर्मो मे समस्याग्रस्त व्यक्तियो को सहायता प्रदान करने के कार्य को प्रोत्साहन दिया जाता था। चाहे हिन्दू दर्शन हो, या पाश्चात्य दर्शन, चाहे बेबीलोनिया तथा मिस्र की धार्मिक संहितायें हो, चाहे यूनान तथा रोम की धार्मिक प्रथाये हो, इन सबमे समस्याग्रस्त व्यक्तियो की सहायता को एक प्रमुख स्थान प्रदान किया गया था। वैयक्तिक समाज कार्य की प्रारम्भिक अवस्था मे वैयक्तिक स्तर पर सहायता प्रमुख रूप से आर्थिक समस्याओ के शिकार व्यक्तियो को प्रदान की जाती थी किन्तु कालचक्र मे परिवर्तन के साथ-साथ वैयक्तिक समाज कार्य सहायता का सम्बन्ध व्यक्ति की आन्तरिक तथा वाह्य समाज से सम्बन्धित कठिनाइयो से हुआ। 1601 मे इलिजाबेथेन पूअर लॉ (Elizabethen Poor Law) से सम्बन्धित निरीक्षक निर्धनो को सहायता प्रदान करने के लिये प्रार्थनापत्र देते थे, उनकी परिस्थितियो की जांच करते थे और इसके आधार पर यह निर्णय लेते थे कि सहायता प्रदान की जाये अथवा नहीं और यदि सहायता दी जाये तो उसका स्वरूप क्या हो? टामस चामर्स ने अपने अनुभवो के आधार पर दान की इस पद्धति की कटु आलोचना की क्योंकि यह निर्धनो का चारित्रिक पतन करती थी और उनकी स्वावलम्बन की इच्छा को निर्बल बनाती थी। चामर्स ने वैयक्तिक आधार पर जाच किये जाने पर बल दिया। उनका यह विचार था कि व्यक्ति मे पायी जाने वाली अज्ञानता एव दूरदर्शिता की कमी निर्धनता को उत्पन्न करती है। उन्होंने व्यक्तिगत कमियों को ही निर्धनता का प्रमुख कारण माना। उनकी यह धारणा थी कि निराश्रितो को सहायता प्रदान करने की प्रक्रिया मे वैयक्तिक रूप से ध्यान दिया जाना आवश्यक है। चामर्स के इन अग्रगामी विचारो के काफी समय बाद लदन चेरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी ने सहायता का एक कार्यक्रम बनाया जो प्रमुख रूप से चामर्स के विचारो पर

आधारित था। इस आन्दोलन की आधारभूत विचारधारा यह थी कि सार्वजनिक निर्धन सहायता अपने उद्देश्यो की प्राप्ति मे असफल रही और सहायतार्थी का इस प्रकार पुनर्वास होना चाहिए कि वह अपना और अपने परिवार का उचित रूप से भरण पोषण कर सके। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी के आयोजन मे इस बात की व्यवस्था की गयी कि निर्धनो के घर जाकर उनका निरीक्षण किया जाये, उन्हे परामर्श प्रदान किया जाये, अनुचित कार्यो को करने से रोका जाये ओर उन्हे आर्थिक सहायता प्रदान की जाये। परिणामत निर्धनो के पुनर्वास के पूर्व उनकी परिस्थितियो की सावधानी से जाच करना तथा उनकी समस्या के सबध मे स्वय तथा उनके सबधित लोगो से विचार विमर्श करना आवश्यक माना जाने लगा। निर्धनो तथा अभावग्रस्त व्यक्तियो को सहायता प्रदान किये जाने के इतिहास मे एक ऐसा ऐतिहासिक मोड है जहा से वैयक्तिक समाज कार्य का उद्गम होता है।

वैयक्तिक समाज कार्य शब्द का पहली बार उल्लेख एडवर्ड टी डेवाइन के लेख मे हुआ जो उन्होने चैरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटी के सेक्रेटरी होने के बाद 1897 मे प्रकाशित किया। 1909 मे मेरी के० रिम्कोविच जो ग्रीनविच हाउस, न्यूयार्क मे थी, ने यह सुझाव दिया कि पुनरर्थापन की आवश्यकता रखने वाले परिवारो के साथ वैयक्तिक समाज कार्य अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है। 1895 से लेकर 1920 के बीच मेरी रिचमण्ड के अनेक लेख प्रकाशित हुये। 1917 मे पहली बार मेरी रिचमण्ड ने अपनी पुस्तक सोशल डाइगनाशिस मे वैयक्तिक समाज कार्य के सम्बन्ध मे एक सुव्यवस्थित मत प्रस्तुत किया जिससे वैयक्तिक समाज कार्य को एक वैज्ञानिक आधार प्राप्त हुआ।

चिकित्सा के क्षेत्र मे वैयक्तिक समाज कार्य

वैयक्तिक समाज कार्य का चिकित्सालयो मे उपयोग 19वीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों मे प्रारम्भ हो गया था। 1893 मे हेनरी स्ट्रीट सेटिलमेंट

हाउस, न्यूयार्क की विलियम लायड मेरी ब्रेवेस्टर ने रोगियों के घरों पर जा–जाकर निरीक्षण करना प्रारम्भ कर दिया था। उन्होंने अपने सेवाकार्य के दौरान इस बात का अनुभव किया कि रोगियों की बीमारी के कारण उनके घरो मे अनेक ऐसी समस्याये उत्पन्न हो जाती हैं जिनका व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनो ही स्तरो पर समाधान किया जाना महत्वपूर्ण होता है। इन्हीं अनुभवो के आधार पर रोगियों के घरों मे प्रभावपूर्ण सेवाकार्य हेतु घर पर जाने वाली परिचारिकाओ की व्यवस्था की गयी। डा रिचर्ड सी कैबोट तथा होडा एम कैनन ने वैयक्तिक समाज कार्य की आवश्यकता का विशेष रूप से अनुभव किया तथा इसके विकास की दिशा में अपने भरसक प्रयास किये। डा केबोट ने बोस्टन के मैसचुसेट्स जनरल हास्पिटल मे काम करते हुये इस बात का अनुभव किया कि रोगियो को न केवल रोग सम्बन्धी समस्याये होती हैं बल्कि ऐसी अन्य अनेक समस्याये भी होती हैं जो रोगी को असहाय बना देती हैं। डा कैबोट को एक दस वर्षीय बालक के चिकित्सालय में भर्ती होने, ठीक होकर चले जाने, पुन भर्ती होने तथा पुन. ठीक होकर चले जाने की पुनरावृत्ति की प्रक्रिया ने वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता की नियुक्ति के लिये ठोस आधार प्रदान किया जिसका कार्य रोगियो तथा उनके परिवार मे सदस्यो को आवश्यक दिशा निर्देश प्रदान करना, उनकी सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करना तथा उनकी आवश्यकतानुसार समस्याओ के समाधान के लिये सहयोग प्रदान करना था। डा. कैयोट ने अपने अनुभवों के आधार पर इस बात का निष्कर्ष निकाला कि सामाजिक परिस्थितियों का उचित रूप से अध्ययन किये बिना रोगी का समुचित उपचार नहीं किया जा सकता। उन्हीं की सलाह पर 1905 में बोस्टेन के मैसाचुसेट्स हास्पिटल मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता की नियुक्ति की गयी।

मनश्चिकित्सा के क्षेत्र मे वैयक्तिक समाज कार्य

वैयक्तिक समाज कार्य के ढगो-तथा कार्य प्रणाली पर मनोविज्ञान

तथा मनोविकार विज्ञान में होने वाले विकास तथा उनकी बढती हुई आवश्यकता का गंभीर प्रभाव पड़ा है। जे.स्टैनली के बाल विकास संबंधी अध्ययन, विनेट तथा साइमन द्वारा विकसित किये गये बुद्धिलब्ध संबंधी परीक्षण, हैवलक इलिस के यौन समस्याओं से संबंधित शोध, सिगमण्ड फ्रायड के मनोविश्लेषण संबंधी विचार, ऑटो रैंक तथा जुग के प्रकार्यात्मक विचार जैसे अनेक महत्वपूर्ण कारकों का वैयक्तिक समाजकार्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मनश्चिकित्सा के क्षेत्र में वैयक्तिक समाज कार्य के 4 उद्गम स्रोत रहे हैं

(1) मनोरोग चिकित्सा कक्षों तथा मानसिक चिकित्सालयों में रोगियों के साथ वैयक्तिक स्तर पर किये गये कार्य तथा प्रदान किया गया अनुरक्षण

(2) बाल कार्यालयों में आने वाले मामलों तथा बाल निर्देशन चिकित्सा केन्द्रों और सामाजिक समस्याओं के उपचार तथा समायोजन हेतु भेजे गये बालकों एव किशोरों के साथ वैयक्तिक स्तर पर किये गये कार्य,

(3) मानसिक स्वास्थ्य क्लीनिकों म वयस्क रोगियों के साथ वैयक्तिक स्तर पर किये गये कार्य, तथा

(4) सैनिको एव सैन्य चिकित्सालयों तथा क्लीनिकों में मनोस्नायु रोगियों के साथ वैयक्तिक एव सामूहिक स्तर पर किये गये कार्य।

वैयक्तिक समाज कार्य के मानसिक चिकित्सालयों में उद्विकास को महत्वपूर्ण योगदान देन वाले कारक दोनो विश्व युद्ध तथा इनके भयावह परिणाम थे। मनोस्नायु विकृति से पीडित रोगियों की संख्या में हुई अत्यधिक तीव्र वृद्धि के परिणामस्वरूप 1917 में मनश्चिकित्सकीय समाज कार्य प्रशिक्षण में विस्तार हुआ। युद्ध के कारण अनेक प्रकार के मनोविकार सामने आने लगे। इनके उपचार हेतु पहली बार 1918 में स्मिथ कालेज में मनश्चिकित्सकीय समाज कार्यकर्ताओं के लिये

प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। द्वितीय महायुद्ध के दौरान अमरीकी रेडक्रास ने ऐसे परिवारो की सहायता के लिये जिनके सदस्य युद्ध पर गये हुये थे, होम सर्विस डिवीजन की स्थापना की जो उन्हे मनोवैज्ञानिक एवं संवेगात्मक सहायता भी प्रदान करते थे। आज इसका उपयोग विद्यालयों, बाल न्यायालयो, चिकित्सालयो तथा औद्योगिक फार्मो मे होने लगा है।

IV *वैयक्तिक समाज कार्य के सम्प्रदाय*
(Schools of social case work)

समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप मे वैयक्तिक समाज कार्य के विकास के साथ–साथ इसकी आधारभूत मान्यताओ, अवधारणाओ, प्रविधियो तथा कार्य–पद्धतियो मे अन्तर आता गया। प्रारम्भ मे वैयक्तिक समाज कार्य का उद्‌देश्य समस्याग्रस्त व्यक्तियो को सहायता प्रदान करना था किन्तु बाद मे मनोविज्ञान तथा मनोविकार विज्ञान के प्रभाव के कारण व्यक्तित्व एवं व्यवहार सम्बन्धी उपचार को भी इसके विषय क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिया गया। धीरे–धीरे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ताओ के अभिविन्यास तथा अभिगम मे पर्याप्त अन्तर हो गया जिसके परिणामस्वरूप निदानात्मक (Diagnostic) तथा प्रकार्यात्मक (Functional) सम्प्रदायो का विकास हुआ।

निदानात्मक सम्प्रदाय (Diagnostic school)

इस सम्प्रदाय के विकास का श्रेय मेरी रिचमण्ड को है। इसके अतिरिक्त न्यूयार्क स्कूल ऑफ सोशल वर्क की मेरियन केन वर्दी, फेमिली सोसाइटी ऑफ फिलेडेल्फिया की वेत्सीलिवी, लेखक, शिक्षक एवं विद्वान गार्डन हैमिल्टन, बर्था रेनाल्ड्स, सार्लट टावले, फ्लारेन्स डे, लूसिली ऑस्टिन, गैरेट इत्यादि ने भी इसके विकास मे महत्वपूर्ण योगदान दिया।

निदानात्मक सम्प्रदाय पर फ्रायड के सिद्धान्त का पर्याप्त प्रभाव पडा। इस सिद्धान्त के अनुसार सेवार्थी की समस्या के निदान एवं

उपचार के लिये समस्या का उसके पर्यावरण के अश के रूप मे देखा जाना तथा सम्पूर्ण के साथ इसके सम्बन्ध के विषय मे जानकारी प्राप्त किया जाना आवश्यक होता है क्योकि व्यक्ति जिस पर्यावरण मे रहता है उसके विभिन्न तत्व आपस मे प्रतिक्रिया करते हुये व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। चेतन मन के साथ अचेतन मन के प्रभाव भी व्यक्ति के मूल्यो, व्यवहार तथा आत्मसयम पर पडते हैं। अतः वैयक्तिक समाज कार्यकर्ताओ के लिये इन वाह्य तथा आन्तरिक प्रभावो का समुचित ज्ञान आवश्यक हो जाता है।

निदानात्मक सम्प्रदाय मे सेवार्थी की समस्या के निदान एवं उपचार हेतु निम्नलिखित की पूर्ति किया जाना आवश्यक समझा जाता है :

(1) सेवार्थी की सहायता करने अथवा उसकी समस्या का समाधान करने के लिये उसके वाह्य पर्यावरण के साथ उसकी अन्तर्क्रियाओ की जानकारी आवश्यक होती है। वाह्य पर्यावरण के सापेक्षतया अधिक महत्वपूर्ण एव सामान्य दोनो प्रकार के ही अशों का समझा जाना आवश्यक होता है। वाह्य पर्यावरण के अन्तर्गत परिवार, सामाजिक समूह, शिक्षण सस्थाये तथा अन्य विभिन्न प्रकार की सामाजिक संस्थाये आती हैं।

(2) सेवार्थी की आवश्यकतानुसार उसकी चिकित्सा योजना तैयार की जानी चाहिये। सभी सेवार्थियो के लिये सामान्य चिकित्सा योजना न बनाकर वैयक्तीकरण करना आवश्यक होता है। सेवार्थी की समस्या की उत्पत्ति उसकी *कार्यात्मक अक्षमता* अथवा दोषपूर्ण सामाजिक परिस्थितियों अथवा इन दोनो की सम्मिलित प्रभाव के कारण हो सकती है।

(3) वैयक्तिक समाज कार्य के अन्तर्गत किये जाने वाले उपचार मे वैयक्तिक अथवा सामाजिक अथवा अन्तर्वैयक्तिक पर्यावरण अथवा इन दोनो मे परिवर्तन किया जाना आवश्यक होता है।

(4) उपचार का उद्देश्य सेवार्थी की इस प्रकार सहायता करना होता है ताकि वह अपने आप में अथवा अपने पर्यावरण अथवा इन दोनो में इस प्रकार परिवर्तन ला सके जिससे उसका उचित समायोजन सम्भव हो सके।

इस सम्प्रदाय के विचारको की यह मान्यता है कि वैयक्तिक समाज कार्य उपचार के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व में परिवर्तन लाते हुये इसका विकास किया जा सकता है और उपचार की प्रक्रिया के दौरान पर्यावरण मे किये गये परिवर्तनो के परिणामस्वरूप उसका समायोजन सरलतापूर्वक सम्भव हो जाता है। उपचार के प्रभाव कार्यकर्ता एव सेवार्थी के बीच पाये जाने वाले सम्बन्ध की घनिष्ठता पर निर्भर करते हैं।

उपचार के प्रारम्भिक चरण मे निम्नलिखित कार्य सम्पादित किये जाते हैं :

(1) सेवार्थी के संस्था के साथ सम्पर्क स्थापित किये जाने के कारणो की जानकारी प्राप्त करना, अर्थात यह पता लगाना कि सेवार्थी नें किन प्रेरकों से प्रेरित होकर संस्था के साथ सम्पर्क स्थापित करने का निर्णय लिया है।

(2) सेवार्थी के साथ सम्बन्ध स्थापित करना।

(3) सेवार्थी को उपचार की क्रिया मे लगाना, अर्थात उसे इस बात के लिये प्रेरित करना तथा इसके दौरान आने वाले विभिन्न प्रकार के अवरोधों को दूर करना।

(4) उपचार सम्बन्धी कार्य का शुभारम्भ करना।

(5) मनोसामाजिक निदान तथा उपचार सम्बन्धी निर्देशन के लिये आवश्यक सूचनाये एकत्र करना।

इस सम्प्रदाय का यह स्पष्ट मत है कि समुचित निदान के बिना वैयक्तिक सेवा कार्य सम्बन्धी सेवाये नही प्रदान की जा सकतीं।

निदान ऐसी समस्याओ के कारणो की खोज है जो सेवार्थी को वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता के पास उसकी सहायता के लिये ले जायी जाती है। समुचित निदान के लिये मनोसामाजिक तथा सामाजिक कारणो का उपयुक्त ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है। निदान की प्रक्रिया के दौरान निम्नलिखित तीन प्रकार के कार्य सम्पादित किये जाते हैं ·

(1) सेवार्थी के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षो की सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ प्रतिक्रिया की प्रकृति के विषय मे जानकारी प्राप्त करना।

(2) कारणात्मक कारको का वैयक्तिक एव सामाजिक दोनो ही स्तरो पर पता लगाया जाना।

(3) सेवार्थी की प्रकार्यात्मकता तथा क्लीनिकल निदान का वर्गीकृत किया जाना।

सेवार्थी की प्रकार्यात्मकता के आधार पर उसे अनेक श्रेणियों मे वर्गीकृत किया जा सकता है उदाहरण के लिये सेवार्थी का वर्गीकरण उसकी सामाजिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, पारिवारिक पृष्ठभूमि, धर्म, जाति, इत्यादि के आधार पर किया जा सकता है। शारीरिक बीमारियो का शिकार होने की स्थिति मे रोग के आधार पर वर्गीकरण किसी विशेषज्ञ द्वारा किया जाता है किन्तु मनोसामाजिक समस्याओ के वर्गीकरण का कार्य वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता द्वारा सम्पादित किया जाता है। मनोसामाजिक समस्याओ के उदाहरण के रूप मे पति–पत्नी के बीच कुसमायोजन, पिता–पुत्र के बीच कुसमायोजन, सीखने की प्रक्रिया मे विकास की धीमी दर, इत्यादि। मनोविकार सम्बन्धी समस्याओ के पाये जाने की स्थिति में वर्गीकरण का कार्य मनश्चिकित्सकीय कार्यकर्ता द्वारा सम्पादित किया जाता है।

निदानात्मक सम्प्रदाय मे उपचार के दो प्रमुख स्वरूप पाये जाते हैं (1) पर्यावरण मे परिवर्तन तथा (2) व्यक्तित्व मे परिवर्तन।

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय (Functional school)

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय का विकास पेन्सिलवैनिया स्कूल ऑफ सोशल वर्क द्वारा 1930 में किया गया। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे फ्रायड के समर्थको ने अहम, मनोविज्ञान पर बल देते हुये इस विचार धारा को प्रतिपादित किया कि व्यक्ति अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है। ऑटो रैन्क (Otto Rank) ने एक नये दृष्टिकोण को सामने रखते हुये यह विचारधारा प्रतिपादित की कि व्यक्ति की सकल्प शक्ति ही उसका नियंत्रण एव संचालन करती है और इस प्रकार एक नये सम्प्रदाय की आधारशिला रखी जिसे प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय के नाम से जाना जाता है। यद्यपि इस सम्प्रदाय का विकास ऑटा रैंक के सिद्धांतो के आधार पर हुआ किन्तु इस पर टैफ्ट (Taft) के विचारो का विशेष प्रभाव पडा। उन्होने इस विचारधारा को सामने रखा कि सस्था के कार्यो का उपयोग समाज कार्य सहायता का मूल है और अपने एक लेख द्वारा संस्था के कार्य तथा सहायतामूलक प्रक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित किया। राबिन्सन ने प्रकार्यात्मक सिद्धांतो का उपयोग समाज कार्य शिक्षा प्रदान करते समय किया। आप्टेकर (Aptekar), डावले (Dawley), डी स्वीनिज़ (De Schweinitz), फिलिप्स, लेविस, स्मैली (Smalley) इत्यादि विचारकों ने भी प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय के विकास में अपना योगदान दिया।

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय की मौलिक मान्यता यह है कि व्यक्ति के अन्तर्गत ऐसी शक्ति पायी जाती है जो जीवन, स्वास्थ्य एवं पूर्णता की प्राप्ति में सदैव महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। व्यक्ति अपनी आन्तरिक शक्ति द्वारा ही अपने अन्दर तथा अपने पर्यावरण मे परिवर्तन एवं संशोधन करता रहता है। यह परिवर्तन अवसर, उद्देश्य, स्थिति तथा सीमा मे होने वाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति के अंतर्गत मानव संबंधो के उपयोग की पूर्ण क्षमता पायी जाती है। यह कार्यकर्ता के साथ सम्बन्ध स्थापित करके अपने मे शक्ति अर्जित कर सकता है तथा अपनी समस्या का समाधान कर सकता है।

इस सम्प्रदाय मे तीन चरणो मे कार्य किये जाते हैं प्रारम्भिक चरण, मध्यवर्ती चरण तथा अन्तिम चरण। प्रारम्भिक स्तर पर कार्यकर्ता सेवार्थी के अन्दर पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के डरो तथा अवरोधो को समझता है और इन्हे दूर करने का प्रयास करता है, सेवार्थी को अपनी भूमिका से अवगत कराता है, सेवार्थी को अपनी आशाओ इच्छाओ, समस्याओ, रुचियो इत्यादि को व्यक्त करने के लिये प्रोत्साहित करता है, समस्या का वर्गीकरण करता है तथा समस्या–समाधान को प्रारम्भ करने की स्थिति का निर्धारण करता है।

मध्यवर्ती चरण में सेवार्थी के उत्तरदायित्व ग्रहण करने की क्षमता मे वृद्धि होती है ओर उसके साथ घनिष्ठ सबध स्थापित हो जाते हैं। टैफ्ट का यह मत है कि मध्यवर्ती चरण होता ही नहीं है क्योकि सेवार्थी के साथ एक बार उपचार का कार्य प्रारम्भ कर दिये जाने पर यह तब तक अनवरत रूप से चलता रहता है जब तक कि निर्धारित उद्देश्यो की प्राप्ति न हो जाय।

अन्तिम चरण मे सेवार्थी के अन्दर इस बात का भय विद्यमान रहता है कि सेवार्थी से कार्यकर्ता अलग हो जायेगा। कार्यकर्ता इस भय से मुक्ति दिलाने के लिये सेवार्थी मे आत्म विश्वास पैदा करता है, उसमे आत्मबल बढाता है, उसकी सकल्प शक्ति को सुदृढ बनाता है और अन्तिम रूप से उसे इस बारे में सक्षम बना देता है कि वह कार्यकर्ता की अनुपस्थिति मे भी अपनी इच्छा शक्ति का प्रयोग करते हुये अपनी समस्याओ का समाधान करता रहे।

इस सम्प्रदाय की मान्यताओ के आधार पर कार्य करता हुआ वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की सामान्य पृष्ठभूमि यथा उसकी आयु, लिग, स्थिति, सस्कृति, विभिन्न प्रकार की मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशाओ, इत्यादि सम्बन्धी जानकारी को ध्यान में रखते हुये सेवार्थी का साक्षात्कार करता है। वह सेवार्थी से सम्बन्धित सभी प्रकार की सूचनाओ को एकत्रित कर उनका अध्ययन करता है। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत सेवार्थियो को श्रेणीबद्ध करने का प्रयास नहीं

किया जाता क्योकि इससे उसके विकास करने की क्षमता मे बाधा उत्पन्न होती है।

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय के अन्तर्गत एक सहायतामूलक प्रक्रिया को अपनाया जाता है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में सेवार्थी में ही परिवर्तन लाने के प्रयास किये जाते हैं। उसकी इच्छा शक्ति को सुदृढ बनाया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान कार्यकर्ता सेवार्थी को केवल प्रोत्साहन प्रदान करने का कार्य करता है। वह न तो कोई उपचार करता है और न ही सेवार्थी निष्क्रिय होकर कार्यकर्ता का अनुसरण करता है। सेवार्थी की प्रकार्यात्मकता को बढाने का सतत प्रयास किया जाता है। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता द्वारा किसी समाज कार्य सस्था के तत्वावधान में प्रावधानित सेवाओ का अधिकतम उपयोग करने की प्रेरणा प्रदान की जाती है।

निदानात्मक तथा प्रकार्यात्मक सम्प्रदायो में प्रमुख अन्तर

इन दोनो सम्प्रदायों में अन्तर को तीन आधारो पर स्पष्ट किया जा सकता है . (1) व्यक्तित्व के प्रत्यय के आधार, (2) उपचार की अवधारणा के आधार पर, तथा (3) कार्यकर्ता के उत्तरदायित्व के प्रत्यय के आधार पर।

व्यक्तित्व के प्रत्यय के आधार पर अन्तर . निदानात्मक सम्प्रदाय सिग्मण्ड फायड द्वारा प्रतिपादित व्यक्तित्व के सिद्धान्त पर आधारित है जबकि प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय ऑटो रैंक की संकल्प शक्ति पर आधारित है। निदानात्मक सम्प्रदाय व्यक्तित्व को अहम् द्वारा प्रमुख रूप से नियत्रित आन्तरिक एव वाह्य पर्यावरण के बीच होने वाली अन्तर्क्रिया के परिणाम के रूप में मानता है। उदाहरण के रूप मे स्पष्ट करने के लिये व्यक्तित्व को एक स्वचालित वाहन, इदम् को इसके इंजन, अहम् को इसके चालक तथा पराहम् को पीछे की सीट पर बैठे हुये चालक के रूप मे व्यक्त किया जा सकता है। फायड के अनुसार व्यक्तित्व सम्बन्धी सरचना मे सगठन शक्ति नहीं होती। व्यक्तित्व

सम्बन्धी सरचना मे अनेक प्रकार की अन्तक्रिया करने वाली शक्तिया पायी जाती हैं जो न केवल आपस में एक दूसरे के साथ पारस्परिक क्रिया करती हैं बल्कि पर्यावरण के साथ भी अन्तर्क्रिया की स्थिति मे आती हैं। इन शक्तियो की सापेक्ष शक्ति तथा इनकी सतुलन व्यवस्था व्यक्ति के पूर्व अनुभवो पर आधारित होती है जिन्हे वह अपने माता पिता के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के परिणामस्वरूप प्राप्त करता है। इस सम्पूर्ण मानव संरचना मे अहम् का प्रमुख स्थान होता है जो आन्तरिक तथा वाह्य दोनो ही स्तरो पर शक्ति के रूप मे कार्य करता है। अहम् का कार्य प्रत्यक्षीकरण, वास्तविकता परीक्षण, निर्णय, सगठन, नियोजन तथा आत्म–संरक्षण करना है। अहम् की शक्ति व्यक्ति के मनो–सामाजिक विकास पर निर्भर करती है। मनोचिकित्सकीय सहायता द्वारा अहम् का विकास किया जा सकता है।

फायड के मत मे व्यक्ति के अन्दर पायी जाने वाली प्राकृतिक जैविक शक्ति (Natural Biological Power) जीवन की मूलभूत प्रवृत्ति तथा मृत्यु की मूलभूत प्रवृत्ति के रूप मे पायी जाती है जिन्हे फायड द्वारा "इरास" (Eros) तथा 'थेनाटास' (Thanatos) के नाम से सम्बोधि त किया गया है। 'इरास' दो प्रकार की प्रेरक शक्तियों के रूप में पायी जाती है : लैंगिक प्रेरक शक्तियो के रूप में जिनका प्रतिनिधि इदम् द्वारा किया जाता है तथा अहम् प्रेरक शक्तिया जिनका प्रतिनिधित्व अहम् द्वारा किया जाता है। 'थेनाटास' का प्रतिनिधित्व इदम् द्वारा किया जाता है। मानव व्यवहार 'इरास' तथा 'थेनाटास' के बीच पायी जाने वाली अन्तर्क्रिया का परिणाम होता है। यदि 'इरास' अधिक प्रबल होता है तो व्यवहार रचनात्मक होता है, यदि 'थेनाटास' अधिक प्रबल होता है तो व्यवहार विध्वंसात्मक होता है, तथा यदि 'इरास' की तुलना मे 'थेनाटास' बहुत अधिक प्रबल हो जाता है तो मृत्यु हो जाती है।

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय के अनुसार सकल्पशक्ति (Will) प्रमुख सगठनकारी शक्ति होती है। यद्यपि व्यक्ति की आन्तरिक शक्तियों एव वाह्य पर्यावरण के बीच अन्तर्क्रिया होती है फिर भी यह सकल्प शक्ति

द्वारा निर्देशित की जाती है। यह सकल्प शक्ति आन्तरिक एव वाह्य अनुभवों को सगठित कर स्व (Self) का विकास करती है। यह विकास व्यक्ति के परिवेश मे अर्थपूर्ण सम्बन्धो के विकसित होने के साथ–साथ घटित होता है। परिवेश के इन विभिन्न प्रकार के सबधो में सर्व प्रमुख स्थान माता के साथ पाये जाने वाले सम्बन्धो का होता है। व्यक्ति के विभिन्न प्रकार के अनुभव उसे मिलना (union), बिछुडना (separation) प्रक्षेपण (projection) एव तादात्मीकरण (dentification) की प्रक्रियाओं के माध्यम से प्राप्त होते हैं।

'स्व' (self) सकल्पशक्ति द्वारा आन्तरिक एव वाह्य अनुभवो के रचनात्मक प्रयोग का परिणाम होता है। यदि इच्छाशक्ति आन्तरिक एवं वाह्य अनुभवों का रचनात्मक एव सकारात्मक प्रयोग करती है तो सफल व्यक्तित्व विकसित होता है।

व्यक्ति अपने जीवन में लोगों के साथ सम्पर्क में आता है, उनसे अलग होता है, अपनी आन्तरिक इच्छाओं एव आवश्यकताओं को वाह्य पर्यावरण मे पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की वस्तुओं पर प्रक्षेपित करते हुये इन आवश्यकताओ एवं इच्छाओ की पूर्ति हेतु इनका प्रयोग करता है तथा अपनी इच्छाओं एवं आवश्यकताओ की पूर्ति में सहायक समझी गयी वस्तुओं के साथ तादात्म्य स्थापित करता है।

मिलने, विछुडने, प्रक्षेपित करने एवं तादात्मीकरण करने की घटनायें आजीवन चलती रहती हैं। सर्वप्रथम भ्रूण जब मां के गर्भ में पल रहा होता है वह पूर्ण मिलन की स्थिति में होता है। जन्म लेने के समय वह बिछुड़ने का अनुभव करता है और इसीलिये जन्म को मानसिक मृत्यु (Mental death) के नाम से भी सम्वोधित किया जाता है। मां जब बच्चे को दूध पिलाती है तो वह पुन उसके साथ मिलन का अनुभव करता है और जब अलग कर देती है तो बिछुडने की अनूभूति करता है। वह पहले अपनी जैविक आवश्यकताओं एव अभिरुचियों की पूर्ति के लिये विभिन्न पदार्थों को प्रयोग करने का प्रयास करता है। जब उसे इस बात का अनुभव होता है कि यह

आवश्यक नहीं कि दूसरे सभी व्यक्ति उसकी इन आवश्यकताओ एव अभिरुचियो की पूर्ति मे निश्चित रूप से सहायक ही सिद्ध होगे तब वह अपने तथा दूसरे लोगो के बीच विभेद करने लगता है और उन वस्तुओ के साथ जो उसकी आवश्यकताओ एव अभिरुचियो की पूर्ति में सहायक सिद्ध होती हैं, तादात्म्य स्थापित करने लगता है। सर्वप्रथम वह अपनी माता के ऊपर अपनी आवश्यकताओ एव अभिरुचियो को प्रक्षेपित करता है और उनकी पूर्ति मे माता के सहायक होने पर उसके साथ तादात्मीकरण करने लगता है। यदि मा उसकी अभिरुचियो एव आवश्यकताओ की सतुष्टि पर नियत्रण लगाने लगती है तो वह इनकी सतुष्टि के अन्य ढगो की खोज करने लगता है और यही पर 'स्व' प्रकट होता है जो स्वय अपने तथा मा के विषय मे अच्छे अथवा बुरे होने की भावना का द्योतक होता है। इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत सेवार्थी को सम्बन्ध स्थापित करने का अवसर प्रदान करते हुये तथा अच्छे अनुभव देते हुए उसकी सकल्पशक्ति को सुदृढ बनाया जाता है और इस कार्य में सस्था मे उपलब्ध सेवाओं का भी प्रयोग किया जाता है। इस सम्प्रदाय मे वर्तमान के प्रयोग पर अधिक बल देते हुये इच्छा शक्ति को अधिक सुदृढ बनाया जाता है।

2. उपचार की अवधारणा के आधार पर अन्तर निदानात्मक सम्प्रदाय मे वैयक्तीकृत अभिगम का सहारा लिया जाता है। इस सम्प्रदाय के अतर्गत सेवार्थी–कर्ता सबध को सेवार्थी के समाज मे अधिक अच्छे समायोजन के लक्ष्य की प्राप्ति मे एक साधन के रूप मे स्वीकार किया जाता है। इस सम्प्रदाय में उपचार को अधिक अच्छे समायोजन के लक्ष्य की ओर निर्देशित किया जाता है। समस्या का मनो–सामाजिक अध्ययन करने के पश्चात् निदानात्मक मूल्याकन करते हुये उपचार की योजना बनायी जाती है। उपचार करने के लिये पर्यावरण मे सशोधन किये जाते हैं, आवश्यक सेवायें प्रदान की जाती हैं तथा निर्देशित एव गैर–निर्देशित दोनों प्रकार की मत्रणा, उपचारात्मक साक्षात्कार, हस्तातरण स्पष्टीकरण व्याख्या, निर्वचन तथा गतिरोध व्यवस्था का प्रयोग करते हुये प्रत्यक्ष रूप से उपचार किया जाता है।

प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय मे सम्बन्ध स्वयं में एक उद्देश्य होते हैं। इन्हीं के आधार पर इच्छा शक्ति सुदृढ बनती है। सेवार्थी के साथ इस प्रकार के सबध स्थापित किये जाते हैं ताकि इन संबंधो के दौरान मिलने, बिछुडने, प्रक्षेपण एव तादात्मीकरण की प्रक्रियाओं से रचनात्मक अनुभव प्राप्त हो सकें। सम्बन्ध स्थापित करने के साथ–साथ ऐसे साधन भी उपलब्ध कराये जाते हैं जो व्यक्ति को आन्तरिक तथा वाह्य कारको के बीच होने वाली अन्तर्क्रिया का रचनात्मक प्रयोग करने मे सहायक सिद्ध हो सके।

3. कार्यकर्ता के उत्तरदायित्व के प्रत्यय मे अन्तर : निदानात्मक सम्प्रदाय मे कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व अत्यधिक गम्भीर होता है क्योकि अतीत और वर्तमान दोनो के सन्दर्भ में उसके व्यक्तित्व तथा समस्या का मनोसामाजिक अध्ययन करने के उपरान्त निदानात्मक मूल्यांकन करते हुये उपचार की योजना बनाकर उपचार की प्रक्रिया में कार्यकर्ता को सक्रिय भूमिका निभानी पड़ती है जबकि प्रकार्यात्मक सम्प्रदाय मे कार्यकर्ता को केवल ऐसे सम्बन्ध स्थापित करने होते हैं तथा ऐसे संसाधन उपलब्ध कराने होते हैं जो सेवार्थी को रचनात्मक अनुभव प्रदान करते हुये उसके 'स्व' के विकास में सहायक सिद्ध हो सके।

V *वैयक्तिक समाज कार्य के मौलिक प्रत्यय*
(Basic concepts of social case work)

एक वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता अपनी सेवायें प्रदान करने की प्रक्रिया के दौरान निम्नलिखित प्रत्ययों को सदैव ध्यान में रखते हुये कार्य करता है :

1. सामाजिक भूमिका (Social role)

प्रत्येक व्यक्ति अपने समाज में अपनी आयु, लिंग, धर्म, जाति, प्रजाति, व्यवसाय, व्यक्तिगत योग्यता, इत्यादि के आधारो पर एक स्थिति को प्राप्त करता है जिसे प्रस्थिति (Status) के नाम से संबोधित

किया जाता है। प्रस्थिति व्यक्ति का समाज मे वह स्थान होता है जो व्यक्ति को विभिन्न प्रकार के आधारों पर समाज द्वारा प्रदान किया जाता है। प्रत्येक प्रस्थिति के साथ कुछ उत्तरदायित्व एव कर्तव्य जुडे होते हैं। ये उत्तरदायित्व एव कर्तव्य सामाजिक नियमो, परम्पराओं, प्रथाओ, रीतियो, विघटनो, नियमो इत्यादि द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। *ये उत्तरदायित्व एव कर्तव्य व्यक्ति की भूमिका का निर्णय करते हैं।* इस प्रकार भूमिका एक प्रस्थिति के साथ सम्बद्ध ऐसे उत्तरदायित्व एव कर्तव्य होते है जिनका निर्धारण प्रचलित सामाजिक मान्यताओ द्वारा किया जाता है। उदाहरण के लिये, परिवार मे पिता, माता, पति, पत्नी, पुत्री, पुत्र, बहन, भाई इत्यादि अनेक प्रकार की प्रस्थितिया पायी जाती हैं। *इन प्रस्थितियो के साथ अनेक प्रकार के कर्तव्य एव* उत्तरदायित्व सम्बद्ध होते हैं। एक पिता से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पत्नी तथा सतानो के पालन पोषण की व्यवस्था करेगा। यह उत्तरदायित्व एव कर्तव्य भी प्रकाशित मान्यताओ के अनुसार भिन्न–भिन्न होते हैं। अमरीका जैसे सुविकसित समाज में जहा स्त्रिया तथा किशोर *भी कार्यरत होकर आजीविका कमाने की स्थिति मे होते हैं वहा पिता* का उत्तरदायित्व अपने बच्चो के किशोरावस्था तक पहुंचने तक ही भरण पोषण करना होता है। इसके विपरीत भारतीय समाज मे पिता के रूप मे एक व्यक्ति को अपनी पत्नी का सामान्यतया आजीवन तथा बच्चों का कम से कम कमाने की अवस्था तक पहुचने तक, कुछ *स्थितियों मे आजीवन भी, भरण पोषण करने का उत्तरदायित्व* निभाना पडता है। इस प्रकार प्रस्थिति का दायित्व सम्बन्धी पक्ष भूमिका कहलाता है। भूमिका की अवधारणा मे दो तत्व सन्निहित होते हैं . (1) भूमिका से सम्बद्ध प्रत्याशाये, तथा (2) इन प्रत्याशाओ के सन्दर्भ मे सम्पादित की गयी क्रियाये। समाज को किसी भ प्रस्थिति मे स्थित व्यक्ति से कुछ आशाये होती हैं। समाज व्यक्ति से अपेक्षा करता है कि वह अपनी प्रस्थिति सम्बन्धी इन आशाओ को आवश्यक कार्य करते हुये पूर्ण करेगा। इस प्रकार सामाजिक *भूमिका प्रत्याशाओ एवं क्रियाओ* का एक अर्न्तसबधित समूह होता है जो किसी सामाजिक सगठन का एक समेकित अग होता है।

भूमिका के निम्नलिखित पहलू हैं ·

(1) भूमिका प्रस्थिति से सम्बन्धित होती है।

(2) इसके अतर्गत वे कर्तव्य एव उत्तरदायित्व आते हैं जो सामाजिक प्रस्थिति को अपनाने वाले व्यक्ति द्वारा सम्पादित किये जाते होते हैं।

(3) इन उत्तरदायित्वों एव कर्तव्यों का निर्धारण सामाजिक मान्यताओं द्वारा किया जाता है।

(4) भूमिका के अतर्गत प्रत्याशित उत्तरदायित्व एव कर्तव्य तथा वास्तव में सम्पादित उत्तरदायित्व एव कर्तव्य दोनों ही सम्मिलित होते हैं।

(5) प्रत्याशित भूमिकाओं तथा सम्पादित भूमिकाओं के बीच प्रायः अन्तर पाया जाता है।

(6) भूमिका प्रत्याशा तथा भूमिका निष्पत्ति के बीच अत्यधिक अन्तर पाये जाने पर व्यक्ति को कठिनाइयों का सामना करना पडता है और जब वह इनका समाधान स्वयं नहीं कर पाता तब उसे सहायता की आवश्यकता का अनुभव होता है।

2 अनुकूलन (Adaptation)

अनुकूलन का अर्थ जैविक, भौगोलिक, सामाजिक एव सास्कृतिक परिस्थितियों के अनुसार अपने को परिवर्तित करना होता है ताकि विकास एवं प्रगति सम्भव हो सके। फेयरचाइल्ड के अनुसार "अनुकूलन एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति एक ही हुई परिस्थिति में रहने की योग्यता प्राप्त करता है।"[2]

अनुकूलन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति पर्यावरण के अनुसार अपने को ढालता है। व्यक्ति में यह क्षमता पायी जाती है कि वह समय के साथ अपनी जीवन शैली में भी परिवर्तन कर लेता है। कभी वह अपने को परिवर्तित करता है तो कभी पर्यावरण को।

अनुकूलन तीन प्रकार का होता है (1) प्राणिशास्त्रीय (Biological) अनुकूलन, (2) भौतिक अनुकूलन, तथा (3) सामाजिक (Social) अनुकूलन। प्राणिशास्त्रीय अनुकूलन के माध्यम से व्यक्ति जीवित रहने के लिये अनुकूल दशाये प्राप्त करता हे। भौतिक अनुकूलन बिना किसी प्रयत्न के स्वत होता रहता है। सामाजिक अनुकूलन के लिये व्यक्ति को प्रयास करने पडते हैं। सामाजिक अनूकूलन व्यक्ति के लिये अधिक महत्वपूर्ण है क्योकि इसके बिना न तो विकास एव उन्नति सम्भव है और न ही सामाजिक प्रतिष्ठा का प्राप्त हो पाना।

व्यक्ति सदैव अपनी परिस्थितियो, दशाओ, अन्तर्वैयक्तिक सबधो इत्यादि के साथ अनुकूलन प्राप्त करने की प्रक्रिया मे लगा रहता है किन्तु यह आवश्यक नही कि वह अपने इस प्रयास मे सफल ही हो अथवा उसकी अनुकूलन पद्धति उसे व्यक्तिगत सफलता उपलब्ध करा ही दे। व्यक्ति का अनुकूलन उस सीमा तक पूर्णरूपेण स्वस्थ होता है जिस सीमा तक वह अपनी परिस्थितियो, दशाओ तथा अन्य व्यक्तियों के साथ अच्छे सम्बन्ध स्थापित करता है। जो व्यक्ति अपनी बाधाओ को दूर करने मे असमर्थ होता है वह असामान्यता के लक्षण प्रदर्शित करता है।

सामाजिक परिस्थितियो के साथ व्यक्ति तीन प्रकार से अनुकूलन करने का प्रयास करता है

(1) अभ्यस्त एव पूर्व निश्चित ढगो का उपयोग करते हुये,

(2) बुद्धि अथवा सघर्ष का प्रयोग करते हुये, तथा

(3) उदासीनता, मानसिक उन्मुखता, प्रतिगमन, प्रत्याहार अथवा कल्पना की उडान का प्रयोग करते हुये।

सर्वप्रथम व्यक्ति अपनी समस्या का समाधान करने का प्रयास पूर्व परिचित ढगो एव पहले प्रयोग मे लायी गयी प्रविधियो का प्रयोग करते हुये करता है। यदि इस प्रकार समस्या का समाधान नही होता तो वह या तो सघर्ष करता है या अपने आपको उस स्थिति के

अनुकूल बना लेता है या उस स्थिति से दूर हो जाने का प्रयास करता है। यदि ये ढग भी असफल हो जाते हैं तो वह समस्या के प्रति उदासीन हो जाता है और मानसिक विकार के अनेक लक्षण उत्पन्न कर लेता है।

3. अहम् (Ego)

मानव व्यक्तित्व मे पायी जाने वाली शक्तियो के तीन कार्य होते हैं · (1) जीवन शक्तियो की सन्तोषपूर्ण अभिव्यक्ति, (2) ऐच्छिक अथवा स्वचालित प्रतिबंध व्यवस्था का कार्यान्वयन, तथा (3) सगठन एव प्रशासन व्यवस्था जो सतुलन स्थापित करने का कार्य करती है तथा वह क्या चाहता है और क्या कर सकता है, के बीच नियंत्रण स्थापित करती है। फ्रायड ने मानव व्यक्तित्व की इन शक्तियो को इदम्, अहम् तथा पराहम् के नाम से सम्बोधित किया है। इदम् मानव व्यक्तित्व की उन शक्तियो का प्रतिनिधित्व करता है जो व्यक्ति को सुख प्रदान करने मे सहायक होती हैं। अहम् व्यक्तित्व की उन शक्तियो का द्योतक है जिनके द्वारा व्यक्ति अपना मानसिक संतुलन बनाये रखता है। पराहम् व्यक्तित्व की उन शक्तियों का परिचायक है जो सामाजिक मान्यताओं के अनुसार व्यवहार करने के लिये नियंत्रण लागू करती है।

वास्तविकता की जानकारी करने तथा इदम् और पराहम् के बीच संतुलन स्थापित करने के कारण अहम् की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। डेविसन के मत मे, "अहम् व्यक्तित्व के चेतन रूप से कार्य करने वाले ऐसे अंश का प्रतिनिधित्व करता है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने आप को व्यक्त करता है और दूसरो के साथ सम्प्रेषण करता है" फ्रीडलैण्डर के अनुसार "अहम् का प्रत्यय ऐसी अभ्यन्तर (Intrapersonal) शक्तियों को सम्बोधित करता है जो व्यक्ति की विभिन्न तथा कभी–कभी एक दूसरे के साथ एव वाह्य संसार की मांगो के साथ संघर्षपूर्ण आवश्यकताओ एवं मूल्यो के साथ सतुलन बनाये रखने के लिये निरन्तर प्रयास करता है।" अहम् परिणामो के विषय मे सोचता है, उन स्थितियो का पूर्वानुमान करता है जो घटित नहीं हुई होती तथा

समाधान के उपाय निर्धारित करता है। अहम् के अनेक कार्य हैं। इनमे से निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं प्रत्यक्षीकरण (सही/विघटित), निर्णय (तार्किक/अतार्किक), सोच समझ कर/जल्दबाजी मे, वास्तविकता परीक्षण (वास्तविक स्थिति पर ध्यान अथवा कल्पना का सहारा), आत्मनिर्णय (वास्तविक/बढा–चढाकर/अव्यवस्थित), मूल प्रवृत्तियो पर नियत्रण (बहुत कम/बहुत आधिक), क्रिया सगठन (व्यवस्थित/अव्यावहारिक), विचार (तर्कपूर्ण/अतार्किक), सुरक्षात्मक उपायो का प्रयोग (सीमा तथा प्रकार)।

अहम् का ज्ञान व्यक्ति को समझने तथा उसे सहायता प्रदान करने के लिये आवश्यक है। सेवार्थी की समस्या के वास्तविक कारणो तथा इसके समाधान के लिये उसके द्वारा किये गये प्रयासो को जानने के लिये वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता अहम् की विगत कार्यात्मकता का ज्ञान प्राप्त करता है। यदि उसे यह पता चलता है कि सेवार्थी के विगत जीवन मे विघटित प्रत्यक्षीकरण के अनुभव प्राप्त हुये हैं, उसके द्वारा ज्ञान का समुचित उपयोग नहीं किया गया है तथा वह सामान्य समस्याओ के समाधान मे असफल रहा है तो वह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सेवार्थी की अहम् शक्ति दुर्बल है और वह इसे सुदृढ बनाने का प्रयास करता है।

VI *वैयक्तिक समाज कीर्य क चरण*
(Steps in social casework)

वैयक्तिक समाज कार्य के तीन चरण है (1) मनो–सामाजिक अध्ययन, (2) निदान एव मूल्याकन, तथा (3) उपचार।

1. मनोसामाजिक अध्ययन (Psycho-social study)

प्रारम्भ मे सम्बन्ध, समर्थन (Support), पुनराश्वासन (reassurance), स्पष्टीकरण (clarification), सलाह, व्याख्या, इत्यादि का प्रयोग करते हुये वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ इस प्रकार सबध स्थापित करता है कि उसकी चिन्ता कम हो सके, उसके विश्वास एव आशा मे वृद्धि हो सके, वह अपनी समस्या के परिस्थिति

सम्बन्धी तथा रागात्मक पहलुओ के विषय मे सोचते हुये विचार व्यक्त कर सके, वह अपने उद्देश्यो एवं संस्था द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के संबंध में अपनी विभिन्न आवश्यकताओ पर ध्यान केन्द्रित कर सके और समस्या–समाधान मे अपना सहयोग प्रदान कर सके।

मनो–सामाजिक अध्ययन करने के लिये यह आवश्यक है कि वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ घनिष्ठ सबध (rapport) स्थापित करते हुये अपने मे सेवार्थी का विश्वास जागृत कर सके और उसे यह विश्वास दिला सके कि वह वास्तव मे उसकी समस्या–समाधान मे सहायता करना चाहता है और उसके द्वारा प्रदान की गयी सम्पूर्ण सूचनाओ को गोपनीय रखेगा। सेवार्थी के साथ उसकी सुविधानुसार समय निर्धारित कर उसके लिये अनुकूल स्थान पर गैरनिर्देशात्मक (non-directive) साक्षात्कार का प्रयोग करते हुये वह सेवार्थी की समस्या का मनो–साामजिक अध्ययन करता है। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ उसके द्वारा सरलतापूर्वक समझी जाने वाली भाषा एवं शैली मे समस्या से सम्बन्धित कुछ प्रमुख बिन्दुओ को उठाते हुये उनके विषय मे सेवार्थी को स्वतत्र एवं निर्बाध रूप से अपने विचार व्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है। अनेक समस्याये ऐसी होती हैं जिनके साथ सेवार्थियो की व्यक्तिगत भावनायें सम्बद्ध होती हैं और उनके विषय में सेवार्थी सरलतापूर्वक सम्प्रेषण नहीं कर पाते और ऐसी परिस्थिति मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता न केवल निष्क्रिय श्रोतो के रूप मे सेवार्थी की बात को सुनता रहता है बल्कि वह उसे समस्या से सबंधित तथ्यो को प्रेरित करने के लिये उत्प्रेरक का कार्य करता है और उसे अपनी समस्या को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने मे उसकी सहायता करता हे। वह न केवल सेवार्थी को इस बात का अनवरत रूप से आश्वासन देता रहता है कि उसके द्वारा बतायी जाने वाली बाते महत्वपूर्ण हैं। कभी–कभी वह सेवार्थी से समस्या के किसी पहलू विशेष अथवा इससे सबधित परिस्थिति विशेष के संबंध मे और अधिक जानकारी प्रदान करने के लिये कहता है बल्कि कभी–कभी वह सेवार्थी को इस बात का स्पष्टीकरण भी प्रदान

करता है कि कुछ विशिष्ट प्रकार की सूचना का सग्रह क्यो किया जा रहा है। सेवार्थी के अनेक प्रकार की समस्याओ से ग्रस्त होने अथवा एक ही समस्या के विभिन्न स्तरो पर पाये जाने अथवा अपने विचारो के व्यक्त करते समय सेवार्थी के अपने सवेगो के सम्बन्ध मे बह जाने की स्थिति मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता कुछ प्रश्नो टिप्पणियो अथवा सुझावो का प्रयोग करते हुये उससे अपना ध्यान केन्द्रित करने के लिये निवेदन करता है और समस्या के किसी अश को सापेक्षतया अधिक महत्वपूर्ण मानते हुये उसको पृथक करता है जिसका परिणाम यह होता है कि इससे इस पहलू का स्पष्ट रूप से प्रत्यक्षीकरण हो जाता है तथा अहम् की शक्ति इसके समाधान की ओर निर्देशित हो जाती है।

मनो–सामाजिक अध्ययन के लिये प्रमुख रूप से वैयक्तिक अध्ययन तथा साक्षात्कार का प्रयोग किया जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन (Case study) वैयक्तिक अध्ययन का प्रयोग वैयक्तिक समाज कार्य मे सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा उसकी समस्या का सम्पूर्णता मे अध्ययन करने के लिये किया जाता है। यह अध्ययन का एक ऐसा ढंग है जो सूचना के विभिन्न स्रोतो का प्रयोग करते हुये सेवार्थी तथा उसकी समस्या के विभिन्न पहलुओ के बारे मे अपेक्षित सम्पूर्ण गुणात्मक सामग्री के सग्रह को सम्भव बनाता है। एक ढग के रूप मे यह सापेक्षतया अधिक गुणात्मक है, इसकी सहायता से अधिक विस्तृत एव पूर्ण सूचना का सग्रह किया जा सकता है तथा इसके अंतर्गत सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा उसकी समस्या से सम्बन्धित विभिन्न तत्वो को एकीकरण तथा समग्रता की स्थिति मे स्वीकार करते हुये सूचना को एकत्रित करने का प्रयास किया जाता है।

वैयक्तिक अध्ययन ढग का प्रयोग करते हुये यह समझने का प्रयास किया जाता है कि आन्तरिक सरचना के विभिन्न पहलू क्या हैं तथा आन्तरिक सरचना के विभिन्न पहलुओ तथा वाह्य वातावरण के बीच सम्बन्ध क्या हैं।

वैयक्तिक अध्ययन के दौरान निम्नलिखित प्रमुख प्रविधिया प्रयोग मे लायी जाती है

(1) बिना किसी अनुसूची का प्रयोग करते हुये अनौपचारिक साक्षात्कार का किया जाना,
(2) वैयक्तिक दस्तावेजो का अवलोकन करते हुये इच्छित सूचना का सग्रह किया जाना,
(3) जीवन इतिहासो का तैयार किया जाना, तथा
(4) सगठनात्मक अभिलेखो का अवलोकन करते हुये इच्छित सूचना का संग्रह किया जाना।

वैयक्तिक अध्ययन ढग का प्रयोग करते हुये निम्नलिखित स्रोतो से सूचना एकत्रित करने का प्रयास किया जाता हैं

(1) सेवार्थी तथा उसकी परिस्थिति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण व्यक्ति,
(2) सेवार्थी के जीवन के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओ, उदाहरणार्थ, उसके घर, व्यवसाय, शिक्षा, फर्म, मनोरजन, चिकित्सा, इत्यादि से सम्बन्धित सस्थाये तथा इनमे कार्यरत महत्वपूर्ण व्यक्ति तथा इनमे उपलब्ध दस्तावेज एव अभिलेख,
(3) सेवार्थी के घनिष्ठ मित्र, सम्बन्ध इत्यादि जो उसके जीवन, व्यक्तित्व तथा समस्या पर प्रकाश डालने मे सहायक सिद्ध हो सकते हैं,
(4) सेवार्थी के निजी महत्वपूर्ण दस्तावेज, उदाहरणार्थ, दैनन्दिनियां (Diaries), पत्र इत्यादि।

2. निदान एवं मूल्यांकन (Diagnosis and evaluation)

निदान शब्द का प्रयोग अधिकाशत चिकित्साशास्त्र मे किया जाता है जिसका अभिप्राय रोग का सम्पूर्ण ज्ञान होता है। वैयक्तिक समाज कार्य में प्रयोग मे लाये जाने वाले निदान शब्द का अर्थ

चिकित्साशास्त्र मे प्रयुक्त निदान शब्द के अर्थ से अधिक व्यापक ह। वैयक्तिक समाज कार्य मे निदान का अर्थ न केवल समस्या का पूर्ण ज्ञान बल्कि समस्याग्रस्त व्यक्ति के सम्बन्ध मे भी पूर्ण ज्ञान से होता हे। *निदान सेवार्थी द्वारा प्रस्तुत की गयी समस्या की वास्तविक प्रकृति* के सम्बन्ध मे व्यावसायिक मत है। निदान तथा उपचार अन्योन्याश्रित हैं क्योकि निदान उपचार को निर्देशित करता है तथा जैसे–जैसे उपचार मे प्रगति होती है वैसे–वैसे निदान मे परिवर्तन तथा सशोधन होता जाता है आर तदनुसार उपचार को पुन निर्देशित किया जाता है। *उपयुक्त निदान करने तथा समस्या के समाधान के लिये तथ्यो की* खोज करने दोनो की ही आवश्यकता होती है किन्तु सहायता की *प्रक्रिया मे निदान का महत्व तथ्यो की खोज से अधिक हो जाता है।*

निदान का अर्थ (Diagnosis)

मेरी रिचमण्ड[9] के अनुसार, "सामाजिक निदान यथासभव एक विशिष्ट सेवार्थी क व्यक्तित्व तथा सामाजिक स्थिति की ठीक परिभाषा करने का प्रयास ह।" हरबर्ट आप्टेकर[10] के अनुसार '*निदानात्मक सम्प्रदाय के दृष्टिकोण के अनुसार निदान उस समस्या के कारण की* खोज है जो सेवार्थी को कर्ता के पास सहायता के लिये ले जाता है इस प्रकार निदान ऐसे मनोवैज्ञानिक अथवा व्यक्तित्व सम्बन्धी कारको जो सेवार्थी की कठिनाई के साथ कारणात्मक सम्बन्ध रखते हैं, तथा सामाजिक अथवा पर्यावरणात्मक कारकों जो इसे बनाये रखते हैं, दोनो को समझने से सम्बन्धित है।

निदान सेवार्थी की समस्या, उसके व्यक्तित्व तथा परिवेश को यथार्थ रूप से समझने के लिये किया गया प्रयास है। निदान की प्रक्रिया मे *समस्या से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित किया जाता है,* सेवार्थी की शारीरिक मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक कार्यात्मकता का निरीक्षण एव परीक्षण किया जाता है, पर्यावरण सम्बन्धी कारको को समस्या के सन्दर्भ मे देखा जाता है तथा सेवार्थी एव पर्यावरण दोनो

की एक साथ व्याख्या करते हुये समस्या के सम्बन्ध मे कुछ निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

निदान की प्रक्रिया के चरण (Steps in the process of diagnosis)

निदान की प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण है

(1) आंकड़ो का संग्रह (Collection of data)

इस चरण मे सेवार्थी से सम्बन्धित सभी क्षेत्रीय तथा अभिलेखीय स्रोतो का प्रयोग करते हुये सेवार्थी की समस्या, उसके व्यक्तित्व तथा सामाजिक–सास्कृतिक परिवेश के सम्बन्ध मे व्यापक सूचना एकत्र की जाती है। सेवार्थी से सम्बन्धित रिपोर्टो, सस्था के अभिलेखो, मनोचिकित्सको तथा मनोवेज्ञानिको की रिपोर्टो, विद्यालय तथा अन्य सेवा सस्थाओ से मिली जानकारी, परिवारजनो, मित्रो, सम्बन्धियो, पडोसियो, इत्यादि से प्राप्त सूचना को एकत्रित किया जाता हे।

(2) तथ्यों का मूल्यांकन (Evaluation of facts)

वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के सम्बन्ध मे एकत्रित किये गये तथ्यो का तीन प्रकार से मूल्यांकन करता है ·

(i) *समस्या का मूल्यांकन (Evaluation of problem)*

यहां पर वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता यह जानने का प्रयास करता है कि समस्या का स्वरूप क्या है। यह शारीरिक कष्ट प्रदान करने वाली समस्या है मनोवैज्ञानिक दवाव डालने वाली समस्या है, असमायोजन सम्बन्धी समस्या है, भूमिका सम्पादन सम्बन्धी समस्या है, इत्यादि। समस्या का मूल्यांकन करते समय वेयक्तिक समाज कार्यकर्ता इस प्रकार की स्पष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहता है कि सेवार्थी किस समस्या से ग्रस्त है, उसकी समस्या का प्रादुर्भाव कव हुआ, समस्या को सुलझाने की दिशा में कब–कव और क्या–क्या प्रयास किये गये, इन प्रयासों मे क्या सफलता मिली तथा इन प्रयासो को क्यों बंद कर दिया गया।

(ii) *व्यक्तित्व का मूल्यांकन (Evaluation of personality)*

वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की अहम् शक्ति का मूल्यांकन करता है। ऐसा करते हुये वह यह जानने का प्रयास करता है कि सेवार्थी के अतीत के अनुभव क्या रहे हैं। उसके निर्णय की क्या स्थिति है तथा उसमे बाहर एव आन्तरिक दबावो से निपटने की क्षमता क्या है।

(iii) *पर्यावरण का मूल्यांकन (Evaluation of environment)*

यहा पर वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी के परिवार, पडोस, विद्यालय, धार्मिक सस्थाओ, आर्थिक सस्थाओ, राजनीतिक सस्थाओ, मनोरजनात्मक सस्थाओ, इत्यादि के बारे मे मूल्यांकन करता है। यह मूल्यांकन करते समय वह विभिन्न प्रकार की सस्थाओ के साथ सेवार्थी के सम्बन्धो, इन सस्थाओ द्वारा सेवार्थी पर डाले गये प्रभावो तथा इन सस्थाओ के सन्दर्भ मे सेवार्थी द्वारा प्रतिपादित की गयी भूमिकाओ ओर इनके उद्देश्यो की प्राप्ति मे सेवार्थी द्वारा प्रदान किये गये योगदान का मूल्यांकन करता है।

(3) कारणात्मक कारको की खोज (Search of etiological factors)

इस चरण मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता यह सुनिश्चित करने का प्रयास करता है कि (1) *समस्या का स्वरूप क्या है,* (2) *सामाजिक* पर्यावरण का सेवार्थी के व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पडा है, तथा (3) समस्या की उत्पत्ति के लिये मुख्य रूप से कोन से कारक उत्तरदायी रहे हैं।

(4) वर्गीकरण (Classification)

इस चरण मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता समस्या का उसके प्रकार, कारणो समाधान के लिये अपेक्षित उपायो, इत्यादि के आधार पर वर्गीकरण करता है।

निदान के प्रकार (Forms of diagnosis)

पर्लमेन के मत मे निदान के तीन प्रकार हैं (1) गतिशील निदान (Dynamic diagnosis), (2) क्लीनिकल निदान (Clinical diagnosis), तथा (3) कारणात्मक निदान (Etiological diagnosis)।

(1) गतिशील निदान

गतिशील निदान वह निदान है जो व्यक्ति–समस्या–परिस्थिति की जटिलता मे सक्रिय रूप से भूमिका निभाने वाली शक्तियो का निदान करता है। इसके अतर्गत उन बातो को सम्मिलित किया जाता है जिन्हे सामान्य रूप से मनोसामाजिक कहा जाता है तथा इसके साथ ही साथ इसके अतर्गत सेवार्थी की वर्तमान क्रियाविधि को भी सम्मिलित किया जाता हे।

गतिशील निदान सेवार्थी की समस्या सम्बन्धी परिस्थिति को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारको का निदान है। ये शक्तियां सेवार्थी के अन्दर उसकी उसकी सामाजिक परिस्थिति मे अथवा उसके तथा उसकी परिस्थिति के बीच कार्यरत होती हैं। गतिशील निदान यह पता लगाने का प्रयास करना हे कि समस्या क्या है, कौन से मनोवेज्ञानिक, भौतिक अथवा सामाजिक कारक इसकी उत्पत्ति मे योगदान दे रहे हैं, इसका सेवार्थी तथा अन्य व्यक्तियो के कल्याण पर क्या प्रभाव पड रहा है, किस प्रकार का समाधान खोजा रहा है तथा सेवार्थी, उसकी परिस्थिति, आयोजित सेवाओ एव उपलब्ध ससाधनो मे क्या सम्बन्ध पाये जा रहे हैं।

गतिशील निदान सरल अथवा जटिल दोनो प्रकार का हो सकता है। कहीं मनोवेज्ञानिक कारक अधिक प्रभावपूर्ण हो सकते हैं तो कही सामाजिक कारक वेयक्तिक कार्य की प्रारम्भिक स्थिति मे निदानात्मक खोज का केन्द्र बिन्दु बदलता रहता है। इसका अर्थ यह नहीं कि यह पूर्णरूपेण बदल जाता है। इसमे सेवार्थी तथा उसकी परिस्थिति के

बारे मे अधिकाधिक ज्ञान प्राप्त होने के साथ आवश्यक परिवर्तन किये जाते रहते हैं।

(2) क्लिनिकल निदान

क्लिनिकल निदान व्यक्ति को उसकी बीमारी की प्रकृति के अनुसार वर्गीकृत करने का एक प्रयास है। इसके अतर्गत उसके व्यक्तित्व के कुसमायोजन के कुछ स्वरूपो एव लक्षणो तथा उसकी दुष्क्रिया (malfunctioning) के लक्षणो स्वरूप, आवश्यकताओ एव व्यवहार के स्वरूपो का पता लगाया जाता है। इनसे यह पता चलता है कि व्यक्ति के प्रत्युत्तर तथा क्रिया के प्रतिमान किस प्रकार के होगे तथा ये उसके अन्तर्वैयक्तिक एव सामाजिक सम्बन्धो को किस प्रकार प्रभावित करेगे। जब यह पता चलता है कि समस्या सेवार्थी के व्यक्तित्व सम्बन्धी सरचना अथवा क्रियाओ द्वारा उत्पन्न की गयी है अथवा समस्या और/अथवा इसका समाधान इनसे अत्यधिक प्रभावित हो रहा है तो व्यक्तित्व सम्बन्धी कुसमायोजन अथवा दुष्कार्य का पता लगाया जाता है और इसका मूल्याकन किया जाता है, तो इसे क्लिनिकल निदान अर्थात व्यक्ति मे स्वय पायी जाने वाली गड़बड़ी का वर्गीकरण एव मूल्याकन कहा जाता है।

क्लिनिकल निदान मे कार्यरत वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता मे इस बात की योग्यता होनी चाहिये कि वह इस बात की पहचान कर सके कि सेवार्थी के व्यक्तित्व मे कुल मिलाकर दु ख की क्या स्थिति है अर्थात उसमे मनो–विकास मनो–स्नायुविकृति, चारित्रिक एव व्यवहारिक विसगतियो के लक्षणों को पहचानने की योग्यता होनी चाहिये। इस प्रकार का निदान मनश्चिकित्सकों के सहयोग से किया जाता है।

(3) कारणात्मक निदान

सामान्य प्रयोग मे कारणात्मक निदान का सम्बन्ध निकटवर्ती कारणो (immediate causes) से कम होता है तथा समस्या की प्रारम्भिक स्थिति और जीवन इतिहास से अधिक। इसका सम्बन्ध ऐसी

समस्या से होता है जो सेवार्थी के व्यक्तित्व अथवा उसकी क्रिया मे सन्निहित होती है। सेवार्थी के इतिहास मे समस्याग्रस्त होने, इनका सामना करने तथा समाधान करने की घटनाये वैयक्तिक समाज कार्य कर्ता को इस बात की जानकारी प्रदान कर सकती हैं कि सेवार्थी किस समस्या से ग्रस्त है और समस्या का सामना करने की उसकी क्षमता क्या है। इस प्रकार का निदान ऐसे अनुपयुक्त व्यवहार अथवा स्थिर प्रतिक्रियाओं (rigid reactions) को समझने मे सहायक सिद्ध होता है जो प्रारम्भ से ही पाये जाते रहे हैं। कारणात्मक निदान से समस्या ग्रस्त व्यक्ति तथा इसके समाधान मे सहायक सिद्ध होने इससे प्राप्त वाले साधनो को समझने में सहायता मिलती है।

साराश मे, वैयक्तिक कार्य निदानात्मक प्रक्रिया तथा इससे प्राप्त परिणाम का उद्‌देश्य वैयक्तिक समाज कार्य कर्ता की सहायता प्रदान करने के इरादो एव निपुणताओ की सीमा का ज्ञान कराना सार्थकता एव निर्देशन प्रदान करना है। एक प्रक्रिया के रूप मे यह सेवार्थी के व्यक्तित्व के प्रकार, उसकी आन्तरिक तथा वाह्य क्रिया एवं संसाधनो तथा संस्था के सहायतामूलक साधनो के संदर्भ मे समस्या की प्रकृति का पता लगाने एव मूल्यांकन करने का प्रयास करती है। इससे प्राप्त परिणाम कर्ता तथा सेवार्थी के बीच होने वाली अन्तर्क्रिया के महत्वपूर्ण बिन्दु स्पष्ट करता तथा आवश्यक निर्देशन प्रदान करता है। यह कार्य–कारण सम्बन्धों का पता लगाती है ताकि समस्या के रोकने अथवा इसमें परिवर्तन लाने की दृष्टि से सार्थक हस्तक्षेप किये जा सकें। इसके अंतर्गत कोई उपचार का नुस्खा नहीं लिखा जाता बल्कि कुछ सामान्य प्रत्याशाओ (Expectations) की ओर इशारा किया जाता है और इस प्रकार वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता की क्रियाओ को मार्गदर्शन दिया जाता है।

मूल्यांकन (Evaluation)

निदान की भांति मूल्यांकन सेवार्थी के संस्था मे आने के साथ से ही प्रारम्भ हो जाता है और अन्त तक चलता रहता है। सेवार्थी की

क्षमताओं एव अक्षमताओ, उपलब्ध सहायता के उपयोग की इच्छा एव अनिच्छा, उसके सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के सास्कृतिक कारको इत्यादि के सम्बन्ध मे अनुमान लगाते हुये निर्णय लिये जाने को मूल्याकन के नाम से जाना जाता है। गार्डन हैमिल्टन के अनुसार "मूल्याकन एक निर्णय लेने वाली ऐसी प्रक्रिया है जो यह निश्चित करती है कि व्यक्ति, कार्यकर्ता तथा सस्था का क्या उत्तरदायित्व है, इसको पूरा करने की क्षमता कितनी है, शक्तिया क्या–क्या हैं, कौन से कार्य रचनात्मक सहयोग प्रदान करते हैं तथा कौन से कार्य समस्या को जटिल बनाते हैं। इस प्रकार मूल्याकन का उद्देश्य दार्शनिक एव नैतिक ज्ञान है।" मूल्याकन कार्यकर्ता किसी निर्णय पर पहुचने के लिये नकारात्मक कारको के विरुद्ध सकारात्मक कारको का सतुलन बनाये रखता है।

मूल्यांकन का सहारा लेते हुये कार्यकर्ता यह जानने का प्रयास करता है कि सेवार्थी ने उद्देश्यो को प्राप्त करने अथवा समस्या का समाधान करने का कितना तथा क्या प्रयास किया है, वह समस्या का अनुभव किस प्रकार कर रहा है, वह किस सीमा तक सहायता लेने की इच्छा रखता है, सस्था द्वारा किस सीमा तक सहायता प्रदान की जा सकती है, उपचार पद्धति कितनी उपयोगी है, उपचार मे नियोजन, नियंत्रण तथा परिमार्जन की कितनी सुविधा है तथा कर्ता की अपनी शक्तियां एव क्षमताये क्या हैं।

मूल्यांकन के परिणामस्वरूप समस्या की गभीरता तथा इसके सेवार्थी की क्रियाविधि के लिये महत्व की जानकारी प्राप्त होती है, सेवार्थी के मनोबल का पता चलता है, विभिन्न प्रकार के अवरोधो एव बाधाओ की जानकारी हासिल होती है, सेवार्थी की इच्छा शक्ति का पता चलता है, प्रदान की जाने वाली सेवा की उपयोगिता स्पष्ट होती है, सेवार्थी की क्षमताओं, शक्तियों, निपुणताओं, सम्बन्धो इत्यादि के साथ ही साथ उसकी कमियो, अक्षमताओ, दोषो तथा सघर्षो पर प्रकाश पडता है, सेवार्थी की सहायता की आवश्यकता की सीमा की जानकारी

उपलब्ध होती है, निदान मे परिवर्तन तथा उपचार पद्धति मे संशोधन करने की आवश्यकता उजागर होती है तथा वैयक्तिक समाजकार्य के ढगो एव प्रविधियो की उपयुक्तता के वारे मे ज्ञान प्राप्त होता है।

मूल्याकन का कार्यक्षेत्र तीन श्रेणियो मे वर्गीकृत किया जा सकता है · (1) समस्या का मूल्यांकन, (2) सेवार्थी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन, तथा (3) सामाजिक पर्यावरण का मूल्याकन।

समस्या का मूल्याकन करते समय इस सम्बन्ध में निर्णय लिये जाते हैं कि समस्या का स्वरूप क्या है, समस्या कब प्रारम्भ हुई, समस्या से सबधित विभिन्न कारण क्या हैं, समस्या समाधान की दिशा मे क्या प्रयास किये गये हैं, इन प्रयासो मे कितनी सफलता प्राप्त हुई है, समस्या समाधान के लिये किस प्रकार के ढगो, एवं साधनों की आवश्यकता हे, सेवार्थी मे स्वयं कितनी क्षमता है, सेवार्थी के जीवन पर समस्या का क्या प्रभाव पडा है, इत्यादि।

सेवार्थी के व्यक्तित्व का मूल्याकन करते समय इस संबंध मे निर्णय लिये जाते हैं कि सेवार्थी की अहम् शक्ति की क्या स्थिति है, यह कितनी निर्बल एवं शक्तिशाली है, सेवार्थी के व्यवहार के प्रतिमान क्या हैं, सेवार्थी के अनुभव क्या हैं, सेवार्थी की निर्णय लेने की शक्ति क्या है, सेवार्थी पर पडने वाले वाह्य तथा आन्तरिक दवाव क्या हैं, सेवार्थी की आशाये क्या हैं, संस्था की आशायें एव प्रत्याशायें क्या हैं, सेवार्थी मे समायोजन करने की क्षमता की क्या स्थिति है, सेवार्थी द्वारा विभिन्न मनोरक्षात्मक ढंगों का उपयोग किये जाने की क्या स्थिति है, इत्यादि।

सामाजिक पर्यावरण का मूल्यांकन करते समय इस सम्बन्ध मे निर्णय लिये जाते हैं कि सेवार्थी की विभिन्न प्रकार की परिस्थितियां क्या हैं, उसको प्रभावित करने वाली विभिन्न प्रकार की घटनायें कौन–कौन सी रही हैं, उस पर प्रभाव डालने वाले विभिन्न प्रकार के व्यक्ति कौन–कौन से रहे हैं, इन घटनाओ तथा व्यक्तियों का वास्तविक प्रभाव क्या रहा है, तथा सेवार्थी का अपने पर्यावरण के प्रति रुख क्या है।

निदान एव मूल्यांकन मे अन्तर्सम्बन्ध
(Inter-relatedness between diagnosis and evaluation)

निदान समस्या के समुचित उपचार के लिये इसके कारणो की खोज हे जबकि मूल्याकन समस्या–समाधान की दृष्टि से सेवार्थी की शक्तियों एवं कमियो का अन्वेषण है। इन दोना मे भिन्नताये तथा समानताये दोनो ही पायी जाती हैं। इन दोनो मे निम्नलिखित अन्तर बताये जा सकते हैं

(1) निदान से सेवार्थी की मनो–सामाजिक समस्या के कारणो का ज्ञान प्राप्त होता है जबकि मूल्याकन से सेवार्थी की क्षमता, आन्तरिक तथा वाह्य स्रोतो तथा कार्यात्मकता का ज्ञान प्राप्त होता है।

(2) निदान की प्रक्रिया में प्रमुख रूप से समस्या का प्रत्यक्षीकरण किया जाता है जबकि मूल्याकन मे प्रमुख रूप से समस्याग्रस्त व्यक्ति का प्रत्यक्षीकरण किया जाता है।

(3) मूल्याकन का लक्ष्य सामाजिक है जबकि निदान का लक्ष्य इस सामाजिक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सेवार्थी की क्षमताओ का पता लगाना है।

(4) निदान सबधी निपुणता कर्ता के मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक ज्ञान पर निर्भर करती है जबकि मूल्याकन करने की निपुणता कर्ता के तार्किक विचारो तथा अनुभवो एव भावनाओ पर निर्भर करती है।

निदान तथा मूल्याकन दोनो मे इस आशय की समानता पायी जाती है कि दोनो उपचार की प्रक्रिया को प्रभावी बनाने मे योगदान देते हुये समस्या का समाधान प्रस्तुत कर समायोजन लाने मे सहायक सिद्ध होते हैं।

3. वैयक्तिक समाज कार्य में उपचार की विधियां
(Treatment methods in social casework)

वैयक्तिक समाज कार्य में उपचार का उद्देश्य सामाजिक अनुकूलन

लाना अथवा सामजस्य की दृष्टि से सेवार्थी की क्रियाविधि को स्थिर बनाना अथवा इसमे सुधार करना होता है। इसमे आन्तरिक एव वाह्य शक्तियो के बीच सतुलन लाने का प्रयास किया जाता है तथा अध्ययन एव निदान के दौरान अपनाये गये मनोवैज्ञानिक अभिगम को उपचार के दौरान भी बनाये रखा जाता है। वैयक्तिक समाज कार्य की विशिष्ट विशेषता के रूप मे सेवार्थी–कर्ता सबधो के चेतन एव नियंत्रित उपयोग, साक्षात्कार की प्रक्रिया मे निपुणता सामाजिक ससाधनो के ज्ञान एव निपुणता, एजेन्सी की नीतियो एव सेवाओ तथा विभिन्न एजेन्सियो के बीच सहयोग के प्रयोग एव निर्वचन मे निपुणता का प्रयोग किया जाता है। उपचार सदैव समुदाय की सस्कृति एव इसमे उपलब्ध अवसरो द्वारा तथा वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता एव उसके सहयोगियो की रुझान एव निपुणता द्वारा प्रभावित होता है।

उपचार का उद्देश्य वैयक्तिक सामजस्य, प्रत्यक्ष उपचार प्रदान करना, पर्यावरणात्मक परिवर्तन करना इत्यादि हो सकता है। उद्देश्यों की प्राप्ति तभी सभव है जब स्वयं सेवार्थी अपने मे परिवर्तन लाना चाहता हो तथा वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता द्वारा निर्धारित किये गये उपचार को स्वीकार करने तथा इसने सक्रिय भूमिका निभाने के लिये तैयार हो।

उपचार के उद्देश्य एवं केन्द्र विन्दु
(Objectives and centre of treatment)

मनो–सामाजिक समायोजन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य सामाजिक विघटन को रोकना, शक्तियो को संकलित करना, सामाजिक क्रियाविधि को फिर से सामान्य बनाना, जीवन के अनुभवो को अधिक संतोषजनक तथा लाभ प्रदान करने वाले बनाना, अभिवृद्धि एव विकास के अवसर उपलब्ध कराना तथा आत्मनिर्देशन करने एवं सामाजिक अंशदान देने की क्षमता मे वृद्धि करना होता हैं।

मनो–सामाजिक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित प्रयास किये जाते हैं :

(1) वित्तीय सहायता की आपूर्ति के सुनिश्चित किए जाने अथवा बच्चो के रखे जाने अथवा विद्यालय के कार्यक्रमो मे सशोधन किये जाने जैसे पर्यावरण मे परिवर्तन द्वारा व्यक्ति की परिस्थिति मे परिवर्तन किया जाता है अथवा सुधार लाया जाता है।

(2) पर्यावरण मे परिवर्तन (Environmental manipulation) अथवा प्रत्यक्ष साक्षात्कार सम्बन्धी उपचार (Direct Interviewing Treatment) द्वारा सामाजिक परिस्थिति के अतर्गत मनोवृत्तियो अथवा व्यवहार मे परिवर्तन करके व्यक्ति की सहायता की जाती है।

(3) इन दोनो व्यक्ति की परिस्थिति मे परिवर्तन तथा पर्यावरण मे परिवर्तन का मिश्रित प्रयोग किया जाता है। कभी कभी मनोवैज्ञानिक एव व्यवहारिक समर्थन के माध्यम से परिस्थिति को और अधिक न बिगडने देने, ओर यथास्थिति को बनाये रखने का उद्देश्य निर्धारित किया जाता है। यह उल्लेखनीय है कि अन्य समूहो की सहायता से सामान्य आर्थिक एव सास्कृतिक परिस्थितियो मे सुधार लाने के उद्देश्य की ओर उन्मुख सामाजिक क्रिया समाज कार्यकर्ताओ का भी उत्तरदायित्व होती है किन्तु इस प्रकार की सामाजिक क्रिया वैयक्तिक कार्य प्रक्रिया का एक अग नही होती क्योकि इसके अतर्गत एक विशिष्ट परिस्थिति मे आन्तरिक एव वाह्य शक्तियो के बीच सतुलन बनाये रखने का प्रयास किया जाता है।

उपचार के साधन (*Means of treatment*)

उपचार के साधनो का वर्णन तीन श्रेणियो मे किया जा सकता है (1) व्यावहारिक सेवाओ का प्रशासन, (2) पर्यावरण मे परिवर्तन, तथा (3) प्रत्यक्ष उपचार

व्यावहारिक सेवाओ का प्रशासन
(Administration of practical services)

वैयक्तिक समाज कार्य उपचार के विविध प्रकारो मे से व्यावहारिक

सेवाओ का प्रशासन सर्वाधिक प्राचीन तथा विख्यात है। सर्वप्रथम इसका वर्णन करने का प्रयास पोर्टर ली के नेतृत्व मे किया गया था। वर्तमान समय मे इसे "समाज कल्याण प्रशासन" के नाम से भी जाना जाता है। इसके अतर्गत वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की इस बात मे सहायता करता है कि वह समुदाय के सामाजिक ससाधनो मे से अपनी आवश्यकतानुसार चयन करते हुये उनका प्रयोग कर सके। यहा पर भी माध्यम के रूप मे वैयक्तिक कार्य सबध उस सीमा तक कार्य करता है जिस सीमा तक साक्षात्कार का प्रयोग विचार विमर्श, सूचना एव स्पष्टीकरण के साधन के रूप मे किया जाता है। एक परिपक्व व्यक्ति सम्बन्ध के बारे मे बहुत कम सचेत होता है तथा ससाधन को ही महत्त्वपूर्ण मानता है किन्तु यदि सेवार्थी अशक्त अथवा बीमार हो तो सम्बन्ध समर्थन प्रदान करने का कार्य बहुत अच्छी प्रकार से कर सकता है और वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की पहुच के अन्दर संसाधन को अधिक सक्रिय रूप से ला सकता है किन्तु यदि "निर्बल चरित्र" अथवा अहम् सरचना के कारण सेवार्थी में वास्तविक परिस्थितियो का सामना करने की क्षमता की कमी हो अथवा उसे वास्तविकता का सही ज्ञान न हो अथवा वह अपनी भावनाओ के आधार पर परिस्थितियो, सीमाओ एव सास्कृतिक रूढियो के प्रति प्रतिक्रिया करता हो, अथवा उसके अन्दर समाज के प्रति सामान्य अशदान देने अथवा सतोष प्राप्त करने मे अपने स्तर पर हिचक पायी जाती है तो एक शैक्षिक, परिवर्तनकारी अथवा चिकित्सकीय प्रक्रिया का सहारा लिया जा सकता है। हार्वर्ट आप्टेकर जैसे कुछ लोगो का ऐसा मत है कि व्यावहारिक सेवा के प्रदान किये जाने पर ही सहायता प्रक्रिया को वैयक्तिक कार्य माना जाना चाहिये। किन्तु हैमिल्टन ने इस बात को स्वीकार नहीं किया है। वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता अपनी एजेन्सी अथवा अन्य एजेन्सियो के माध्यम से सेवाओ की व्यवस्था करा सकता है। व्यवहारिक सेवाओं के उचित प्रयोग के लिये निदानात्मक सर्वेक्षण, सेवार्थी की शक्तियो एव ससाधनो का मूल्याकन तथा उसके संस्था द्वारा अपनाये जाने अथवा किसी उपयुक्त एजेन्सी मे भेजे जाने

का कार्य आवश्यक होता है। समाज सेवा के प्रावधान के साथ परामर्श भी दिया जा सकता है।

प्राय सेवार्थी अपनी आवश्यकता के बारे मे जानता है किन्तु उसे यह पता नहीं होता कि इस आवश्यकता की पूर्ति के लिये अपेक्षित सेवा अथवा ससाधन कहा प्राप्त होगा। कभी–कभी उसे अपनी आवश्यकता का स्पष्ट ज्ञान भी नहीं होता तथा कभी–कभी वह बाधिता का इतना गभीर रूप से शिकार होता है कि वह अपने लिये कुछ नही कर सकता। इन सभी परिस्थितियो मे वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता आवश्यक सहायता उपलब्ध कराता है। यथासभव अपनी सस्था के ससाधनो का प्रयोग करते हुये यह सहायता प्रदान की जानी चाहिये किन्तु अपनी एजेन्सी मे उपयुक्त सहायता उपलब्ध न होने की स्थिति मे किसी अन्य ऐसी एजेन्सी मे भेजा जाना चाहिये जहा सबसे अच्छी सेवाये उपलब्ध हो सके। व्यावहारिक सेवाओ का समुचित रूप से उपलब्ध कराया जाना वैयक्तिक समाज कार्य मे महत्पूर्ण स्थान रखता है। सम्पूर्ण उपचार का बहुत बडा हिस्सा इन्ही व्यावहारिक सेवाओ से सबधित है। ससाधन "उपचार" होता है, किन्तु वैयक्तिक समाज कार्य प्रणाली इसका रचनात्मक प्रयोग किये जाने मे व्यक्ति की सहायता करती है।

इस प्रकार की व्यावहारिक सेवाओ के अतर्गत वित्तीय सहायता का उपलब्ध कराया जाना, शरण की व्यवस्था किया जाना, विधिक परामर्श अथवा चिकित्सकीय सहायता प्रदान किया जाना शिविरं की व्यवस्था किया जाना, इत्यादि आते हैं। सहायता के सर्वोत्तम स्रोतो के निर्धारण के लिये समुदाय के सास्कृतिक प्रतिमानो तथा एजेन्सी के कार्यो की विस्तृत जानकारी आवश्यक होती है।

पर्यावरण में परिवर्तन (Environmental manipulation)

परिवर्तन शब्द का अर्थ यह कदापि नही कि वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता अपने प्रत्ययो एव योजनाओ को सेवार्थी के ऊपर जबर्दस्ती थोपे अथवा चुपके से कुछ निहित स्वार्थो से प्रेरित होते हुये परिस्थिति

को इस प्रकार बदले कि उससे उसके अपने उद्देश्यो की पूर्ति हो सके। यहा पर परिवर्तन शब्द का प्रयोग रचनात्मक अर्थ मे किया जा रहा है जो सेवार्थी की व्यक्तित्व सम्बन्धी सरचना उसके व्यवहार के प्रतिमानो, मनोवृत्तियो, आवश्यकताओ, सघर्षो, रक्षा–युक्तियो, इत्यादि को भली प्रकार समझ लेने के पश्चात् किया जाता है। वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्याओ का समाधान करने के लिये सुझाव दे सकता है। वह उसके साथ रागात्मक, व्यावसायिक एव मनोरजनात्मक क्रियाओ की योजना बना सकता है। वह सेवार्थी की समस्या के प्रति मनोवृत्तियो एव अभिगमो को परिवर्तित कर सकता है। वह समायोजन के लिये आवश्यक सवेगात्मक परिवर्तन कर सकता है।

पर्यावरण परिवर्तन के दौरान सेवार्थी को एक अधिक लाभकारी परिस्थितियो (conditions) मे रखा जा सकता है ताकि वह अपने को एक अधिक हितकारी वास्तविकता मे पाकर अधिक अच्छे ढग से कार्य करने लगे और बाद मे अपनी सामान्य जीवन परिस्थितियो को अधिक अच्छे ढंग से सामना करने की क्षमता विकसित कर सके। इस नवीन संस्थिति मे प्राप्त होने वाले अनुभव उसकी पुरानी मनोवृत्तियो मे परिवर्तन कर सकते हैं तथा नयी मनोवृत्तियों को जन्म दे सकते हैं।

पर्यावरण परिवर्तन के दौरान मनोरंजन सबधी कार्यक्रमो का भी आयोजन किया जाता है ताकि सेवार्थी की आन्तरिक आवश्यकताओ की पूर्ति हो सके। उदाहरण के लिये, उसकी क्रोध, ईर्ष्या, इत्यादि जैसी भावनाओं को रचनात्मक रूप से व्यक्त होने के अवसर प्राप्त हो। पर्यावरण संबधी परिवर्तन के अन्तर्गत तनाव को कम करने वाले कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते हैं। बाधितो के साथ कार्य करते हुये इस प्रकार के कार्यक्रमो का आयोजन किया जाता है कि उन्हे प्रतियोगिता का सहारा न लेना पडे। इन विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमो को आयोजित करने के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामाजिक परिस्थितियो से प्राप्त अनुभवो के माध्यम से सहायता प्रदान करने के साथ–साथ

कुछ व्यावहारिक साधनो की आपूर्ति का भी सहारा लिया जाता है किन्तु व्यावहारिक साधनों की इस आपूर्ति को व्यावहारिक सेवाओ के प्रशासन से भिन्न समझा जाना चाहिये क्योंकि इस आपूर्ति के दारान सेवार्थी के प्रति अन्य व्यक्तियों की मनोवृत्ति के परिवर्तन पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इस प्रकार के अन्तर्वयक्तिक सामजस्य के लिये सेवार्थी के लिये महत्वपूर्ण व्यक्तियो उदाहरणार्थ उसके परिवारजनो, शिक्षको मित्रो इत्यादि की मनोवृत्तियो म परिवर्तन किया जाना आवश्यक होता है। विशेष रूप से इन महत्वपूर्ण व्यक्तियो की नकारात्मक मनोवृत्तियों को परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है।

प्रत्यक्ष उपचार (Direct treatment)

प्रत्यक्ष उपचार से हमारा अभिप्राय साक्षात्कारो की एक ऐसी श्रृखला से है जो सवेगात्मक सतुलन को बनाये रखने, रचनात्मक निर्णयों को लेने तथा अभिवृद्धि अथवा परिवर्तन के लिये उपयुक्त मनोवृत्तियो को उत्पन्न करने अथवा सवल प्रदान करने के लिये आयोजित किये जाते हैं। इसके अतर्गत मनोवैज्ञानिक समर्थन (Psychological Support) को भी सम्मिलित किया जाता है क्योकि यह वैयक्तिक कार्य प्रणालियो के मनोसामाजिक सामजस्य मे एक महत्त्वपूर्ण कारक होता है।

प्रत्यक्ष उपचार मे निम्नलिखित प्रविधियो का सहारा लिया जाता है (1) मत्रणा, (2) चिकित्सकीय साक्षात्कार, (3) मनोवैज्ञानिक आलवन, (4) स्पष्टीकरण, (5) अन्तर्दृष्टि का विकास (6) निर्वचन, (7) सुझाव, (8) पुनराश्वासन, (9) अनुनय (10) पुनर्शिक्षा तथा (11) सामूहिक चिकित्सा।

(1) मत्रणा (Counselling)

यह एक शैक्षिक प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य सेवार्थी को उसकी परिस्थिति से सम्बन्धित विभिन्न मसलों की विवेकपूर्ण ढग से विवेचना

करने, उसकी समस्या को स्पष्ट करने, वास्तविकता के साथ उसके संघर्षो को सामने लाने, विभिन्न प्रकार के क्रिया सम्बन्धी विकल्पो की व्यावहारिकता पर विचार विमर्श करने तथा विभिन्न विकल्पो में चयन करने के उत्तरदायित्व को ग्रहण करने की दृष्टि से सेवार्थी को स्वतंत्रता प्रदान करने में सहायता प्रदान करता है। वर्तमान समय मे परामर्श शब्द का प्रयोग मनमाने ढग से मार्गदर्शन से सबधित विविध प्रकार की कियाओ को सम्बोधित करने के लिये किया जाता है। यहा पर परामर्श शब्द का प्रयोग ऐसे वैयक्तिक परामर्श को सम्बोधित करने के लिये किया जा रहा है जिसके लिये व्यावसायिक शिक्षा, प्रशिक्षण तथा साक्षात्कार संबधी अनुभव की आवश्यकता होती हे। साक्षात्कार का इस प्रकार प्रयोग करने के लिये कि इसके परिणामस्वरूप सेवार्थी के मस्तिष्क मे परिवर्तन हो सके, विशेष प्रकार के ज्ञान एव निपुणता की आवश्यकता होती है। प्रमुख रूप से अपनायी गयी प्रविधि, समस्या तथा इसके प्रति भावनाओ एवं मनोवृत्तियो के स्पष्टीकरण की है।

मंत्रणा के अन्तर्गत सूचना का प्रदान किया जाना, परिस्थिति का स्पष्ट किया जाना तथा इससे सम्बन्धित विभिन्न मुददो का विश्लेषण किया जाना तथा क्रिया से संबंधित विभिन्न चरणो का विवेचन किया जाना सम्मिलित है। इसका प्रयोग परिस्थिति की वास्तविकताओ से सम्बन्धित विषयो पर विचार विमर्श करने तथा यह निर्धारित करने के लिये कि इसका कितना अंश इच्छा अथवा कल्पना से सम्बन्धित है, किया जाता है। यदि सामाजिक समस्या से कोई अन्य व्यक्ति सम्बन्धित होता हे तो मंत्रणा मनोचिकित्सा (Psychotherapy) का स्वरूप ग्रहण करने लगती है। अपने अधिक सरल स्वरूपों मे मंत्रणा का उद्देश्य बौद्धिक ज्ञान प्राप्त करना होता है।

(2) चिकित्सकीय साक्षात्कार (Therapeutic interviewing)

इस पकार के साक्षात्कार का प्रयोग उस समय किया जाता हे जबकि सेवार्थी किसी प्रकार की बीमारी अथवा असमर्थता का शिकार होता है। इस प्रकार के साक्षात्कार के दौरान सेवार्थी को किसी

शान्तिपूर्ण कमरे मे बैठाकर कार्यकर्ता उसे अपनी समस्या को बिना किसी बाधा के व्यक्त करने के लिये कहता है। बीच–बीच मे कार्यकर्ता सेवार्थी को सवेगात्मक भावनाये व्यक्त करने मे सहारा भी प्रदान करता है। इस प्रकार के साक्षात्कार के परिणामस्वरूप सेवार्थी के कष्टदायी विचारो की अभिव्यक्ति हो जाती है और वह आराम महसूस करने लगता है।

(3) मनोवैज्ञानिक आलंबन (Psychological support)

मनोवैज्ञानिक आलबन प्रदान करते हुये वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी को भावनाओ को व्यक्त करने के लिये प्रोत्साहित करता है, उसकी भावनाओ को समझता है तथा स्वीकृति प्रदान करता है, सेवार्थी मे समस्या–समाधान के लिये अपेक्षित रुचि उत्पन्न करता है, वह अपने द्वारा प्रदान की गयी सहायता के प्रकार को स्पष्ट करता है, समस्या–समाधान की क्षमता उत्पन्न करता है तथा आवश्यकतानुसार योजना तैयार करने मे सहायता प्रदान करता है। मनोवैज्ञानिक आलबन के परिणामस्वरूप सेवार्थी को प्रत्यक्ष रूप से उत्साह मिलता है और उसमे अपनी समस्या का समाधान करने की योग्यता मे विश्वास उत्पन्न होने लगता है।

(4) स्पष्टीकरण (Clarification)

डा एडवर्ड बाइब्रिग के शब्दो मे, "स्पष्टीकरण रोगी को कुछ मनोवृत्तियो, भावनाओं के प्रति सचेत बनाते हुये अथवा इसकी यथार्थ बनाम रागात्मक अवधारणा को स्पष्ट करते हुये उसे स्वय अपने आपको तथा पर्यावरण को एक अधिक विषयात्मक ढग से देखने की अनुमति प्रदान करता है जिससे अधिक अच्छा नियन्त्रण हो जाता है। स्पष्टीकरण की प्रक्रिया के दौरान सेवार्थी को पर्यावरण अथवा उससे सबधित महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो के सम्बन्ध मे ऐसी सूचनाये प्रदान की जाती हैं जिनकी जानकारी पहले से सेवार्थी को नहीं होती तथा जिनके बिना वह न तो समस्या का और न ही अपनी शक्तियो का और

न ही विभिन्न प्रकार के उपलब्ध विकल्पो का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इस प्रविधि के परिणामस्वरूप सेवार्थी स्वय अपने आप को, अपनी समस्या को अपने से सम्बन्धित महत्वपूर्ण व्यक्तियो को और अपने पर्यावरण को विषयात्मक रूप से समझने लगता है।

(5) अन्तर्दृष्टि का विकास (Insight development)

कभी–कभी सघर्षात्मक भावनाये तथा उत्तेजक सवेग वास्तविकता को समझने की शक्ति को नष्ट कर देते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति आन्तरिक प्रत्यक्षीकरण के अभाव से ग्रस्त हो जाता है और समुचित निर्णय नही ले पाता। आन्तरिक प्रत्यक्षीकरण को ही अन्तर्दृष्टि कहते हैं। ऐसी स्थिति मे कार्यकर्ता सेवार्थी के आन्तरिक आवश्यकताओ के प्रत्यक्षीकरण तथा वाह्य वातावरण के प्रति विषयात्मक प्रत्युत्तरो को समझने मे सहायता करता है, सेवार्थी के अन्दर पायी जाने वाली घृणा एवं प्रेम की वास्तविक स्थिति से सेवार्थी को अवगत कराता है तथा उसके अन्दर पायी जाने वाली चिन्ता एवं उग्रता की प्रतिक्रिया का ज्ञान कराता है।

(6) निर्वचन

एक उपचारक के रूप में वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सामाजिक अथवा वैयक्तिक कारको और उनके बीच होने वाली अन्तर्क्रिया के निर्वचन का प्रयोग अत्यधिक सतर्कता के साथ करता है। निर्वचन के दौरान वह स्पष्टीकरण तथा हस्तांतरण के अन्तर्गत अहम् को समर्थन प्रदान करने की प्रविधियो का प्रयोग करता है। ऐसा करते समय वह रक्षायुक्तियो मे हस्तक्षेप बहुत कम करता है जब तक कि ये नकारात्मक न हो तथा जब तक कि ये बहुत अधिक गतिरोध उत्पन्न न करती हो और नकारात्मक हस्तांतरण न होता हो। इस सम्बन्ध मे कोई अन्तिम सीमा रेखा नहीं खीची जा सकती क्योकि उपचार की प्रक्रिया मे विभिन्न रोगियो को भिन्न–भिन्न स्तर के अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। सामाजिक तथा वैयक्तिक कारको और इनके अन्तर्क्रिया के

निर्वचन के परिणामस्वरूप आत्म–चेतना तो किसी न किसी स्तर पर उत्पन्न होती ही है किन्तु इससे अधिक महत्वपूर्ण परिणाम तभी प्राप्त किये जा सकते हैं जब सेवार्थी इसके लिये तैयार हो। रक्षातंत्र मे घुसपैठ करने के अपरिपक्व प्रयासो की उपेक्षा की जा सकती है, इनके प्रति गतिरोध प्रदर्शित किया जा सकता है तथा इनसे चिन्ता स्थितिया उत्पन्न हो सकती हैं। यद्यपि भावनाओं को व्यक्त कराते हुये तथा पर्यावरण मे सुधार करते हुये भावनाओ एव व्यवहार में परिवर्तन, विशेष रूप से छोटे बच्चों के, बिना चेतन अन्तर्दृष्टि के सम्भव हैं। किन्तु परिवर्तन के साथ–साथ कुछ न कुछ आत्मचेतना विकसित होती ही है। निर्वचन किस समय किया जाये, यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है।

(7) सुझाव (Suggestion)

चिकित्सा की एक पद्धति के रूप मे सुझाव का प्रयोग प्राचीनकाल से किया जा रहा है। ऐसा करते समय कार्यकर्ता सेवार्थी के सामने कुछ सुझाव रखता है और इन सुझावों को मानना अथवा न मानना सेवार्थी की इच्छा पर छोड देता है। सुझाव की पद्धति अत्यधिक उपयोगी है। चिन्ता तथा अवसाद की स्थिति मे रोगी को मनोवैज्ञानिक समर्थन की अत्यधिक आवश्यकता होती है और इन नाजुक क्षणों मे यदि उसे सुझाव के रूप मे बाह्य सहायता प्राप्त होती है तो उसे बडी राहत मिलती है। इसी प्रकार आर्थिक सकट, वृद्धावस्था, सघर्षात्मक स्थितियो इत्यादि मे सुझाव सेवार्थी के सामने विकल्प प्रस्तुत करते हुये उसके तनाव को दूर करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(8) पुनराश्वासन (Re-assurance)

पुनराश्वासन के माध्यम से विभिन्न ढगो का प्रयोग करते हुये सेवार्थी मे इस बात का विश्वास उत्पन्न किया जाता है कि वह समस्या से मुक्त हो जायेगा। पुनराश्वासन का प्रयोग करता हुआ वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता सेवार्थी मे उपचार के प्रति तथा समस्या के

प्रति विश्वास उत्पन्न करता है और इस प्रकार उसे उपचार की प्रक्रिया मे सक्रिय रूप से भाग लेने के लिये मानसिक रूप से तैयार करता है। पुनराश्वासन का प्रयोग करते हुये वह सेवार्थी को यह स्पष्ट रूप से बताता है कि उसकी समस्या क्या है, इसके कारण क्या हैं, यह किन लक्षणो के रूप मे व्यक्त हो रही है तथा इसका समाधान किस प्रकार किया जा सकता है और विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करते हुये सेवार्थी को इस बात का आश्वासन देता है कि वह निश्चित रूप से समस्या मुक्त हो जायेगा।

(9) पुनर्शिक्षा (Re-education)

शिक्षा की प्रक्रिया चाहे वह जीवन के किसी भी क्षेत्र मे किसी भी समय पर क्यो न हो रही हो, व्यक्ति मे वास्तविकता को समझने की क्षमता उत्पन्न करती है। शिक्षा के दौरान वास्तविकता के विभिन्न पहलुओ का विश्लेषण एव विवेचन करते हुये वस्तुस्थिति से अवगत कराने का प्रयास किया जाता है। वैयक्तिक समाज कार्य के दौरान वैयक्तिक समाज कार्यकर्ता पुनर्शिक्षा का प्रयोग करते हुये समस्या के लक्षणो एव कारणो को स्पष्ट करता है तथा चेतन स्तर पर पायी जाने वाली मानसिक स्थिति तथा इसका प्रयोग किये जाने के परिणामस्वरूप सेवार्थी को होने वाली हानियों की चर्चा करता है।

(10) सामूहिक चिकित्सा (Group therapy)

सामूहिक चिकित्सा एक अत्यधिक सामान्य शब्द है जिसका प्रयोग किसी भी मनश्चिकित्सकीय प्रक्रिया को सम्बोधित करने के लिये किया जाता है जिसमे व्यक्तियो के समूह किसी चिकित्सक की देखरेख मे मिलते हैं और ऐसी क्रियाओ मे भाग लेते हैं जिनके दौरान उन्हे अपनी संवेगात्मक भावनाओ को व्यक्त करने, अपनी कमियो को समझने, दूसरो की आशाओं एवं प्रत्याशाओ के अनुसार समायोजन करने, के अवसर प्राप्त होते हैं। सामूहिक चिकित्सा दो प्रकार की होती है : (1) प्रकार्यात्मक चिकित्सा जिसके अतर्गत सेवार्थी को

विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को आयोजित करते हुये इससे सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं में सम्मिलित कराते हुए चिकित्सा की जाती है तथा (2) सामाजिक साहचर्य जिसके दौरान अनेक सेवार्थियों को एक साथ रखते हुए भोजन कराते हुए आमोद प्रमोद कराते हुये इत्यादि के माध्यम से उपचार किया जाता है।

सन्दर्भ

1 Social casework is the art of doing different things with different people by cooperating with them to achieve at one and at the same time their own and society s betterment

Colcord J and Mann R Z S The Long View Papers and address by Mary E Richmond Russell Sage Foundation New York 1930 pp 374-375

2 Social case work is the art of assisting the individual in developing and making use of his personal capacity to deal with problems which he faces in his social environment

Ibid p 398

3 Social casework is social treatment of maladjusted individual involving an attempt to understand his personality behaviour and social relation ships and to assist him in working out a better social and personal adjustment

Taft *The Family* Volume No 5 p 1

4 Social casework means those processes which develop personality through adjustment consciously affected individual by individual between men and their social environment

Richmond Mary *What is Social Case Work?* The Russell Sage Foundation New York 1922 p 98

5 Social casework is an art in which knowledge of the science of human relations and skill in relationship are used to mobilize capacities in the individual and resources in the community appropriate for better adjustment between the client and all or any part of his total environment

Bowers Swithun *"The Nature and Definition of Social Case work"* in Kasius Cora (ed) *Principles and Techniques in Social Casework* Family Service Association of America New York 1952 P 127

6 Social casework is a process of helping the individual not only to adjust to the status quo but to become an active partner in the process of

change and synthesis with his changing environment at newer and newer levels

Desai Manu M., *Social Casework and Cultural Problems* The Indian Journal of Social Work, TISS, Bombay Vol XVII No 3 Dec 1956 p 191

7 Social casework is a process used by certain human welfare agencies to help individuals to cope more effectively with their problems in social functioning

Perlman, H H, *Social Casework - A Problem Solving Process* The University of Chicago Press, Chicago, 1957, p 4

8 Adaptation is a process through which one gets the ability to live in a given situation

Fairchild, H P, *Dictionary of Sociology*, Philosophical Library New York, 1944

9 Social diagnosis is the attempt to arrive at an exact definition as far as possible of the social situation and personality of a given client

Richmond, Mary, *Social Diagnosis*, Russell Sage Foundation New York, 1917, p 5

10 Aptekar, H, The Dynamics of Casework and Counselling Houghton Mifflin Comp New York, 1955, p 72

सामूहिक समाज कार्य
(SOCIAL GROUP WORK)

सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है, जो सामूहिक क्रियाओ द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न समाज विज्ञानो के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बन्धी इच्छाओ एव आवश्यकताओ की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहाँ एक ओर सामूहिक सहभागिता व्यक्ति के लिए आवश्यक होती है, वहीं दूसरी ओर भागीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन मे भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियो से परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने, मतभेदो को निपटाने तथा अपने हितो तथा समूह के हितो को ध्यान मे रखकर कार्यक्रम नियोजित एव सचालित करने की योग्यता होना जरूरी होता है। सामूहिक कार्य द्वारा इन विशेपताओ एव योग्यताओ का विकास किया जाता है। व्यक्ति के लिए सामूहिक जीवन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना उसकी भौतिक आवश्यकताये महत्वपूर्ण हैं। जब सामूहिक जीवन मे कोई व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो व्यक्ति का जीवन अस्त–व्यस्त तथा व्यक्तित्तव विघटित हो जाता है। सामूहिक कार्य इस प्रकार की समस्याओ के समाधान करने का प्रयत्न करता है।

I सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली के रूप मे *(Social group work as a method)*

जब हम कहते हैं कि सामाजिक सामूहिक समाज कार्य एक

प्रणाली है तो इसका अभिप्राय यह होता है कि यह केवल काम करने का एक तरीका ही नही हे वल्कि एक क्रमानुसार, व्यवस्थित तथा नियोजित समूह के साथ काम करने का तरीका है। प्रणाली उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती हे। साधारण अर्थों मे प्रणाली कोई भी कार्य करने का तरीका है परन्तु यहॉ पर हम सदैव ज्ञान वोध तथा सिद्धान्तो की एकीकृत व्यवस्था की खोज करते हैं।[1]

प्रणाली और निपुणता मे अन्तर है। प्रणाली का तात्पर्य ज्ञान और सिद्धान्तो के आधार पर उद्देश्यपूर्ण ढग से अर्न्तदृष्टि तथा समझ का उपयोग है। निपुणता ज्ञान और वोध को एक निश्चित परिस्थिति मे उपयोग करने की क्षमता है। उपयोग करने की प्रक्रिया है निपुणता इसके उपयोग की क्षमता है।

सामाजिक सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है, जिसके द्वारा समाज कार्य के उद्देश्यो की पूर्ति अन्य प्रणालियो के समान ही की जाती है। अत. यहॉ हम सामूहिक समाज कार्य के अर्थ, सिद्धान्त, दर्शन, निपुणताओ तथा कार्यविधि का वर्णन कर रहे हैं।

II *सामूहिक समाजकार्य की परिभाषा*
(Definition of social group work)

सामूहिक समाज कार्य समूह के माध्यम से व्यक्ति की सहायता करता है। समूह की सहायता से व्यक्ति मे शारीरिक, वौद्धिक तथा सास्कृतिक विशेषताओ को उत्पन्न कर समायोजन के योग्य वनाया जाता है। अत सामूहिक समाज कार्य को व्यवस्थित ढग से समझने के लिए हम यहॉ पर कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओ का उल्लेख कर रहे हैं।

क्वायल[2] (1937)

सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियो मे व्यक्तित्वो की अन्त क्रियाओ द्वारा व्यक्तियो का विकास करना तथा ऐसी

सामूहिक स्थितियो को उत्पन्न करना जिससे सामान्य उद्देश्यो के लिए एकीकृत, सहयोगिक सामूहिक क्रिया हो सके।

विल्सन एण्ड राइलैण्ड[3] (1949)

सामूहिक समाज कार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है, जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित किया जाता है जो उद्देश्य प्राप्ति के लिए समूह की परस्पर सम्बन्धी प्रक्रिया को चेतन रुप से निर्देशित करता है जिससे प्रजातात्रिक लक्ष्यो को प्राप्त किया जा सके।

हैमिल्टन[4] (1949)

सामूहिक समाज कार्य एक मनो–सामाजिक प्रक्रिया है जो नेतृत्व की योग्यता और सहयोग के विकास से उतनी ही सम्बन्धित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरुचियो के निर्माण से।

ट्रेकर[5] (1949)

सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है जिसके द्वारा व्यक्तियो की सामाजिक अभिकरणों के अन्तर्गत समूहो मे एक कार्यकर्ता द्वारा सहायता की जाती है जो कार्यक्रम सम्बन्धी क्रियाओ मे उनकी अन्तर्क्रिया का मार्ग दर्शन करता है जिससे वे दूसरो से सम्बन्ध स्थापित कर सके और वैयक्तिक, सामूहिक एव सामुदायिक विकास की दृष्टि से अपनी आवश्यकताओं एव क्षमताओ के अनुसार विकास के सुअवसरों का अनुभव कर सके।

कोनोप्का[6] (1963)

सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक ऐसी प्रणाली है जो उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव के माध्यम से वैयक्तिक सामूहिक और सामुदायिक समस्याओ को प्रभावपूर्ण ढग से सुलझाने तथा उनकी सामाजिक कार्यात्मकता को बढाने मे सहायता प्रदान करती है।

जब हम उपरिलिखित परिभाषाओ का अवलोकन करते हैं तो पता चलता है कि ग्रेस क्वायल के अनुसार सामूहिक समाज कार्य व्यक्ति का विकास करता है। इस विकास का माध्यम समूह मे व्यक्तियो के बीच मे होने वाली अन्तर्क्रिया होती है। जब उनमे आपस मे अन्तं.क्रिया होती है तो व्यक्तित्व को नयी दिशा प्राप्त होती है। इसका दूसरा कार्य ऐसी सामूहिक स्थितियो को उत्पन्न करना है जहाँ पर एकीकृत एवं सहयोगिक भावना इस सीमा तक कार्य करे जिससे समान उद्देश्यो की पूर्ति हो सके। क्वायल ने समस्या समाधान की बात इसमे नही कही है।

विल्सन तथा राइलैण्ड ने सामूहिक समाज कार्य को एक प्रक्रिया तथा प्रणाली बताया है। इसका कार्य व्यक्ति के सामूहिक जीवन को प्रभावित करना है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूहो के साथ इस प्रकार कार्य करता है जिससे कार्यक्रमो के माध्यम से वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर सके। वह चेतनरूप से अन्त.क्रिया को समूह के उद्देश्य पूर्ति के लिए निर्देशित करता है। सामूहिक समाज कार्य द्वारा प्रजातांत्रिक लक्ष्यो की प्राप्ति होती है।

हैमिल्टन के विचार अपने समय के सभी विद्वानो के विचारो से भिन्न हैं। उनका विचार है कि सामूहिक कार्य एक मनो–सामाजिक प्रक्रिया है अर्थात् इसके द्वारा व्यक्ति को मानसिक तथा सामाजिक दोनो प्रकार से प्रभावित किया जाता है। वह सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहिक अभिरुचियो के विकास का प्रयत्न करता है। साथ ही साथ उनके नेतृत्व एव सहयोग की भावना के विकास पर भी बल देता है।

सामूहिक समाज कार्य की सबसे उपयुक्त एवं पूर्ण परिभाषा ट्रेकर ने दी है। उनके अनुसार सामूहिक समाज कार्य की निम्न विशेषतायें हैं :

1. सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है

इसका तात्पर्य यह है कि सामूहिक समाज कार्य के लिए विशेष

ज्ञान की आवश्यकता होती है। कार्यकर्ता को जब तक समूह की विशेषताओ, दशाओ, मनोवृत्तियो, आदि का ज्ञान नहीं होगा तब तक वह कार्य नहीं कर सकता है। उसको व्यक्ति तथा समूह दोनों के व्यवहार का ज्ञान होना आवश्यक है। उसमे विशेष समझ होती है जिससे वह विभिन्न स्थितियो मे समूहो के साथ कार्य करने मे समर्थ होता है। उसको समूह की गत्यात्मकता का ज्ञान होता है। ट्रेकर का मत है कि सामूहिक कार्य के अपने कुछ सिद्धान्त है जो दूसरी प्रणालियो से भिन्न हैं। नियोजित समूह निर्माण, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता–सेवार्थी सम्बन्ध, निरन्तर वैयक्तीकरण, निर्देशित सामूहिक अन्त क्रिया, प्रजातान्त्रिक सामूहिक आत्मनिश्चयीकरण, लचीला कार्यात्मक संगठन, निरन्तर प्रगतिशील कार्यक्रम, संसाधनो का उपयोग तथा निरन्तर मूल्यांकन के सिद्धान्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सामूहिक समाज कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणतायें हैं जिनको सामूहिक कार्यकर्ता अपने व्यवहार में लाता है। कार्यकर्ता में उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता होती है। वह सामूहिक स्थिति का विश्लेषण करने मे दक्ष होता है। वह समूह के साथ भाग लेने में निपुण होता है। अपनी भूमिका की व्याख्या तथा उसकी आवश्यकता को समयानुसार निश्चित करने मे समर्थ होता है। वह प्रत्येक नयी स्थिति का निष्पक्ष रहकर विषयात्मक रुप से अध्ययन करता है तथा समूह की सकारात्मक तथा नकारात्मक भावनाओ को समझकर ही कार्यक्रम को आगे बढाता है। वह समूह की रुचियो एवं आवश्यकताओं के अनुसार ही कार्यक्रम आयोजित करता है। उसमे संस्था तथा समुदाय के संसाधनो को उपयोग मे लाने की निपुणता होती है।

2. सामूहिक समाज कार्य द्वारा समूह में संस्था के अन्तर्गत व्यक्तियों की सहायता की जाती है

ट्रेकर की परिभाषा की दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि सामूहिक समाज कार्य मे समूह तथा अभिकरण दोनो महत्वपूर्ण हैं। अर्थात् व्यक्ति की सहायता समूह के माध्यम से अभिकरण के तत्वाधान मे

की जाती है। समूह की अपनी विशेषताये होती हैं तथा उसके गठन का भी एक उद्देश्य होता है। यह समूह किसी सस्था के अन्तर्गत ही गठित किया जाता है। ये समूह समुदाय की इच्छाओं तथा आवश्यकताओ के अनुरूप होते है।

3. सामूहिक समाज कार्य एक कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है जो समूह की कार्यक्रम क्रियाओं मे होने वाली अन्तर्क्रिया को निर्देशित करता है

सामूहिक कार्य मे कार्यकर्ता की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है। वह सभी कार्यों की धुरी होता हे। अत जैसी उसमे योग्यता एव क्षमता होती हे, समूह उसी प्रकार की उपलब्धि करता है। वह समूह की स्वीकृति के आधार पर अपनी भूमिका का सम्पादन करता है। जिस सीमा तक समूह उसको अपनी भूमिका पूरी करने की आज्ञा देता है वह वहीं तक अपने कार्य क्षेत्र की सीमा को बढाता है। कार्यकर्ता समूह के सदस्यो का वैयक्तीकरण करते हुए उनकी आवश्यकताओ, इच्छाओ तथा अन्तर्निहित क्षमताओ का ज्ञान प्राप्त करता है। वह उद्देश्यो के निर्धारण मे समूह की सहायता करता है तथा कार्यक्रमो के चलाने व उनकी आवश्यकता के विषय मे ज्ञान प्राप्त करता है। वह समूह को मंत्रणा भी देता है तथा कार्य सम्पादन के लिए प्रोत्साहित भी करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता सामूहिक प्रक्रिया के प्रत्येक स्तर पर जहॉ कहीं यह आवश्यक होती है, करता है। वह सामुदायिक ससाधनो के समुचित उपयोग मे भी समूह की सहायता करता है।

4. सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य आपसी सम्बन्धो में वृद्धि तथा अपनी क्षमताओ के अनुसार विकास करना है

सामूहिक समाज कार्य के अन्तर्गत कार्यकर्ता इस प्रकार से कार्यक्रमो का आयोजन करता है जिसके द्वारा समूह के सदस्यो मे दूसरे लोगो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता बढती है। वे अपनी आवश्यकताओ एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के अवसरो

का अनुभव करते हैं। समूह सदस्यो मे सहभागिता की क्षमता आती है, सम्पर्को को करने की विधि सीखते है, निर्णय की क्षमता बढती है तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करना सीखते हैं। उनमे स्व–सम्प्रेरक शक्ति काम करने लगती है तथा अपनत्व की भावना विकसित होती है। इन सभी गुणो से वे अन्य व्यक्तियो के साथ समायोजित करने मे सफल होते हैं एव वृद्धि के अवसरो से लाभ उठाते हैं।

5. सामूहिक समाज कार्य सहायता का उद्देश्य वैयक्तिक, सामूहिक और सामुदायिक विकास करना है

सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियो के व्यवहार के परिवर्तन के लिए कार्यक्रमो का उपयोग करता है। चाहे वह समस्या हो अथवा विकास का प्रश्न हो, दोनो ही स्थितियो मे व्यवहार ही बाधा बनता है। अत यदि दोनो प्रकार से सफलता प्राप्त करनी है तो व्यवहार मे परिवर्तन लाना होगा। इस परिवर्तन से व्यक्ति व समूह मे परिवर्तन आता है जिससे प्रजातान्त्रिक लक्ष्यो की पूर्ति होती है।

III *सामूहिक समाज कार्य की विशेषताये*
(Characteristics of social group work)

जब हम सामूहिक कार्य की उपरिलिखित परिभाषाओ का अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि–

1 सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक प्रजातान्त्रिक प्रणाली है। समूह को किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बाध्य नहीं किया जाता है वरन् समूह को पूरा अधिकार होता है कि वह अपने लक्ष्यो, कार्यक्रमो एव क्रिया कलापो को अपनी रुचि के अनुसार व्यवस्थित एव सगठित करे।

2 सामूहिक समाज कार्य व्यक्तियो मे प्रजातान्त्रिक जीवन के आदर्शो एव नेतृत्व की योग्यता का विकास करता है।

3 सामूहिक समाज कार्य द्वारा समूह के सदस्यो मे रचनात्मक

सम्बन्ध विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है। कार्यकर्ता एक विशेषज्ञ के रुप मे कार्य करता है।

4 सामूहिक समाज कार्य समूह के सदस्यों में आत्म–निर्देशन की योग्यता का विकासकरता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है जहाँ तक समूह आवश्यक समझता है।

5 समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए किया जाता है।

6. सामूहिक समाज कार्य प्रणाली की अपनी विशिष्ट निपुणताये, सिद्धान्त एवं प्रविधियां हैं।

7. *सामूहिक समाज कार्य एक सस्था के माध्यम से कार्य करता है।*

8. **सामूहिक समाज** कार्य व्यक्तियों की समानता मे विश्वास **रखता है और प्रत्येक** व्यक्ति को सामाजिक जीवन में बराबर का भाग लेने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अवसर देता है।

9. सामूहिक समाज कार्य समूह सदस्यो के लिए एक नवीन अनुभव होता है।

10. सामूहिक समाज कार्य के माध्यम से व्यक्तियो के एक दूसरे के साथ काम करने, रहने, समस्याओं को समझने तथा वास्तविकता को ज्ञात करने का अवसर मिलता है।

उपरिलिखित विशेषताओ के आधार पर हम सामूहिक समाज कार्य को निम्नलिखित शब्दों मे पारिभाषित कर सकते हैं :

सामूहिक समाज कार्य एक प्रणाली है जिसमें कार्यकर्ता अभिकरण के माध्यम से समूह की उन्नति एवं आत्म विकास के लिए उन्ही के माध्यम से कार्यक्रमो का निर्धारण करता है और अन्तर्सम्बन्धो को इस उन्नति एवं विकास का आधार मानता है।

IV सामूहिक समाज कार्य की भ्रातिया (Misconceptions)

समाज कार्य एक नवीन व्यवसाय है। इस लिए अधिकाश लोग इसके अर्थ से पूर्णतया अवगत नही हैं। सामूहिक समाज कार्य के विषय मे भी अनेक अटकले लगायी जाती हैं तथा अलग–अलग विचार प्रस्तुत किये जाते हैं। ट्रेकर ने निम्नलिखित भ्रातियो का उल्लेख किया है।

1. सामूहिक समाज कार्य एक अभिकरण (Agency) के रूप मे

कुछ लोगो की धारणा है कि सामूहिक समाज कार्य एक सामाजिक अभिकरण है। इसके उद्देश्य स्वय कुछ न होकर वे एक विशेष प्रकार के अभिकरण के उद्देश्य होते हैं। यह कथन किसी भी प्रकार से सत्य नहीं है क्योकि सामूहिक समाज कार्य द्वारा अभिकरण के सभी अथवा कुछ कार्य पूरे किये जाते हैं।

2. सामूहिक समाज कार्य एक विशेष कार्यक्रम (Programme) के रूप मे

कुछ व्यक्तियो की धारणा है कि सामूहिक समाज कार्य एक विशेष कार्यक्रम है। परन्तु यह स्वय मे कार्यक्रम स्वय नहीं है बल्कि इसके द्वारा विभिन्न कार्यक्रम सम्बन्धी क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है। यदि यह स्वय कार्यक्रम होता तो सभी समूहो के साथ कोई एक ही कार्यक्रम चलाया जाता। परन्तु यहॉ पर अनेक समूहो के सदर्भ मे अनेक प्रकार के कार्यक्रम सम्पन्न किये जाते हैं।

3. सामूहिक समाज कार्य एक विशेष प्रकार के समूह (Group) के रूप मे

कुछ लोगो का विचार है कि सामूहिक समाज कार्य एक ऐसा समूह है जिसमे विशेष क्रियाये सम्पन्न की जाती है। यह कोई विशेष समूह नही होता है। जहॉ जहॉ जैसी आवश्यकता होती है समूह का निर्माण कर लिया जाता है और उसके माध्यम से कार्यक्रम सम्पादित

किये जाते हैं। कुछ लोग क्लब को सामूहिक समाज कार्य मानते हैं क्योकि इसके द्वारा विभिन्न क्लबो व समूहो के कार्यो को सम्पन्न किया जाता है।

V *सामूहिक समाज कार्य की मूल मान्यताएं*
(Basic assumptions of social group work)

सामूहिक समाज कार्य की निम्नलिखित प्रमुख मान्यताये हैं ·

1 शिक्षात्मक तथा मनोरजनात्मक क्रियाये व्यक्ति तथा समाज के लिए लाभदायक होती है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता इसी मान्यता के आधार पर व्यक्ति को समूह के माध्यम से शिक्षात्मक तथा मनोरजनात्मक दोनो प्रकार की सेवाये तथा उनका अनुभव प्रदान करता है।

2 कार्यकर्ता मे अपनी भूमिका निभाने की अन्तर्दृष्टि होती है। वह सदैव समूह के अन्तर्गत दो बातो का ध्यान रखता है : एक तरफ वह कार्यक्रम क्रियाओ तथा उनकी प्रगति देखता है तथा दूसरी ओर समूह मे सामाजिक सम्बन्धो की भूमिका को ध्यान मे रखता है। अत. अपने सम्बन्धो को भी वह साथ ही साथ समझता जाता है।

3 कार्यक्रम सदैव प्रभावात्मक होना चाहिये। यह मान्यता इस बात को सुनिश्चित करती हे कि कार्यकर्ता के सम्बन्ध क्रिया पर केन्द्रित न होकर व्यक्ति पर केन्द्रित हो। कार्यकर्ता की दृष्टि से सफलता खेल के प्रकार मे नहीं बल्कि सदस्यो के अनुभवो से सम्बन्धित होती है। कार्यक्रम सदैव अनुभव के अनुसार आयोजित किये जाने चाहिये।

4 सामूहिक समाज कार्य के अन्तर्गत कार्यक्रम तथा क्रियाये कार्य–संस्थिति, पारिवारिक सम्बन्ध तथा सामुदायिक मनोवृत्ति पर आधारित हो। कार्यकर्ता को न केवल सावेगिक, सामाजिक तथा शारीरिक तत्वो के कारको का ज्ञान हो बल्कि उसे समूह

के सदस्यो, कार्य–सस्थिति, परिस्थितियो, पारिवारिक सम्बन्ध तथा सामुदायिक मनोवृत्तियो से अवगत होना चाहिए।

5 कार्यकर्ता को सदस्यो के व्यवहार का ज्ञान आवश्यक होता है। यदि कार्यकर्ता व्यक्तियो को शिक्षात्मक तथा मनोरजनात्मक क्रियाओ द्वारा सहायता करना चाहता है तो उसे उनके व्यवहारो का ज्ञान अवश्य हो। बिना इस ज्ञान के वह सफल नही हो सकता है।

6 कार्यकर्ता व्यवसायिक रुप से अपने कार्य करने मे सक्षम हो। इसका तात्पर्य यह है कि कार्यकर्ता मे आवश्यक योग्यता निपुणता, ज्ञान तथा कार्य करने की आतरिक इच्छा हो और वह व्यावहारिक रुप से अपने कार्यक्रमो को कार्यान्वित करने मे निपुण हो।

समाज कार्य व्यक्तियो की आवश्यकता की सतुष्टि पर बल देता है। जब व्यक्ति की आवश्यकताओ का समाधान नहीं होता है तो उसका सामाजिक सतुलन बिगड जाता है। इस स्थिति मे समाज कार्य व्यक्तियो की वैयक्तिक रुप से या समूह के माध्यम से सहायता करता है।

VI *सामूहिक समाज कार्य का दर्शन (Philosophy of social group work)*

1 व्यक्ति अकेला नही रहता है। वह परिवार जाति तथा द्वितीयक समूहो मे रह कर ही उन्नति एव विकास कर सकता है। उसका उचित विकास तभी हो सकता हे जब वह सम्पूर्ण समूह के एक अग के रुप मे रहता तथा कार्य करता हो। उसका शारिरिक तथा मानसिक विकास तभी सही सामान्य व स्वस्थ रुप से हो सकता है जब वह समूह के साथ भावनात्मक एव सवेगात्मक रुप से जुडा हो। मानव जीवन की सभी समस्याये सहयोग की क्षमता तथा मानसिकता की माँग करती हैं।

2 साधारणतया मनुष्य एक निर्बल प्राणी है। प्रत्येक व्यक्ति को अन्य व्यक्तियों की आवश्यकता होती है क्योंकि समूह के सदस्य के रुप में वह अधिक शक्तिशाली हो जाता है। वह अपनी शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक तथा आत्मिक शक्तियों का विकास समूह के ही माध्यम से करता है।

3. सामूहिक अनुभव की आवश्यकता मौलिक एव सर्वमान्य है। ग्रेस क्वायल के अनुसार सामूहिक अनुभव 5 प्रकार से महत्वपूर्ण हैं

(i) परिपक्वता की प्रक्रिया (Maturation Process) में जिस प्रकार परिवार का महत्वपूर्ण योगदान होता है उसी प्रकार लघु समूहों की भूमिका भी बहुत अधिक महत्वपूर्ण होती है। बालको को नर्सरी स्कूल, पूर्व विद्यालयी शिक्षा, खेल समूह तथा इसी प्रकार के अन्य समूहो से जो अनुभव प्राप्त होते है उसी के आधार पर उसका व्यक्तित्व निर्मित होता है।

(ii) सामूहिक अनुभव न केवल व्यक्तित्व का विकास करते हैं बल्कि ये सम्बन्धो को और अधिक प्रगाढ़ बनाने मे सकारात्मक योगदान देते हैं। सामूहिक अनुभव से न केवल बच्चे बल्कि प्रौढ भी लाभ प्राप्त करते हैं तथा सम्बन्धों का उचित प्रयोग करना सीखते हैं।

(iii) जब व्यक्ति सामूहिक क्रियाओ में भाग लेता है तो वह अपने अधिकारो व कर्तव्यो का ज्ञान प्राप्त करता है। समूह में नागरिकता की शिक्षा देने की बहुत बडी क्षमता होती है। समूह सभ्य नागरिक जीवन को समस्याओं का समाधान करने मे भी सक्रिय योगदान देता है।

(iv) समूह का उपयोग बाल अपराधियो तथा अपराधियो के साथ इसलिये किया जाता है क्योंकि इसके माध्यम से वे नये तरीके से रहना सीखते हैं और नकारात्मक प्रवृत्तियों का ह्रास होता है।

(v) यह मानसिक रोगिया के साथ महत्वपूर्ण कार्य करता है।

4 सामूहिक समाज कार्य की धारणा है कि सामाजिक सस्था के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास और उसका मनोवृत्तियो मे परिवर्तन सामूहिक अनुभवो द्वारा किया जा सकता है। व्यक्तियो के लिए सामाजिक सस्थाये एक यत्र का कार्य करती हैं। इन सस्थाओ के माध्यम से ही वे अपनी मूलभूत आवश्यकताओ को सतुष्ट करते है तथा विकास की ओर आगे बढते हैं। सस्थाये समूहो की कुछ सामान्य तथा कुछ विशिष्ट आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए सगठित की जाती हैं।

5 जिन समूहो मे सामूहिक समाज कार्यकर्ता अपनी सेवाओ का सदुपयोग करता है, उनके सदस्यो मे न केवल किसी एक गुण का विकास होता है वरन् सम्पूर्ण प्रतिभा का विकास भी होता है। व्यक्ति न केवल समूहो मे विकास करते हैं बल्कि समूहो के द्वारा ही उनका विकास सभव होता है।

6 समूहो द्वारा व्यक्तित्व का विकास, अभिरुचियो मे परिवर्तन तथा आदतो का निर्माण होता है। इसलिए यदि समूह का सगठन सुनियोजित ढग से किया जाता है तो उद्देश्य की पूर्ति सुगमता से हो सकती है।

7 पारास्परिक स्वीकृति के बिना सामाजिक जीवन का कोई महत्व नहीं है। समूह मे स्वीकृति–अस्वीकृति की घटना उस समय घटित होती है, जब अन्त क्रिया होती हैं, तथा विचारो, अभिरुचियो व इच्छाओ की अभिव्यक्ति होती है।

8 सामूहिक समाज कार्य का विश्वास है कि जनतात्रिक व्यवहार सीखा हुआ व्यवहार हैं।

9 सामूहिक समाज कार्य प्रणाली व्यक्तियो की आवश्यकताओ और रुचियो की अधिकतम पूर्ति की स्वतन्त्रता देती है।

10 सामूहिक समाज कार्य एक लक्ष्य विशेष का साधन है और यह लक्ष्य व्यक्ति का विकास है।

VII सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य
(Objectives of social group work)

सामूहिक समाज कार्य का उद्देश्य समूह द्वारा व्यक्तियो मे आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता एव आत्मनिर्देशन का विकास करना है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियो मे सामजस्य को बढाने और सामूहिक उत्तरदायित्व एव चेतना का विकास करने मे सहायता देता है। सामूहिक समाज कार्य द्वारा व्यक्तियो मे इस प्रकार की चेतना तथा क्षमता का विकास किया जाता है जिससे वे समूह और समुदाय के क्रियाकलापो मे जिनके वे अग है, बुद्धिमतापूर्वक भाग ले सकते है। उन्हे अपनी इच्छाओ, आकाक्षाओ, भावनाओ, रुचियो, पसद नापसद आदि की अभिव्यक्ति का अवसर मिलता है।

ग्रेस क्वायल ने सामूहिक समाज कार्य के निम्न उद्देश्य बताये है

1 व्यक्तियो को उनकी आवश्यकताओ और क्षमताओ के अनुसार विकास के अवसर प्रदान करना।
2 व्यक्ति को अन्य व्यक्तियो, समूहो और समुदाय से समायोजन प्राप्त करने मे सहायता देना।
3. समाज के विकास हेतु व्यक्तियो को प्रेरित करना।
4. व्यक्तियो को अपने अधिकारो, सीमाओ और योग्यताओ के साथ-साथ अन्य व्यक्तियो के अधिकारो, योग्यताओ एवं अन्तरों को पहचानने मे सहायता देना।

मेहता ने सामूहिक समाज कार्य के निम्न उद्देश्य बताये है

1. परिपक्वता प्राप्त करने के लिए व्यक्तियो की सहायता करना
2. पूरक सांवेगिक तथा सामाजिक खुराक प्रदान करना
3 नागरिकता तथा जनतान्त्रिक सहभागिता को बढावा देना
4 असमायोजन तथा वैयक्तिक एव सामाजिक विघटन का उपचार करना

विल्सन तथा राइलैण्ड ने कहा है कि अधिकाँश सामाजिक सस्थाओ के जो समूहो के लिए कार्य करती है, दो उद्देश्य होते हैं

1 समूह के माध्यम से व्यक्तियो के सावेगिक सतुलन को बनाना तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ रखना

2 समूह की इन उद्देश्यो की प्राप्ति मे सहायता करना जो आर्थिक, राजनैतिक एव सामाजिक जनतत्र के लिए आवश्यक हैं।

ट्रेकर ने भी इसी प्रकार के उद्देश्यो का वर्णन किया है। उनके अनुसार सामूहिक समाज कार्य का मूल रूप से उद्देश्य मानव व्यक्तित्व का यथा सम्भव अधिकतम विकास करना जो है जनतात्रिक आदर्शों के प्रति समर्पित तथा अनुरक्त हो।

फिलिप्स ने सामूहिक समाज कार्य के उद्देश्यो की चर्चा करते हुए कहा है कि इसका प्रमुख उद्देश्य सदस्यो का समाजीकरण करना है।

कोनोप्का का विचार है कि सामूहिक समाज कार्य सामूहिक अनुभव द्वारा सामाजिक प्रकार्यात्मकता मे वृद्धि करता है।

उपरिलिखित विचारो के अध्ययन के पश्चात् हमारे मत मे सामूहिक समाज कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य हैं

1. जीवनोपयोगी आवश्यकताओ की पूर्ति करना

सामूहिक समाज कार्य का प्रारम्भ आर्थिक समस्याओ का समाधान करने से हुआ है। परन्तु कालान्तर मे यह अनुभव किया गया कि आर्थिक आवश्यकताओ का समाधान सभी समस्याओ का समाधान नही है। स्वीकृति, प्रेम, सहभागिता, सामूहिक अनुभव, सुरक्षा, आदि अनेक ऐसी आवश्यकताये हैं जिनका पूरा किया जाना भी आवश्यक है। इसी आधार पर अनेक सस्थाओ का विकास हुआ है और उन्होंने जीवनोपयोगी आवश्कताओ को पूरा करने का कार्य प्रारम्भ किया। आज सामूहिक कार्यकर्ता समूह मे व्यक्तियो को एकत्रित करके उनके

एकाकीपन की समस्या का समाधान करता है,सहभागिता को प्रोत्साहन देता है तथा सुरक्षा की भावना का विकास करता है।

2. सदस्यो को महत्व प्रदान करना

भौतिकवादी युग के कारण आज व्यक्ति का कोई महत्व न होकर धन, मशीनो तथा यत्रो का बोलबाला हो गया है। परिणामत व्यक्ति मे निराशा तथा हीनता के लक्षण स्पष्ट रुप से दिखाई पडने लगे हैं। प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है कि उसका कुछ महत्व हो तथा समाज मे सम्मान हो। यह समस्या युवा अवस्था मे उतनी गम्भीर नहीं होती है जितनी वृद्धावस्था मे। किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि केवल वृद्धावस्था मे ही सम्मान प्रदान किए जाने की आवश्यकता होती है। यदि हम मानव विकास के स्तरो का सूक्ष्म अवलोकन करे तो ऐसा कोई भी स्तर नहीं है जहाँ पर व्यक्ति संम्मान प्राप्त करने की इच्छा न रखता हो। बाल अपराध का मुख्य कारण बालक को महत्ता एव स्वीकृति न प्रदान करना है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह के सभी व्यक्तियो को समान अवसर प्रदान करता है तथा उन्हे उचित सम्मान व स्वीकृति देता है।

3. सामन्जस्य स्थापित करने की शक्ति का विकास करना

व्यक्ति की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता सामजस्य प्राप्त करने की होती है। व्यक्ति इससे जीवन रक्षा के अवसर प्राप्त करता है तथा पर्यावरण को समझ कर अपनी आवश्यकताओ को समायोजित करता है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति जब तक जीवित रहता है तब तक अनेकानेक समस्याये उसे घेरे रहती हैं और उसे समायोजन स्थापित करने के लिए बाध्य करती रहती हैं। सामूहिक समाज कार्यकर्ता सामूहिक अनुभवो के द्वारा व्यक्ति मे सामजस्य स्थापित करने की कुशलता विकसित करता है। व्यक्ति जब समायोजन स्थापित करने में असमर्थ होता है तो इसका कारण उसकी या उसके पर्यावरण मे पाई जाने वाली कमिया होती हैं। व्यक्ति शासन करने, अधिकार

जमाने, अनावश्यक हस्तक्षेप करने, वास्तविक स्थिति को अस्वीकार करने, उत्तरदायित्व को पूरा न करने, दूसरो का सहयोग स्वीकार न करने आदि के कारण सामजस्य स्थापित करने मे असमर्थ होता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता कार्यक्रमो के माध्यम से उन कमियो को दूर करके सामान्य गुणो को विकसित करता है।

4. आत्म–विश्वास व आत्मनिर्भरता को विकसित करना

जब तक व्यक्ति मे आत्म–विश्वास नही होता है तब तक वह न तो कोई अपने आप निर्णय ले सकता है और न ही कोई जोखिम का कार्य करता है। आत्म–निर्भरता का होना व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक होता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्ति मे इन गुणो का विकास करने के लिए प्रत्येक सदस्य को अलग–अलग कार्य करने तथा उत्तरदायित्व ग्रहण करने का अवसर देता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी क्षमताओ, शक्तियो एव निपुणताओ को प्रकट करने का पूरा अवसर देता है जिसके फलस्वरुप उनसे स्वत आत्म–विश्वास एवं आत्म–निर्भरता विकसित हो जाती है।

5. प्रजातांत्रिक नेतृत्व का विकास करना

सामूहिक समाज कार्यकर्ता का उद्देश्य जहाँ एक ओर व्यक्तियो मे प्रजातान्त्रिक मूल्यो का विकास करना है वही दूसरी ओर प्रजातान्त्रिक नेतृत्व का विकास भी करता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह के प्रत्येक सदस्य को नेतृत्व प्रदान करने के अवसर देता है। यद्यपि नेता राय तो दे सकता है परन्तु अतिम निर्णय समूह पर निर्भर होता है। नेता सभी सदस्यो को समान अवसर एव उन्नति की समान सुविधाये प्रदान करता है।

6. सामाजिक सम्बन्धो को सुदृढ बनाना तथा मनो–सामाजिक समस्याओ का समाधान करना

व्यक्ति समाज मे पैदा होता है और सामाजिक सम्बन्धो मे ही

अपना जीवन बिताना है। इसीलिए मेकाइवर तथा पेस ने समाज को सामाजिक सम्बन्धो का जाल कहा है। सम्बन्धो के आधार पर ही समाज के कार्य सम्पन्न होते हैं। परन्तु कभी–कभी व्यक्ति इन सम्बन्धो को निभाने मे असमर्थ होता है जिसके परिणामस्वरूप मानसिक तनाव एव अन्य मानसिक विकार उत्पन्न हो जाते है तथा कभी–कभी व्यक्ति मानसिक रोगो का शिकार भी हो जाता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता व्यक्तियो के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार द्वारा तनाव को कम करता है। कार्यकर्ता का उद्देश्य न केवल तनाव को कम करना होता है बल्कि समान्य व्यक्तियों को सामूहिक अनुभव द्वारा यह ज्ञात कराना भी होता है कि उसकी कठिनाइयां उसकी असफलताओ के कारण ही नहीं बल्कि अन्य व्यक्ति भी इसी प्रकार से अनेक कठिनाइयो से पीडित है। ऐसा होने पर उनमे सतोष उत्पन्न होता है और समाधान की शक्ति आती है एवं सम्बन्ध स्थापति करने की इच्छा का विकास होता है। उनमे नवीनता का सचार होता है तथा वे स्वय अपनी समस्या का समाधान करने का प्रयत्न करते हैं।

VIII *सामूहिक समाज कार्य के सिद्धान्त*
(Principles of Social Group work)

किसी भी कार्य के सुचारु रूप से संपादन हेतु सिद्धान्त आवश्यक हैं। सिद्धान्त अनुभव पर आधारित ऐसे सामान्यीकरण हैं जो हमारे कार्यों का मार्ग दर्शन करते हैं। वार, वर्टन तथा ब्रुकनेर के अनुसार "सिद्धान्त अर्थात् सामान्य नियम या कानून, प्रत्यय, मूलभूत सत्यतायें, सामान्य रूप से माने गये मत–वे साधन हैं जिनके द्वारा हम एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति की ओर बढते हैं।[1] सामाजिक सामूहिक कार्य के अभ्यास का एक लम्बा इतिहास है और इस अभ्यास के दौरान जिन नियमो को आवश्यक समझा गया उन्हे सिद्धान्त के रूप मे स्वीकार कर लिया गया। लियोनार्ड डी. ह्वाइट का मत है कि एक सिद्धान्त अवश्य ही उपकल्पना समझी जानी चाहिये जिसका इस प्रकार प्रर्यवेक्षण अथवा प्रयोग करके परीक्षण किया गया है कि इसे बुद्धिमत्तापूर्वक क्रिया के पथ प्रदर्शक अथवा ज्ञान के साधन के रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है।[2]

सामूहिक समाज कार्य समाज कार्य की एक पद्धति है। समाज कार्य की भाँति इनके भी कुछ सिद्धान्त हैं जिनका मानना समाज कार्यकर्ता के लिये आवश्यक होता है क्योकि इनके अनुपालन के बिना निर्धारित लक्ष्यो को प्राप्त नही किया जा सकता है।

सामूहिक समाज कार्य के निम्नलिखित आधारभूत सिद्धान्त हैं

1. **नियोजन का सिद्धान्त (Principle of Planning)**

नियोजन कार्य मे लक्ष्यो का निर्धारण किया जाता है उनकी पूर्ति के लिये साधनो की व्यवस्था की जाती है और क्रियाओ को सगठित रूप प्रदान किया जाता है। नियोजन के अन्तर्गत वर्तमान स्थितियो तथा सभावित परिवर्तनो की उपयोगिता को ध्यान मे रखकर एक व्यवस्थित तथा सुसगठित रूपरेखा तैयार की जाती है, जिससे भविष्य के परिवर्तनो को अपेक्षित लक्ष्यो के अनुरूप नियन्त्रित निर्देशित तथा सशोधित किया जा सके। सामूहिक समाज कार्य में समूह ही आधारभूत साधन होता है जिसके द्वारा व्यक्ति की सहायता की जाती है, परिणामस्वरूप सस्था एव कार्यकर्ता, जिनका समूहो के निर्माण अथवा सस्था के पूर्व निर्मित समूहो को स्वीकार करने का उत्तरदायित्व होता है, उन्हे सामूहिक स्थितियो के उन अर्न्तभूत कारको का ज्ञान होना चाहिए जो व्यक्ति की अभिवृद्धि एव पहचानी जाने वाली आवश्यकता की पूर्ति के लिए समूह को सकारात्मक शक्ति प्रदान करते हैं।[3]

सामूहिक कार्यकर्ता सुनियोजित ढग से समूह निर्माण का कार्य करते हुए ही लक्ष्यो को प्राप्त कर सकता है। इस सम्बन्ध मे उसे निम्नलिखित कार्य करने पडते हैं.

1 विकास के लक्ष्यो एव मूल्यो का निर्धारण।
2 परिस्थिति का विश्लेषण।
3 वर्तमान सेवाओं के गुणात्मक एव परिमाणात्मक दृष्टि से पाई जाने वाली कमियों की जानकारी।
4 विशिष्ट उद्देश्यों तथा रणनीतियो का निर्धारण।
5 आगत, लक्ष्य, क्षेत्र, साधन आदि का निर्धारण।

6 प्रशिक्षण तथा सचार प्रक्रिया की सीमाओ की जानकारी।
7 क्रिया नियोजन तथा कार्यों की लिपिवद्ध किए जाने के महत्व का ज्ञान।
8 कार्य करने के लिए आवश्यक उपकरणो के निर्माण की जानकारी।
9 सम्भावित साधनो की उपलब्धता की जानकारी।
10 शक्ति के स्रोतो का निर्धारण।
11 समूह के सदस्यो की सख्या का निर्धारण।
12 समूह के सदस्यो की सामाजिक मान्यताओ, क्षमताओ, ज्ञान, आयु, अनुभव तथा जीवनस्तर की पहचान।

कार्यकर्ता को समूह का निर्माण करते समय इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि समूह के सदस्यो की सख्या, साधनो, शक्ति के स्रोतो, उद्देश्यो तथा लक्ष्यो के बीच समुचित सतुलन अवश्य हो। समूह के नियोजित होने पर ही यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि समूह के उद्देश्य एवं लक्ष्य किस प्रकार तथा किस सीमा तक प्राप्त किये जा सकते हैं।

2. लक्ष्यों की स्पष्टता का सिद्धान्त
(Principle of Clarification of the Objectives)

सामूहिक कार्यकर्ता के लिये स्पष्ट लक्ष्यो का ज्ञान कार्य को पूरा करने के लिये आवश्यक होता है क्योकि लक्ष्य ही वह सम्प्रेरक शक्ति प्रदान करते हैं जिसके आधार पर समूह विकास की दिशा मे तेजी के साथ आगे बढता है। लक्ष्यों की स्पष्टता महत्वपूर्ण है, क्योकि :

1 लक्ष्य ही कार्यकर्ता का मार्गदर्शन करते हैं तथा आगे बढने के लिये प्रेरित करते हैं।
2 लक्ष्यों की स्पष्टता उपलब्ध साधनो का समुचित उपयोग करने पर बल देती है।
3 लक्ष्यो पर ही कार्यक्रम निर्भर होते हैं। यदि वे स्पष्ट हैं तो कार्यकर्ता को चयन मे कोई कठिनाई नहीं होती है।
4. लक्ष्यो के स्पष्ट होने पर यह निर्णय लेना आसान हो जाता

है कि कार्य प्रारम्भ कैसे किया जाय तथा उसका स्वरूप तथा प्रकृति क्या हो।

5 लक्ष्यो के स्पष्टता से सस्था के लिये आवश्यक यत्रो साधनो तथा कोष को निश्चित करने मे सहायता मिलती है।

6 लक्ष्य स्पष्ट होने पर समूह का नियत्रण तथा उसका निर्देशन अच्छा होता है।

7 समूह के सदस्यो की सहभागिता अच्छी होती है।

8 मूल्याकन की प्रक्रिया प्रभावपूर्ण हो जाती है क्योकि इसका आधार लक्ष्य ही होते हैं।

अत कार्यकर्ता समूह तथा सस्था तीनो के लक्ष्य स्पष्ट हो तभी मूल्याकन की प्रक्रिया अपना कार्य कर सकती है। सामूहिक समाज कार्य मे व्यक्ति का समूह के विकास के विशिष्ट लक्ष्यो का निर्धारण समूह की इच्छाओ एव क्षमताओ तथा सस्था के कार्यो को ध्यान मे रखकर कार्यकर्ता द्वारा किया जाना चाहिये।

3. सोद्देश्य सम्बन्ध का सिद्धान्त (Principle of Purposeful Relationship)

सम्बन्ध जीवन का आधार है। व्यक्ति सम्बन्ध स्थापित करके ही पशु स्तर की क्रियाओ से लेकर अति बुद्धिमता पूर्ण क्रियायें करता है। वह अपनी आवश्यकताओ की सतुष्टि सम्बन्ध के माध्यम से करता है। अत प्रत्येक सामाजिक स्थिति मे सम्बन्धो का विशेष महत्व है। सामूहिक समाज कार्य मे कार्यकर्ता तथा समूह के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होने चाहिये तथा वे सम्बन्ध निश्चित उद्देश्यो पर आधारित होने चाहिये। सामान्यत सोद्देश्य सम्बन्ध के निम्न लक्षण हैं

1 कार्यकर्ता की समूह द्वारा स्वीकृति।

2 समूह की कार्यकर्ता द्वारा स्वीकृति।

3 स्नेह तथा आत्म–सचार की पूर्णता।

4 समस्या को सुलझाने की इच्छा का विकास।

5 समूह के सदस्यो की सहभागिता तथा कार्यकर्ता द्वारा व्यावसायिक ज्ञान का उपयोग।

6 सदस्यो की इच्छा का सम्मान तथा आत्मनिर्णय (Self determination) का अधिकार।

7 सामूहिक रुचि तथा सहभागिता मे निरन्तर वृद्धि।

घनिष्ठ सम्बन्ध के तीन प्रमुख आधार हैं

1 कार्यकर्ता को सदस्यो के प्रति सहिष्णुता तथा लगाव प्रदर्शित करते हुये उनकी शिकायतो को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये। जब उन्हे यह विश्वास हो जाता है कि कार्यकर्ता उसमे रूचि ले रहा है तो वे स्वय अपना उत्तरदायित्व समझने लगते हैं।

2 कार्यकर्ता को सदस्यो की संस्कृति का ज्ञान होना चाहिये तथा उसी के अनुरूप कार्यक्रम चलाने चाहिये।

3 कार्यकर्ता को उसी बौद्धिक स्तर से बातचीत तथा कार्य प्रारम्भ करना चाहिये जिस स्तर पर समूह के सदस्य हो।

4 सम्बन्धो की घनिष्टता के लिये सदस्यो का वैयक्तिक अध्ययन आवश्यक होता है।

सामूहिक समाज कार्य मे सम्बन्ध स्थापन सहायता का आधार होता है क्योकि सम्बन्धो के आधार पर ही कार्यकर्ता कार्यक्रमो के माध्यम से सामाजिक सदस्यों के व्यवहार मे परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

4 अनवरत वैयक्तीकरण का सिद्धान्त

(Principle of Continuous Individualization)

सामूहिक समाज कार्य की यह मान्यता है कि समूह अनेको प्रकार के होते हैं ओर व्यक्ति अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु उनका उपयोग विभिन्न तरीको से करता है। परिणामस्वरूप, कार्यकर्ता द्वारा वैयक्तीकरण का अनवरत उपयोग करना आवश्यक होता है। वैयक्तीकरण के लिए कार्यकर्ता मे निम्नलिखित विशेषताये होनी चाहिये

1 पूर्वाग्रहो से स्वतत्रता।

2 मानव व्यवहार का ज्ञान।

3 सुनने तथा अवलोकन करने की क्षमता।

4 सेवार्थी की भावनाओ को समझने की योग्यता।

5 सेवार्थी मे आत्मीयता की भावना उत्पन्न करने की योग्यता।

6 समस्या के अध्ययन निदान तथा उपचार सेवार्थी का सहयोग प्राप्त करने की योग्यता।

कार्यकर्ता प्रत्येक सदस्य की कठिनाइयो को ध्यान मे रखता है तथा सहभागिता के आधार पर उसको प्रोत्साहित करता है। ऐसा इसलिये आवश्यक है क्योकि प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से भिन्न है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे भी सदस्य होते हैं जो समूह के साथ अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयो के कारण अपना सामन्जस्य नहीं कर पाते हैं। इसलिये ऐसे सदस्यो के साथ अनवरत वैयक्तीकरण कर सामूहिक कार्यक्रमो मे सामूहिक कार्यकर्ता द्वारा यथोचित तथा क्षमतानुसार भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

5. निदेर्शित सामूहिक अत क्रिया का सिद्धान्त
(Principle of Guided Group Interaction)

सामूहिक समाज कार्य मे प्राथमिक शक्ति का स्रोत पारस्परिक प्रत्युत्तर ही हैं। अत क्रिया जो समूह की निपुणताओ मे वृद्धि करने हैं तथा सदस्यो मे परिवर्तन लाते हैं सामूहिक कार्यकर्ता अपनी सहभागिता द्वारा अन्त क्रिया को प्रभावित करता है जिससे सदस्यो के व्यवहारो तथा विचारो एव उनकी कार्यविधियो मे अतर आता है।

जब व्यक्ति समूह का सदस्य बनता है तो उसकी अन्य सदस्या के साथ अन्त क्रिया होना स्वाभाविक हो जाता है। उनमे पारस्परिक प्रत्युत्तर होते हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। सामूहिक कार्य मे इस अन्त क्रिया–प्रक्रिया को एक निश्चित दिशा की ओर ले जाने के लिए निर्देशित किया जाता है। कार्यकर्ता इस सिद्धान्त को मानता हैं कि उसका

कार्य अन्त क्रिया की क्षमता मे वृद्धि करना तथा सभी सदस्यो को सहभागिता के लिये प्रोत्साहित करना है। अन्त क्रिया की दिशा निर्देशित होने पर ही सामूहिक उपलब्धियॉं प्राप्त की जा सकती हैं। अत कार्यकर्ता के लिये नितान्त आवश्यक है कि समूह मे होने वाली अन्त क्रिया को सही दिशा प्रदान करे क्योकि समूह के कार्य एव उद्देश्य समूह मे होने वाली अन्त क्रिया पर निर्भर होते हैं। कार्यकर्ता को इस बात का ध्यान सदैव रखना चाहिये कि समूह के आपसी सम्बन्ध सकारात्मक बने रहे तथा अन्त क्रिया का प्रवाह धनात्मक दिशा में हो। इससे आत्मविश्वास की भावना जागृत होती है तथा पारस्परिक विश्वास बढता है।

6. प्रजातांत्रिक सामूहिक आत्म–निर्णय का सिद्धान्त
(Principle of Democratic Self-Determination)

कार्यकर्ता का कार्य समूहो को अपना निर्णय लेने तथा कार्यो को निश्चित करने मे सहायता प्रदान करना है। समूह को अपनी क्षमताओ एव योग्यताओ के अनुसार अधिकाधिक उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिये तैयार करना कार्यकर्ता का कर्तव्य है। सामूहिक क्रियाओ के निर्णय का मूल स्रोत समूह स्वयं है। यह सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि समूह तथा व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्वों का विकास तभी कर सकते हैं जब उन्हे उत्तरदायित्व ग्रहण करने के अवसर उपलब्ध कराये जाये। लेकिन उन्हे कितना उत्तरदायित्व किस विधि से दिया जाय यह निश्चित करना कार्यकर्ता का कार्य होता है।

सामूहिक कार्य मे समूह निर्माण के प्रथम चरण से लेकर अन्तिम चरण तक होने वाली सभी क्रियाये जनतत्रीकरण के सिद्धान्त पर आधारित हैं। समूह के सदस्य स्वयं अपना रास्ता तय करते है तथा उसे पूरा करते हैं। कार्यकर्ता का कार्य केवल दिशा प्रदान करना तथा सकारात्मक रूप से समूह की अन्त क्रिया को निर्देशित करना होता है। समूह की सभी क्रियाये समूह के सदस्यो द्वारा स्वत प्रेरित होती है। कार्यकर्ता का कार्य सदस्यो को

सामाजिक वास्तविकता का सही ज्ञान कराना तथा उनकी खोई हुई शक्तियो को सही दिशा प्रदान करना है।

7. लोचदार प्रकार्यात्मक सगठन का सिद्धान्त
(Principle of Flexible Functional Organization)

सामूहिक कार्य म कार्यकर्ता समूह का निर्देशन समूह सगठन के माध्यम से करता है। पहले वह समूह को सगठित करता है। तदुपरान्त उस सगठन के माध्यम से कार्यक्रमो को सम्पादित करता है लेकिन उसके द्वारा बनाया गया औपचारिक सगठन दूसरे प्रकार के समूहो मे पाये जाने वाले सगठनो से भिन्न होता है। सामूहिक कार्यकर्ता औपचारिकता को उतना ही महत्व देता है जिससे आवश्यकओ की पूर्ति अधिक से अधिक प्रभावापूर्ण ढग से हो सके और कोई बाधा उत्पन्न न हो। अर्थात उसके सगठन मे लचीलापन होता है जिससे आवश्यतानुसार अपेक्षित परिवर्तन करना सम्भव हो सके।

8. प्रगतिशील कार्यक्रम अनुभवो का सिद्धान्त
(Principle of Progressive Programme Experiences)

सामूहिक समाज कार्य मे उसी स्तर से कार्य प्रारम्भ होना चाहिये जिस स्तर की सदस्यो की अभिरुचियाँ, आवश्यकतायें अनुभव निपुणताये तथा दक्षताएँ हो। जैसे इन शक्तियो का विकास हो वैसे–वैसे कार्यक्रमो मे भी परिवर्तन लाया जाना चाहिये तथा इस प्रस्तावित परिवर्तन की दिशा विकासात्मक होनी चाहिये। इस सिद्धान्त के अनुसार सामूहिक समाज कार्य मे कार्यक्रम प्रारम्भ करने का एक बिन्दु होता है और उस बिन्दु की ठीक से पहचान करना तथा इसकी उपयुक्त परिभाषा करनी महत्वपूर्ण होता है। कार्यकर्ता समूह के स्तर के अनुरूप ही कार्यक्रमो को आयोजित करने की सलाह देता है। वह कार्यक्रम नियोजन तथा आयोजित किए गए कार्यक्रमो के कार्यान्वयन मे समूह की सहायता करता है। मूल्याकन के द्वारा वह कार्यक्रम के अनुभवो मे जटिलता लाता है। कार्यकर्ता समूह को विकासात्मक

कार्यक्रमो को सगठित करने के लिये निरन्तर प्रोत्साहित करता रहता है।

9. स्रोतो के उपयोग का सिद्धान्त (Principle of Resource Utilization)

सामूहिक समाज कार्य मे सस्था तथा समूह के कार्य बहुत बडी सीमा तक समूह में उपलब्ध साधनो पर निर्भर होते हैं कार्यकर्ता के लिये आवश्यक होता है कि उसे समुदाय व सस्था के विभिन्न स्रोतो का ज्ञान हो जिससे समूह के उद्देश्यो को प्रभावपूर्ण रूप से पूरा किया जा सके। इन स्रोतो मे व्यक्ति, सामाजिक सस्थाये, उपकरण, सेवाये, स्थान आदि आते हैं। समूह को जब तथा जिस स्रोत एव साधन की आवश्यकता हो तब कार्यकर्ता को इससे लाभ उठाने मे पूर्णरूपेण समर्थ होना चाहिये। सस्था एव समुदाय मे उपलब्ध साधनो एव स्रोतो से समूह अनुभव को न केवल बढाया जा सकता है वरन् इससे सभी समूह सदस्यो के विकास को भी प्रोत्साहित किया जा सकता है।

10. मूल्यांकन का सिद्धान्त (Principle of Evaluation)

मूल्यांकन एक निर्णय की प्रक्रिया है जो निश्चित करती है कि समूह, कार्यकर्ता तथा संस्था का क्या उत्तरदायित्व है, उनमें उसको निभाने की कितनी क्षमता है तथा इनकी क्या-क्या शक्तियाँ तथा कमजोरियाँ हैं इस प्रकार मूल्यांकन का उद्देश्य सही स्थिति का आकलन करना है। सामूहिक कार्यकर्ता निम्न स्थितियो का मूल्यांकन करता है :

1 कार्यक्रम का मूल्याकन।
2 सदस्यों की सहभागिता तथा अनुभव का मूल्याकन।
3 कार्यकर्ता का अपना स्वयं का मूल्यांकन।

मूल्यांकन द्वारा कार्यक्रम के महत्व का ज्ञान होता है, सदस्यो की मनोवृत्तियो, रूचियो एवं अनुभवो का पता चलता है, *अवरोधो एव बाधाओं का* ज्ञान होता है, सदस्यो की इच्छाओ का पता चलता है तथा उनकी क्षमताओ, दोषों निपुणताओ, सम्बन्धो साथ ही साथ कमियो, अक्षमताओ, दोषो तथा सघर्षों की जानकारी होती है। इससे कार्यकर्ता को स्वयं मे परिवर्तन

कार्यक्रम मे बदलाव तथा क्रियात्मक विधियो मे सशोधन करने के अवसर प्राप्त होते हैं।

IX *सामाजिक सामूहिक कार्य की निपुणतायें*
(Skills in social group work)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसका अस्तित्व समूह से ही तथा समूह मे ही है। जिस प्रकार कोषाणु द्वारा जीवन सम्भव होता है, उसी प्रकार समूह द्वारा ही व्यक्ति सामाजिक स्वरूप प्राप्त कर सकता है। मानव मे आत्म निर्भरता की प्रवृति पायी जाती है और इसकी प्राप्ति हेतु अपेक्षित भूमिका निर्वाह के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है ताकि वह इन निपुणताओ मे कौशल का विकास कर सके जो इन भूमिकाओ को प्रतिपादन के लिए आवश्यक होती है।

किसी भी व्यवसाय के लिये निपुणताओ का होना उसके स्वरूप व महत्व को स्पष्ट करता है। समाज कार्य की प्रगति व विकास मे निपुणताओ का एक विशेष महत्व है, क्योकि यह मानव व्यवहार की समस्याओं के समाधान से सम्बन्धित है और इन समस्याओं का तब तक प्रभावपूर्ण सामाधान नहीं किया जा सकता जब तक विशेष योग्यताओं एव कौशल का प्रयोग न किया जाय। समाज कार्यकर्ता मे निपुणताओ का होना ही यह निश्चित करता है कि वह अपने उद्देश्य मे कहाँ तक सफल हो सकेगा।

निपुणता का अर्थ (Meaning of Skills)

सामान्य अर्थ में निपुणता का अर्थ कार्य करने की क्षमता से है। वेबस्टर्स शब्दकोष के अनुसार निपुणता का तात्पर्य कार्य के क्रियान्वयन व उसे पूर्ण करने के लिए अपेक्षित ज्ञान एव दक्षता से है। ट्रेकर के अनुसार निपुणता कार्यकर्ता की ज्ञान एव समझ के विशेष परिस्थितियों मे उपयोग की क्षमता से है। इस प्रकार परिवर्तन प्रारम्भ करने तथा इसे नियत्रित करने की क्षमता है जिससे पदार्थ मे होने वाला परिवर्तन इस पदार्थ के गुण एव क्षमता पर अधिक से अधिक ध्यान देते हुए एव उपयोग करते हुए, किया जा सके।

इन परिभाषाओ से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति निपुणताओ की प्राप्ति ज्ञान वृद्धि एव कार्य अनुभव से करता है। जब वह किसी कार्य मे सतत् लगा रहता है तो निपुणताये स्वय आ जाती हैं। यदि कार्यकर्ता अपने समूह की सहायता प्रभावकारी ढंग से करना चाहता है तो उसे प्रासगिक सामाजशास्त्रीय एव मनोवैज्ञानिक प्रत्ययो का ज्ञान होना आवश्यक है तथा इस बात का भी ज्ञान होना आवश्यक होता है कि वह इन प्रत्ययो को समूह मे किस प्रकार उपयोग में लाये। निपुणता के तीन अग हैं—ज्ञान, भावना एव क्रिया। सामान्य रूप से प्रणाली तथा निपुणता को समान समझा जाता है। परन्तु ऐसा नहीं है। प्रणाली एक क्रमानुसार व्यवस्थित तथा नियोजित काम करने का तरीका है। इसके अन्तर्गत सदैव ज्ञान और समझ को विशिष्ट परिस्थिति मे उपयोग करने की क्षमता है। प्रणाली ज्ञान व समझ को प्रयोग करते हुए व्यवस्थित रूप से काम करने का एक तरीका है जबकि निपुणता परिस्थिति की विशिष्टता को ध्यान मे रखते हुए ज्ञान और समझ का सम्यक प्रयोग करने की क्षमता है।

सामाजिक सामूहिक कार्य की अनिवार्य निपुणतायें (Essential Skills in Social Group Work)

ट्रेकर ने सामूहिक कार्य की निम्नलिखित निपुणताओ का उल्लेख किया है :

1. **उद्देश्यपूर्ण सम्वन्ध स्थापित करने की निपुणता (Skill in Establishing Purposeful Relationship)**

   (अ) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह की स्वीकृति प्राप्त करने और समूह के साथ एक सकारात्मक तथा व्यावसायिक आधार पर सम्बन्ध स्थापित करने मे अवश्य निपुण होना चाहिये।

   (व) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह के सदस्यो को एक दूसरे को स्वीकार करने और सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में समूह के

साथ सहयोग करने मे अवश्य ही निपुण होना चाहिये।

समूह की परिस्थिति का विश्लेषण करने की निपुणता
(Skill in Analysing Group Situation)

(अ) सामूहिक कार्यकर्ता मे समूह के स्तर, उसकी आवश्यकताओ तथा गतिशीलता को जानने के लिये समूह विकास के स्तर को समझने की निपुणता अवश्य होनी चाहिये। यह समूह का प्रत्यक्ष अवलोकन कर इसे जानने तथा समझने की निपुणता हो जिसके आधार पर इसका उपयुक्त विश्लेषण करना तथा इसके विषय मे समीचीन निर्णय सम्भव होता है।

(ब) सामूहिक कार्यकर्ता मे इस बात की निपुणता होनी चाहिये कि वह समूह को अपने विचारो को व्यक्त करने उद्देश्यो को निर्धारित करने, आवश्यक लक्ष्यो का स्पष्टीकरण करने और समूह के रुप में अपनी शक्तियो एव सीमाओ को समझने मे सहायता कर सके।

समूह के साथ सहभागिता करने मे निपुणता
(Skill in Participation with the Group)

(अ) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह के प्रति अपनी भूमिका निर्धारित करने, उसकी व्याख्या करने उसे ग्रहण करने और उसे परिवर्तित करने मे अवश्य ही निपुण होना चाहिये।

(ब) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह के सदस्यो को भाग लेने, अपने बीच मे से नेतृत्व की पहचान करने और अपनी क्रियाओ के विषय मे उत्तरदायित्व स्वीकार करने मे सहायता देने मे अवश्य ही निपुण होना चाहिये।

4. समूह की भावनाओ से निपटने में निपुणता

(Skill in Dealing with the Group Feelings)

(अ) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह के प्रति अपनी भावनाओ को नियन्त्रित करने में अवश्य ही निपुण होना चाहिये और उसे प्रत्येक नवीन परिस्थिति का अधिक से अधिक विषयनिष्ठता (Objectivity) के साथ अध्ययन करना चाहिये।

(ब) सामूहिक कार्यकर्ता को समूह को अपनी सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनो प्रकार की भावनाओं को व्यक्त करने मे सहायता प्रदान करने मे अवश्य निपुण होना चाहिये। उसे समूह द्वारा सामूहिक एव आन्तरिक सघर्ष की परिस्थिति का विश्लेषण करने मे सहायता देने मे अवश्य निपुण होना चाहिये।

5. कार्यक्रम के विकास मे निपुणता **(Skill in Programme Development)**

(अ) सामूहिक कार्यकर्ता को सामूहिक चिन्तक का मार्ग निर्देशित करने में अवश्य निपुण होना चाहिये जिससे उसकी अभिरुचियाँ और आवश्यकतायें व्यक्त की जा सकें और उन्हे समझा जा सके।

(ब) सामूहिक कार्यकर्ता को समूहों के विकास के लिए ऐसे कार्यक्रमो का नियोजन एवं आयोजन करने मे अवश्य निपुण होना चाहिये जिनके माध्यम से समूह अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति करना चाहते हैं।

6. संस्था और सामुदायिक साधनों के उपयोग में निपुणता

(Skill in Using Agency and Community Resources)

(अ) सामूहिक कार्यकर्ता को ऐसे विभिन्न सामुदायिक ससाधनों का पता लगाने और उनके विषय मे समूह को जानकारी देने में अवश्य निपुण होना चाहिये जिनका उपयोग कार्यक्रम उद्देश्यों

मिलकर तथा उनसे सम्पर्क द्वारा, v होम विजिट्स द्वारा, vi आर्थिक तथा सामाजिक प्रभावो की जानकारी द्वारा, vii कार्यस्थल की दशा को जानकर, viii उस समुदाय की स्थिति की जानकारी द्वारा जहाँ से सदस्य आया है।

सामूहिक समाज कार्य मे तथ्यो की खोज निम्न ज्ञान एव समझ पर आधारित है

1 व्यक्ति के व्यवहार तथा उसकी गत्यात्मकता (Dynamics) के विषय मे सम्पूर्ण जानकारी
2 समूह मे सदस्य की स्थिति तथा भूमिका
3 व्यक्ति पर समूह के प्रभाव की सीमा
4 समूह पर व्यक्ति के प्रभाव की सीमा
5 पूरे समूह का वातावरण
6 समूह के अन्तर्वेयक्तिक सम्बन्ध
7 सामाजिक तथा आर्थिक पर्यावरण

सामूहिक समाज कार्यकर्ता समूह के सदस्यो से सम्बन्धित तथ्यो की खोज करता है। वह इस बात का पता लगाता है कि समूह की रुचियॉ, इच्छायें, शक्तियां एवं सीमाये क्या हैं। वह समूह की विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त करता है, सामाजिक सरचना का पता लगाता है सदस्यो की आवश्यकताओ मे प्राथमिकता निर्धारित करता है तथा उन साधनो का पता लगाता है जो संस्था अथवा समुदाय मे उपलब्ध हैं।

2. निदान (Diagnosis)

निदान शब्द अधिकांशत चिकित्साशास्त्र मे प्रयोग किया जाता है जिसका तात्पर्य रोग के सम्पूर्ण ज्ञान से है। समाज कार्य मे निदान का अर्थ न केवल समस्या के पूर्ण ज्ञान से होता है बल्कि सेवार्थी से सम्बन्धित पूर्ण ज्ञान से भी होता है। सामूहिक समाज कार्यकर्ता तथ्यो

को ज्ञात कर लेने के पश्चात यह पता लगाता है कि वे कौन से कारक हैं जो समूह या व्यक्ति के वर्तमान व्यवहार के लिए उत्तरदायी हैं। यह उनकी खोज करके समस्या का निदान करता है। यदि सेवार्थी की समस्या का समाधान चेतन अथवा अचेतन किसी भी प्रकार से करना है तो समस्या का उचित निदान किया जाना हर प्रकार से आवश्यक होता है।

निदान के अन्तर्गत हम मुख्य रुप से दो प्रश्नो का उत्तर देते हैं

1 समूह की समस्या अथवा समस्याओ के क्या कारण है?

2 किन–किन साधनो द्वारा समस्या का निदान किया जा सकता है? उल्लेखनीय है कि समस्या के निदान का कार्य तथा समस्या समाधान साथ ही साथ चलता है।

निदान के अन्तर्गत 3 चरण होते हैं

1. तथ्यो का सकलन (Collection of facts)

   i) समस्या का मूल्याकन
   ii) समूह के व्यक्तित्व का मूल्याकन
   iii) सामाजिक पर्यावरण का मूल्याकन

2. कारण की खोज (Search of etiology)

   i) समस्या का स्वरूप
   ii) सामुदायिक पर्यावरण का समूह का प्रभाव
   iii) समस्या उत्पत्ति अथवा विकास के मार्ग मे बाधाये
   iv) समस्या के उपचार के उपलब्ध सुलभ हैं तथा अनुपलब्ध

3. श्रेणीकरण (Classification)

   i) समस्या के आधार पर समूह के सदस्यो का वर्गीकरण अथवा समूहो का वर्गीकरण
   ii) समस्या के समाधान मे सस्था की भूमिका

सामूहिक समाज कार्य मे निदान की प्रक्रिया कभी भी समाप्त नहीं होती है। निदान की प्रक्रिया पहले स्तर से प्रारम्भ होकर समस्या के समाधान तक चलती है। निसन्देह उसमे आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता है।

उपचार (Treatment)

जब सामूहिक समाज कार्यकर्ता तथ्य सकलन तथा निदान द्वारा यह निश्चित कर लेता है कि समूह किस प्रकार की सहायता चाहता है और उसकी इच्छा किस सीमा तक पूरी की जा सकती है तो वह सिद्धान्तो एव प्रविधियो के आधार पर उसके अनुरूप विभिन्न कार्यक्रमो का आयोजन करता है। साथ ही साथ वह मूल्याकन करता रहता है कि उसके कार्यक्रम का प्रभाव उस समस्या विशेष को हल करने मे कहाँ तक सफल हो रहा है।

सामूहिक समाज कार्य मे चिकित्सा दो प्रकार की होती है

1. अल्पकालीन (Short-term)
2. दीर्घकालीन (Long-term)

जो समूह मनोरजन एव खाली समय की क्रियाओ के लिए सगठित किये जाते हें वे प्राय अल्पकालीन अवधि के होते है तथा जो समूह विकास के लिए अथवा चिकित्सा के उद्देश्य से सगठित किये जाते है, वे दीर्घकालीन अवधि के होते हें।

उपचार के माध्यम (Media of treatment)

सामूहिक समाज कार्यकर्ता निम्नलिखित प्रमुख चिकित्सा माध्यमो का उपयोग करता है .

1. उद्देश्पूर्ण एव सूझ–बूझ पर आधारित समूह के सदस्यो के बीच व्यवसायिक सम्बन्ध की स्थापना
2. समूह के सदस्यो मे पाए जाने वाले सम्बन्धो को मैत्रीपूर्ण एवं मजबूत बनाना

3. शाब्दिक सम्प्रेषण (Verbal communication)

4 गैर-शाब्दिक या दैहिक सम्प्रेषण (Non Verbal Communication)

5 पर्यावरण का उद्देश्यपूर्ण चुनाव (Purposeful Selection of Environment)

उपचार के ढंग (Methods of treatment)

उपचार मे निम्नलिखित तरीके उपयोग मे लाये जाते हैं

1 परानुभूति (Empathy), गर्मजोशी (Warmth) तथा निश्छलता

2 आत्म-प्रकटन (Self-expression)

3 अन्वेषण (Exploration)

4 आलम्बन (Support)

5 ज्ञानात्मक पुनर्संरचना (Cognitive Restructuring)

6 भूमिका निष्पादन (Role playing)

7. कार्यक्रम क्रियाओ का उपयोग(Use of Programme Activities)

8 स्पष्टीकरण (Clarification)

9 आदर्श प्रदर्शन (Modeling)

सामूहिक समाज कार्यकर्ता का प्रमुख कार्य सहायक (Helping) एवं आलम्बनात्मक (Supportive) वातावरण तैयार करना होता है ताकि सामूहिक क्रियाये सफलतापूर्वक सम्पन्न की जा सके।

संदर्भ

1 In its outer aspect, method is a way of doing something but underneath doing we always discover an *integrated aranagement of knowledge*, understanding and principles

Trecker, H B., *Social Group work, Principles and Practice* Association Press New York, 1955, P 3

2 Social group work aims at the development of persons through the interplay of personalities in group situations and at the creation of such

group situation as provide for integrated, cooperative group action for common ends

Coyle, Grace, "Social Group Work", In Social work Year Book, American Association of Social Workers, New York, 1937, p 461

3 *We see social group work as a process and a method through which group life is affected by worker who consciously directs the interacting process towards the accomplishment of goals which are conceived in a democratic frame of reference*

Wilson G and Ryland G., Social Group Work Practice, Houghton Miflin, Boston 1947, P6

4 *Social group work is a psycho-social process which is concerned no less with developing leadership ability and cooperation than with building on the interests of the group for a social purpose*

5 *Social group work is a method through which individuals in groups in social agency settings are helped by a worker who guides their interaction in program activities so that they may related themselves to others and experience growth opportunities in accordance with their needs and capacities to the end of individual, group and community development*

Trecker, H B, op cit, P5

Social group work is a method of social work which helps individuals to enhance their social functioning through perposeful group experiences and to cope more effectively with their personal, group or community problems

6 *Konopka, G, Social Group Work A Helping Process, Practice Hall, cliffs, 1966, P 29*

7 *Principles-that is, general rules or laws, concepts, fundamental truths, generally accepted tenets-are the means by which we proceed from one situtlon to another.*

Barn, A S, Burton, W H and Brueckner, Leo J Supervision-Principles and Practice in the Improvement of Instruction Appleton-Centure Croft, New York, PP. 32-33

8 *A Principle must be undrstood to mean a hypothesis so adequately tested by observation and/or experiment that it may intelligently be put forward as a guide in action or as a means of understanding*

White, Leonard D, The frontiers of Public Adminstration, Chicago press, Chicago, 1936, P21

सामुदायिक संगठन
(COMMUNITY ORGANIZATION)

साधारण बोलचाल मे सामुदायिक सगठन का अभिप्राय किसी समुदाय की आवश्यकताओ तथा साधनो के बीच समन्वय स्थापित कर समस्याओ का समाधान करने से हैं। सामुदायिक सगठन एक प्रक्रिया है। इस रुप मे सामुदायिक सगठन का तात्पर्य किसी समुदाय या समूह मे लोगो द्वारा आपस मे मिलकर कल्याण कार्यों की योजना बनाना तथा इसके कार्यान्वयन के लिए उपाय तथा साधनो को निश्चित करना है। किसी समुदाय से सबधित प्रक्रियाए अनेक प्रकार की हो सकती है। अत समुदायिक सगठन की प्रक्रिया का अभिप्राय केवल उस प्रक्रिया से है जिसमे समुदाय की शक्ति और योग्यता का विकास किया जाता है।

स्ट्रप' ने समुदायिक सगठन का अर्थ बतलाते हुए कहा है प्रमुख रूप से इस शब्द के कम से कम तीन अर्थ है—प्रथम, इसका प्रयोग समाज कार्य की उन प्रत्यक्ष एव समाविष्ट प्रक्रियाओ को प्रदर्शित करने के लिए किया जाता हे जिसकी आवश्यकता समाज कल्याण के मौलिक उद्देश्यो के पूर्णतम प्रकटन के लिए होती है। द्वितीय, सामुदायिक सगठन का प्रयोग सम्पूर्ण समुदाय के कल्याण के लिए व्यावसायिक व्यक्तियो एव सभ्य नागरिको द्वारा प्रयोग मे लायी जाने वाली क्रियाओ का बोध कराने के लिए किया जाता है तृतीय सामुदायिक सगठन का प्रयोग समाजशास्त्रियो द्वारा तथा समाज वेज्ञानिको द्वारा समुदाय की सरचना का बोध कराने के लिए किया जाता है।

I परिभाषा (Definition)

सामुदायिक सगठन की प्रमुख परिभाषाओं का वर्णन यहा किया जा रहा है

लिण्डमैन[2] (1921)

सामुदायिक सगठन सामाजिक सगठन का वह स्तर है जिसमे समुदाय के द्वारा चेतन प्रयास किये जाते है तथा जिसके द्वारा वह अपने मामलो को प्रजातात्रिक ढग से नियत्रित करता है तथा अपने विशेषज्ञो, सगठनो, सस्थाओ तथा सस्थानो से जाने–पहचाने अन्तर्सम्बन्धो के द्वारा उनकी उच्च कोटि की सेवाये प्राप्त करता है।

पैटिट[3] (1925)

सामुदायिक सगठन एक समूह के लोगो को उनकी सामान्य आवश्यकताओ को पहचानने तथा इन अवश्यकताओ की पूर्ति मे सहायता करने के रुप मे उत्तम प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है।

सैण्डरसन एण्ड पोल्सन[4] (1939)

सामुदायिक सगठन का उद्देश्य समूहो तथा व्यक्तियो के मध्य ऐसे सबन्ध विकसित करना है जिससे उन्हे ऐसी सुविधाओं तथा संस्थाओ का निर्माण करने तथा उन्हे बनाये रखने के लिए एक साथ कार्य करने मे सहायता मिलेगी तथा जिसके माध्यम से समुदाय के सभी सदस्यो के समान कल्याण मे अपने उच्चतम मूल्यों का अनुभव कर सके।

मैकमिलन[5] (1947)

अपने सामान्य अर्थ मे सामुदायिक सगठन समूहो की सहायता का विचारपूर्वक किया हुआ निर्देशित प्रयास है जिससे वे अपने उद्देश्यो और कार्यो को प्राप्त कर सके। इनका प्रयोग चाहे लोगो

को इसका ज्ञान हो या न हो से परे कर उस स्थान पर किया जाता है जहाँ पर दो या दो से अधिक समूहो की योग्यताओ व साधनो को सामान्य या विशिष्ट लक्ष्यो की प्राप्ति के लिए एकत्रित करना होता है।

डनहम[6] (1948)

समाज कल्याण के लिए सामुदायिक सगठन का अर्थ एक भौगोलिक क्षेत्र या कार्यक्षेत्र के समाज कल्याण ससाधनो मे समायोजन लाने तथा बनाये रखने की प्रक्रिया से है।

रास[7] (1955)

सामुदायिक सगठन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा समुदाय अपनी आवश्यकताओ अथवा उद्देश्यो को पहचानता है, इन आवश्यकताओ *अथवा उद्देश्यो के साथ कार्य करने के लिए विश्वास एव इच्छा* विकसित करता है, इन आवश्यकताओ अथवा उद्देश्यो के साथ कार्य करने के लिए साधनो (आन्तरिक और/अथवा/वाह्य) का पता लगाता है, इनके सबध मे क्रिया करता है और ऐसा करते हुए समुदाय मे सहयोगात्मक तथा सहकारात्मक मनोवृतियो एव व्यवहारो का विकास एव विस्तार करता है।

फ्रीडलेण्डर[8] (1955)

समाज कल्याण के सन्दर्भ मे सामुदायिक सगठन की परिभाषा एक भौगोलिक क्षेत्र मे समाज कल्याण आवश्यकताओं तथा सामुदायिक कल्याण साधनो के बीच क्रमिक और अधिक सार्थक समायोजन उत्पन्न करने वाली समाज कार्य की एक प्रक्रिया के रुप मे की जा सकती है।

उपरिलिखित परिभाषाओ से स्पष्ट होता है कि सामुदायिक सगठन मे सेवार्थी समुदाय होता है। इसका प्रमुख उद्देश्य समुदाय की इस प्रकार सहायता करना होता है जिससे वह अपनी सहायता स्वय करने मे समर्थ हो सके। इसकी प्रक्रिया उद्देश्यमूलक होती है।

सामुदायिक सगठन की कार्यविधि मनोवेज्ञानिक सिद्धान्तो से अधिक समाजशास्त्रीय सिद्धान्तो पर निर्भर करती हे।

सामुदायिक सगठन दो शब्दो से मिलकर बना है। समुदाय तथा सगठन। समुदाय की एक भोगोलिक सीमा होती हे तथा उस क्षेत्र की कुछ सामान्य विशेषताए होती है। समाज कार्य की दृष्टि से समुदाय वह क्षेत्र है जहॉ पर लोग समाज कल्याण सम्बन्धी सामान्य रुचिया रखते है तथा जहॉ सामुदायिक सगठन की प्रक्रिया चल रही होती है। यह एक छोटा समुदाय, नगर का एक क्षेत्र, अथवा पूरा नगर एक राज्य, एक देश, सभी कुछ हो सकता है। सगठन एक प्रक्रिया ह जिसके द्वारा समुदाय के लोगो को अपनी मूलभूत समस्याओ को समझने, सुलझाने तथा इसके लिए आवश्यक सुविधाये उपलब्ध कराने का प्रयत्न किया जाता हे। समुदाय स्वय विभिन्न प्रकार की सस्थाओ की सेवाओ का उपयोग करता हे। चाहे ये सस्थाये आर्थिक विकास से सम्बन्धित हो अथवा स्वास्थ्य से या कल्याण से सामुदायिक सगठन कार्यकर्ता का कार्य निरन्तर उत्साहित करते रहना होता है।

जब हम विभिन्न लेखको द्वारा दी गयी परिभाषाओ का विश्लेषण करते हैं तो सामुदायिक सगठन की निम्नलिखित विशेषताये सामने आती हैं :

1. यह .एक प्रक्रिया हे जिसके द्वारा समुदाय पहले से अधिक सकारात्मक एव रचनात्मक रुप से कार्य करने की क्षमता विकसित करता है। सामाजिक कार्यकर्ता इस प्रक्रिया को जान--बूझ कर सतर्क होकर उपयोग मे लाता है।
2. इस प्रक्रिया के द्वारा समुदाय अपनी मूलभूत आवश्यकताओ को जानने तथा उनकी पूर्ति की महत्ता को पहचानने मे सफल होता है। समुदाय स्वयं आवश्यकताओ की पूर्ति तथा समस्या समाधान का प्रयास करता है। इस स्थिति मे कार्यकर्ता का पहला कार्य समुदाय की उन समस्याओ पर ध्यान आकृष्ट करने मे सहायता करना होता है जिनसे उनका सम्पूर्ण जीवन प्रभावित होता है।

3 जब समस्याओ एव आवश्यकताओ का ज्ञान समुदाय को हो जाता है तो कार्यकर्ता उन आवश्यकताओ को पूरा करने तथा समस्याओ के निराकरण करने हेतु प्राथमिकता निर्धारित करने मे समुदाय की सहायता करता है जिससे उसी के अनुसार प्रयासो मे एकरूपता तथा गहनता लायी जा सके।

4 सामुदायिक सगठन कार्यकर्ता समुदाय को उन ससाधनो की खोज करने मे सहायता करता है जिनसे आवश्यकताओ की पूर्ति तथा समस्याओ का समाधान सभव है। समुदाय मे अनेक ऐसी सस्थाए होती है जो समुदाय के कल्याण के लिए कार्य करती है लेकिन समुदाय को उनका ज्ञान नही होता है। कार्यकर्ता इन सस्थाओ का पता लगाकर समुदाय द्वारा इनकी सेवाओ का उपयोग किए जाने पर बल देता है।

5 इस प्रक्रिया के द्वारा कार्यकर्ता समुदाय को विशेष समस्या का समाधान करने तथा आवश्यकता पूर्ति करने के लिए प्रेरित करता है, प्रयास करने के लिए उत्साहित करता है तथा मार्गदर्शन करता है।

6 जैसे–जैसे कार्य आगे बढता है, समुदाय के लोग उसकी महत्ता को समझने लगते हैं, स्वीकार करने लगते हैं, एक दूसरे के साथ सहयोग करने लगते हैं, आपसी मतभेदो को दूर करते हैं, तथा सभी प्रकार के ससाधनो का उपयोग करने का प्रयास करते हैं एव स्वय समर्थ बनने की प्रबल इच्छा जागृत कर लेते हैं।

II *सामुदायिक सगठन के क्षेत्र*
(Fields of community organization)

सामुदायिक सगठन का क्षेत्र वृहद है तथा इसकी विषयवस्तु विविध प्रकार की है। इसकी आवश्कता सभी प्रकार के समुदायो–गाव, शहर कस्बा मलिन बस्तियो सभी को हैं। सामुदायिक सगठन की प्रक्रिया चेतन या अचेतन रुप से जीवन के विभिन्न क्षेत्रो–राजनीति,

कला, शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक जीवन सभी मे उपयोग मे लायी जाती है। आज समाज कल्याण सेवाओ का सामुदायिक सगठन के रूप मे उपयोग करने की आवश्यकता अनेक कारको से निरन्तर बढ रही है।

1 समुदाय पहले से अधिक जटिल एव समस्याग्रस्त हो रहे हैं।

2 समाज कल्याण सस्थाओ की सख्या बढ रही है।

3 समाज कल्याण के क्षेत्र मे आवश्यकताये निरन्तर बढ रही हैं।

4 आज के समुदाय के लिए उच्च स्तर की सेवाओं तथा उनके प्रशासन की विशिष्ट कलां की आवश्यकता है।

5 बढते हुए विशेपीकरण के लिए उनमे परस्पर अधिक सगठन करने की आवश्यकता है।

6 समुदायो मे एकता और सहयोग कम होता चला जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप समस्याये अधिक बढ रही हैं।

7 आज परस्पर कार्य करने के लिए विशेप ज्ञान एव निपुणता की आवश्यकता अनुभव होने लगी है।

III *सामुदायिक संगठन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि*
(Historical background of community organisation)

सामुदायिक संगठन् शब्द उतना ही प्राचीन है जितना कि सामुदायिक जीवन। ऐसा इसलिए है क्योकि जहॉ कही भी लोग एक साथ रहते है सगठन आवश्यक हो जाता है। लेकिन जब जीवन अधिक जटिल हो जाता है तो ऐसी दशा मे समुदाय के कल्याण के लिए कुछ ओपचारिक सगठनो की आवश्यकता प्रतीत होती है। इग्लेण्ड का इलिजावेथ का निर्धन कानून इस दिशा मे प्रथम प्रयास माना जा सकता है। दान संगठन समिति (Charity Organization Society) आधुनिक सामुदायिक संगठन की आधारशिला थी। सन् 1889 मे लदन मे वे इसलिए स्थापित की गयी जिससे दान या सहायता देने वाली सस्थाये यह जान सके कि किसको किस प्रकार की सहायता

की आवश्यकता है। सभी का बिना जाच–पडताल किये आर्थिक सहायता न प्रदान कर। सन 1877 म अमेरिका के बफैलो (Buffalo) नगर म पहली बार दान सगठन समिति (Charity Organization Society) की स्थापना की गयी। उसके बाद पेन्सलवानिया, बास्टन, न्यूयार्क फिलाडेल्फिया तथा अन्य स्थानो पर भी इसकी स्थापना की गयी। इन दान सगठन समितियो का मूल उद्देश्य एक क्षेत्र की सभी दान संस्थाओ म सहयोग स्थापित करना तथा उनके प्रयत्नो म एकात्मकता या एकीकरण लाना था। सेटलमण्ट हाउस आन्दोलन सामुदायिक सगठन की दिशा म दूसरा कदम था। सबसे पहला पडोसी गिल्ड (Neighbourhood Guild) सन 1886 मे न्यूयार्क मे स्थापित किया गया। इसके पश्चात ये अन्य आद्योगिक नगरो मे स्थापित होते चले गय। प्रथम विश्व युद्ध के समय अमरीका रेडक्रास गृह सवा कार्यक्रम (Red Cross Home Service Programme) चलाया गया जिसका व्यवहारिक स्वरुप व्यवसायिक समाज कार्य जैसा था। उसी दौरान अन्य सस्थाये जसे यगमेन्स क्रिश्चियन एसोशियेशन यग विमेन्स क्रिश्चियन एसोशियेशन, ब्वायज स्काउट्स, गर्ल गाइड आदि कार्यक्रम चलाये गये।

IV *सामुदायिक सगठन के उद्देश्य एव लक्ष्य*
(Aims and objectives of community organization)

वायलेट एम० सीडर[3] ने सामुदायिक सगठन के उद्देश्यो एव लक्ष्यो के विकास की पॉच स्थितिया बतलायी है

1 पहली स्थिति में सेवार्थियो द्वारा सेवाओ के दुरुपयोग को रोकने के प्रयास किए गये।

2 दूसरी स्थिति में सेवार्थियो को सेवा प्रदान करते हुए धन एव प्रयासो के अपव्यय और पुनरावृत्ति के रोकने का प्रयास किये गये।

3 तीसरी स्थिति म सस्थाओ के साधनो को व्यक्तियो की आवश्यकताओ के साथ सामजस्य की स्थिति मे ले जाने के प्रयास किये गये।

मे अधिक अच्छे ज्ञान को विकसित करना और (6) समाज कल्याण क्रियाओ के लिए जनता मे सहयोग और सम्मिलन को विकसित करना।

सैण्डर्सन तथा पॉल्सन" के अनुसार इसके विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित हैं

1 सामुदायिक पहचान की चेतना जागृत करना
2 सम्पूर्ण आवश्यकताओ की सतुष्टि करना
3 समाजीकरण के साधन के रुप मे सामाजिक सम्मिलन की वृद्धि करना
4 सामुदायिक आत्मा तथा भक्ति भावना द्वारा सामजिक नियन्त्रण को प्राप्त करना
5 सघर्ष को रोकने तथा कुशलता एव सहयोग की वृद्धि के लिए समूह और क्रियाओ मे समन्वय स्थापित करना
6 समुदाय की अवाछनीय प्रभावो अथवा परिस्थितियो से रक्षा करना
7 सामान्य आवश्यकताओ का पता लगाने के लिए अन्य सस्थाओ तथा समुदायो से सहयोग करना
8 एकमतता प्राप्त करने के साधनो का विकास करना
9 नेतृत्व को विकसित करना

V *सामुदायिक संगठन की मौलिक मान्यताएं*
(Basic assumptions of community organization)

सामुदायिक संगठन की तीन मान्यताएं हैं

1 मूल्य सम्बन्धी मान्यताए
2 समस्या सम्बन्धी मान्यताए
3 ढग सम्बन्धी मान्यताए

मूल्य राम्बन्धी मान्यताए

1 व्यक्ति की आवश्यक गरिमा एव उसके नैतिक गुण तथा व्यक्तित्व के प्रकटन के लिए स्वतत्रता महत्वपूर्ण है।

2 प्रत्येक सामाजिक प्राणी मे अभिवृद्धि की महान क्षमता होती है अपने जीवन की व्यवस्था के लिए शक्तियो एव साधनो का पाया जाना आवश्यक है।

3. जीवन एव पर्यावरण मे सुधार लाने के लिए व्यक्ति द्वारा सधर्ष ओर प्रयास करने की आवश्यकता होती है।

4 उन आवश्यक आवश्यकताओ (भोजन, वस्त्र, मकान) के प्रति व्यक्ति का अधिकार है, जिनके विना जीवन पूर्ण होने मे वाधाये आती हैं।

5 आवश्यकता एव सकट के समय व्यक्ति को सहायता प्राप्त करने का अधिकार हे।

6 एक ऐसे सामाजिक सगठन का महत्व हे जिसके प्रति व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी है और जो स्वयं व्यक्ति की भावनाओ के प्रति उत्तरदायी होता हे।

7 ऐसे पर्यावरण की आवश्यकता जो वैयक्तिक अभिवृद्धि एवं विकास को प्रोत्साहित करती है।

8 व्यक्ति को अपने समुदाय के कार्यो मे भाग लेने का अधिकार तथा साथ ही साथ कर्तव्य भी होता है।

9 आत्म सहायता किसी भी कार्यक्रम की आवश्यक आधार होती है।

सामुदायिक समस्या से सम्बन्धित मान्यताएं

1. वृहद उप समूहो के पृथक ईकाइयो के रुप में दृढता विकसित करने की प्रवृत्ति समुदाय मे सामाजिक तनाव उत्पन्न करती हे जो उसके लिए अचेतन रूप से हानिकारक है।

2 सामाजिक परिवर्तन की दिशा मे सक्रिय सहभागिता को रोकने वाली बाधाये वैयक्तिक विकास को रोकती है।

3 प्रजातन्त्र उस अवस्था मे और भी दुर्बल हो जाता है जब सहायता प्रदान करने वाली सस्थाओ को सहायता न प्रदान की जाये तथा नवीन सस्थाओ का विकास न किया जाये।

4 व्यक्तियो की समुदाय के प्रति अपनत्व की भावना को नगरीकरण की समस्या ने पूरी तरह नष्ट कर दिया है।

5 प्रौद्योगिकी ही परिवर्तन की प्रमुख शक्ति है। प्रौद्योगीकरण से सामाजिक सम्बन्धो पर पडने वाले प्रभावो पर बिना ध्यान दिये नगरीकरण तथा औद्योगीकरण पर जोर दिया जा रहा है।

6 औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के द्वारा सामान्य अथवा सम्मिलित मूल्यो को विकसित करने तथा बनाये रखने की समस्या को और कठिन बना दिया है।

ढग से सम्बन्धित मान्यताएं

1 व्यक्ति परिवर्तन चाहते हैं और परिवर्तन कर सकते हैं।

2 समुदाय अपनी समस्याओ के समाधान की क्षमता का विकास कर सकते हैं।

3 व्यक्ति को अपने समुदाय मे परिवर्तन लाने तथा उनके साथ सामजस्य प्राप्त करने मे भाग लेना चाहिए।

4 उन समस्याओ के साथ पूर्णतावादी ढग सफलतापूर्वक कार्य कर सकता है जिसका आशावादी ढग कदापि सामना नहीं कर सकता हैं।

5 प्राय व्यक्ति व समुदाय अपनी आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए सगठित होने मे ठीक उसी प्रकार सहायता की आवश्यकता का अनुभव करते हैं जिस प्रकार अनेक व्यक्ति अपनी समस्याओ का सामना करने के लिए सहायता चाहते हैं।

6. सामुदायिक जीवन मे अपने आप लाये गये अथवा आत्म–विकसित परिवर्तन अर्थपूर्ण तथा स्थायी होते हैं जो जबरदस्ती लादे गये परिवर्तनों में नहीं होता है।

VI *सामुदायिक संगठन के ढंग* *(Methods of community organization)*

मैक मिलन[12] ने सामुदायिक सगठन के निम्नलिखित तरीके बताये हैं

1 केन्द्रीय अभिलेख सदैव तैयार करना
2. नियोजन करना
3. विशिष्ठ अध्ययन एव सर्वेक्षण करना
4. संयुक्त बजट तैयार करना
5. शिक्षा, विवेचन एवं जन सम्बंधों से सम्बंधित ढंगों का प्रयोग करना
6. संयुक्त वित्तीय कार्यो का नियोजन एवं क्रियान्वयन करना
7. संगठन करना
8. अन्तर्संस्थात्मक सलाह देना
9 सामूहिक विचार–विमर्श करना
10. विचार–विमर्श के द्वारा ऐच्छिक करारो को प्रोत्साहित करना
11. बहुमुखी सेवाओ को संयुक्त रुप से चलाना
12. कानूनो के महत्व पर प्रकाश डालना

जोन्स तथा डीमार्क[13] ने निम्नलिखित ढंगों का उल्लेख किया है.

1. तथ्यो का पता लगाना।
2. आवश्यकताओं का निर्धारण करना।
3. कार्यक्रम को निश्चित करना।
4. शिक्षा देना तथा विवेचन करना।

VII सामुदायिक संगठन की निपुणतायें
(Skills of community organization)

सामुदायिक कार्यकर्ता मे निम्नलिखित निपुणताओं का होना आवश्यक है ·

1. समुदाय से घनिष्ठता स्थापित करने की निपुणता ,
2 समस्याओं को समझने, उनके कारणो की खोज करने, बाधाओ का पता लगाने तथा समस्या की गहनता को जानने की निपुणता,
3 समुदाय के लोगो की भावनाओ के प्रकटन तथा गतिरोध पर विजय प्राप्त करने की निपुणता,
4 व्यक्तिगत समस्याओ को सुलझाने की निपुणता,
5 सामुदायिक समस्याओ के प्रति जागरुकता उत्पन्न करने की निपुणता,
6. जन समुदाय को समस्या सुलझाने के लिए प्रेरित करने की निपुणता,
7 समुदाय के विकासात्मक लक्ष्य निर्धारित करने तथा उन्हे पूरा करने की निपुणता,
8 समुदाय में उपलब्ध सार्वजनिक एव गैर सरकारी ससाधनो, कार्यक्रमो, सुविधाओं का पता लगाना तथा उनका समुदाय के विकास मे उपयोग करने की निपुणता,
9 समुदाय के विचारो मे एकरुपता तथा सामन्यजस्य बनाये रखने की निपुणता,
10 लक्ष्य की ओर प्रयासो को अग्रसित करने की निपुणता।

VIII सामुदायिक संगठन के सिद्धांत
(Principles of community organization)

आर्थर डनहम के मत मे सामुदायिक सगठन के निम्नलिखित सिद्धान्त है

1 समाज कल्याण कार्यक्रमो को आवश्यकताओं पर आधारित तथा समुदाय के प्रति उत्तरदायी होना चाहिये।

2 जहॉं तक सम्भव हो सके कार्यक्रमो द्वारा प्रभावित होने वाले सभी समूह. इसके निर्धारण तथा निर्देशन मे भाग ले।

3 ऐच्छिक सहयोग प्रभावपूर्ण सामुदायिक सगठन की कुजी है।

4 कल्याण कार्यक्रमो को निरोध पर वल देना चाहिए।

एम० जी० रास ने सामुदायिक सगठन के निम्नलिखित सिद्धान्त बताये हैं :

1 समुदाय की वर्तमान परिस्थितियो के प्रति असतोष संगठन के विकास के आरम्भ अथवा सुदृढीकरण का आधार होना चाहिये।

2. असंतोष केन्द्रीभूत तथा विशिष्ट से सम्बन्धित संगठन, नियोजन एवं क्रिया मे प्रवाहित होना चाहिये।

3. सामुदायिक संगठन को जन्म देने अथवा बनाये रखने वाला असंतोष समुदाय मे विस्तृत रुप से व्याप्त होना चाहिये।

4. संगठन के अन्तर्गत समुदाय के बडे उप सभूहो द्वारा स्वीकृत और उनके साथ तादात्म्य की स्थिति मे पाये जाने वाले नेताओ (औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनो) को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

5. संगठन के लक्ष्य तथा कार्यरीतियों के ढंग़ स्वीकृति प्राप्त होने चाहिए।

6. संगठन के कार्यक्रमो मे संवेगात्मक सन्दर्भ वाली कुछ क्रियाओ को सम्मिलित करना चाहिए।

7. संगठन को समुदाय में पायी जाने वाली प्रकट तथा गुप्त सद्भावना के उपयोग का प्रयास करना चाहिए।

8 सगठन के अन्दर तथा सगठन एव समुदाय के मध्य सचार प्रक्रिया तथा प्रभावपूर्ण विदुओ का विकास किया जाना चाहिए।

9 संगठन को उन समूहो को सहायता प्रदान करने एव शक्तिशाली बनाने का प्रयास करना चाहिए जिन्हे यह सहयोगात्मक कार्य प्रयोग में साथ लाता है।

10 संगठन की नियमित रुप से निर्णय लेने की दिनचर्या को बिना विच्छिन्न किये इसकी सगठनात्मक कार्यरीतियों मे लचीलापन होना चाहिए।

11. सगठन को अपनी कार्य की गति का निर्धारण समुदाय की वर्तमान परिस्थितियो के सदर्भ मे करना चाहिए।

12 संगठन को प्रभावपूर्ण नेतृत्व के विकास के लिए प्रयास करना चाहिए।

13. सगठन को समुदाय के अन्तर्गत शक्ति, स्थिरता एव सम्मान का विकास करना चाहिए।

IX *सामुदायिक संगठनकर्ता की भूमिका*
(Role of community organizer)

एम०जी० रॉस ने सामुदायिक संगठनकर्ता की भूमिका चार प्रकार की बतायी हैं :

1. पथ–प्रदर्शक के रूप मे, 2. सहायक के रूप मे, 3. विशेषज्ञ के रूप मे, 4. एक उपचारकर्ता के रूप मे।

1. पथ–प्रदर्शक के रूप में

कर्ता समुदाय को अपने उद्देश्यो और उनकी प्राप्ति के साधनो के निर्धारण मे सहायता प्रदान करता है तथा समुदाय की बुद्धिमतापूर्ण ढग से अपने कार्य की दिशा का चुनाव करने तथा चुनी गयी दिशा मे चलते रहने मे पथ–प्रदर्शन करता है।

1 आवश्यकता की चेतना जागृत करना
2 आवश्यकता की चेतना का प्रसार करना
3 आवश्यकता की चेतना का प्रक्षेपण करना
4 आवश्यकता को शीघ्र पूरा करने लिए सवेगो का उभारना
5 सुझावो का मागना
6 सुझावो मे पाए जाने वाले सघर्ष को सुलझाना
7 अन्वेषण का कार्य करना
8 समस्या पर खुला विचार–विमर्श करना
9 सुझावो का एकीकरण करना
10 प्रयोगात्मक प्रगति के आधार पर सुलह करना

सामुदायिक सगठन प्रक्रिया मे निम्नलिखित कदम उठाये जाते है

(1) समस्या की पहचान करना

1 समस्या की प्रकृति को जानना
2 समस्या की गहनता की खोज करना
3 समस्या के प्रभाव का पता लगाना
4 इस बात का पता लगाना कि समस्या कहाँ मूलरूप से विद्यमान है।
5 समस्या के कारणो को जानना
6 बदलाव लाने की इच्छा का पता लगाना
7 इस बात की जानकारी प्राप्त करना कि समस्या से कौन–कौन लोग प्रभावित हैं
8 समस्या समाधान करने के लिए किये गये प्रयत्नो की जानकारी करना
9 किये गये प्रयत्नो की प्रभावपूर्णता का पता लगाना
10 सफलता या असफलता के कारणो को जानना

(2) समस्या का प्रत्यक्षीकरण करना(तथ्य तथा आँकड़े एकत्र करना)

1 समुदाय की मनोदशा को जानना

2 समस्या के प्रति समुदाय के रुख का पता लगाना

3 महत्वपूर्ण मनोवृत्तियो मे अन्तरो का पता लगाना

(3) संरचनात्मक–कार्यात्मक विश्लेषण करना

1 इस बात का पता लगाना कि समस्या कहाँ से उत्पन्न हो रही है।

2 समुदाय की उन सरचनात्मक विशेषताओ का पता लगाना जिसमे समस्या स्थित है।

3 अनुकूल तथा प्रतिकूल शक्तियो का पता लगाना

4 सामाजिक सरचना के महत्वपूर्ण तत्वो को जानना

(4) लाभार्थी के विषय में सूचना एकत्रित करना

1. यह पता लगाना कि जनसख्या के किन वर्गो को लाभ मिलने चाहिए

2. यह जानना कि समुदाय की भौतिक दशाये क्या हैं

3 व्यवहार निर्धारित करने वाले कारको का पता लगाना

4. सामाजिक सरचना के इस भाग के सम्बन्धो को जानना

5. लाभार्थी द्वारा योजना स्वीकार करने करने का स्तर का पता लगाना

6. योजना स्वीकार किए जाने मे बाधाओं का पता लगाना

7. बाधाओ की गंभीरता को जानना।

(5) कार्य योजना तैयार करना

1. अनेक कार्य योजनाओ पर विचार करना

2 लागत, प्रयास, परिणाम प्रभावपूर्णता स्वीकृति, आदि के सदर्भ मे चलाए जाने वाले कार्यक्रम का विश्लेषण करना

3 सबसे उत्तम कार्यक्रम का चयन करना

4 समस्या समाधान की दृष्टि से सरचना तथा प्रक्रियाओ का विश्लेषण करना।

(6) रणनीति निर्धारण करना

1 सफलता के लिए आवश्यक प्रयासो के स्तर का पता लगाना

2 आवश्यक क्रिया–कलापो की प्रकृति को जानना

3 कम से कम कार्य किये जाने की आवश्यकता का पता लगाना

4 कार्य व्यवस्था–वैयक्तिक चेतना, सामूहिक चेतना, नियोजन तथा सगठन, निपुणताओ का विकास, प्रशासनिक दक्षताओ मे वृद्धि आदि, का निर्धारण करना।

(7) समुदाय को कार्यक्रम से जोडना

(अ) क्षेत्र

1 आवश्यकता विश्लेषण का स्तर ज्ञात करना

2 की जाने वाली क्रियाओ की प्रकृति को जानना

3 रणनीति का निर्धारण करना

4 योजनाए तैयार करना

5 कार्यक्रम का आयोजन तथा प्रबन्धन करना

(ब) उपागम

1 वैयक्तिक उपागम का उपयोग करना

2 व्यापक उपागम का उपयोग करना

3 सामुदायिक शिक्षा देना

4 आवश्यकता के आधार पर समुचित उपागम को अपनाना

5 सामाजिक क्रिया का आवश्यकतानुसार उपयोग करना।

(ख) उठाय जाने वाले आवश्यक कदम

1 समस्या के प्रति जागरुकता उत्पन्न करना

2 समस्या के विषय मे प्रचार करना

3 समस्या समाधान के लिए सम्प्रेरणा विकसित करना

4 सुझाव आमन्त्रित करना

5 सही ज्ञान प्रदान करना

6 ससाधनो का उपयोग करना

7 निरन्तर सम्पर्क बनाये रखना

8 अनुवर्ती प्रयास (Follow up) करना।

(8) कार्यान्वयन तथा मूल्याकन

1 प्रयासो की प्रभावपूर्णता को ज्ञात करना

2 समस्या समाधान की रणनीति की सफलता को मालूम करना

3 प्रयासो की कमियो का पता लगाना

4. नयी रणनीति तैयार करना।

XI *सामुदायिक परिषद तथा सामुदायिक दानपेटी (Community council and community chest)*

अमरीका के नगरो तथा महानगरो मे सामुदायिक परिषदे तथा सामुदायिक दानपेटिया सामुदायिक सगठन की प्राथमिक एवं प्रमुख इकाइयां मानी जाती है। सामुदासिक कल्याण परिषदे बहुत अच्छा कार्य कर रही हैं। ये तीन प्रकार की हैं 1. परम्परागत सामाजिक संस्थाओ की परिषदे, 2. सामुदायिक कल्याण परिषदे, तथा 3. विशेषीकृत परिषदे। पहली प्रकार की परिषदे समाज कल्याण विभाग

से सम्बन्धित हैं। सामुदायिक कल्याण परिषदे सामान्य तथा समाज कल्याण से सम्बन्धित हैं तथा ये प्राय सामाजिक क्रिया मे लगी रहती है। ये सामाजिक सस्थाओ को समन्वित भी करती है। साथ ही साथ ये परिषदे स्वास्थ्य परिषदे एव कल्याण कायक्रमो मे सुधार भी लाती है। विशेषीकृत कौन्सिले इन दोनो प्रकार की परिषदो के कार्यात्मक पहलू से सबन्धित है। ये प्राय परिवार एव बाल कल्याण शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक सुरक्षा एव स्वास्थ्य पुनर्वासन युवा सेवाओ जैसे सुधारात्मक कार्यक्रमो का आयोजन करती है।

परिषदे ऐच्छिक सस्थाये होती हैं जिनका कार्य तथ्यो का पता लगाना, नियोजन करना वार्तालाप को प्रारम्भ करना तथा बढाना टोली भावना को प्रोत्साहन देना सस्थाओ की कार्यात्मकता को बढाना, जन सम्बन्धो को अधिक उपयोगी बनाना तथा सामाजिक क्रिया को प्रोत्साहन देना होता हैं। सामुदायिक दानपेटिया आज के वित्तीय सगठनो का प्रतिरुप है। इनका महत्वपूर्ण कार्य सस्थाओ को वित्तीय सहायता देने के लिए धनराशि एकत्रित करना है। इसके अतरिक्त ये दानपेटिया जनता से सामाजिक कल्याण की सस्थाओ को सहायता करने की अपील भी करती हैं।

XII *सामुदायिक विकास तथा सामुदायिक सगठन* ***(Community development and community organzation)***

सामुदायिक विकास एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामान्य रुप से आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति करने का प्रयास किया जाता। समुदाय स्वय इन उपायो को करता है ताकि इसकी आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति मे सुधार हो सके। सामुदायिक विकास मे मानव कल्याण के लिए दो प्रकार की शक्तियो का एकीकरण होना आवश्यक होता है। ये शक्तिया हैं (1) सहयोग आत्म सहायता आत्मसात करन की योग्यता, तथा शक्ति। (2) सामुदायिक तथा आर्थिक क्षेत्र से सम्बन्धित तकनीकी ज्ञान की उपलब्धता।

सामुदायिक विकास एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा जनता के प्रयासों को शासकीय सत्ता के साथ एकीकृत कर समुदाय की सामाजिक आर्थिक एव सास्कृतिक दशाओ मे सुधार लाया जाता है। सामुदायिक विकास के निम्न तत्व उल्लेखनीय हे

1 कार्यकलाप समुदाय की भूल आवश्यकताओ से सम्बन्धित हो। कार्य का सीधा सम्बन्ध लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं से सम्बन्धित हो।
2 बहुउद्देशीय कार्यक्रम अधिक प्रभावी होते हैं।
3 जनसमुदाय की मनोवृत्तियों मे बदलाव लाना आवश्यक होता है।
4 स्थानीय नेतृत्व को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
5 महिलाओ तथा युवको की कार्यक्रम मे सहभागिता सफलता की ओर ले जाता है।
6 स्वैच्छिक सस्थाओ के स्रोतो का अधिक से अधिक उपयोग किया जाना चाहिए।

सामुदायिक विकास तथा सामुदायिक सगठन मे अन्तर है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम सरकार द्वारा आर्थिक विकास के लिए जनता के बीच चलाये जाते हैं। यहॉ पर लोगो की आर्थिक दशा को सुधारने पर अधिक बल दिया जाता है।

इसके लिए सरकार द्वारा दक्ष सेवाये प्रदान की जाती है। सामुदायिक सगठन द्वारा समुदाय का अनुभव की जाने वाली आवश्यकताओ एवं सामुदायिक ससाधनो मे समायोजन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। सामुदायिक एकीकरण तथा परस्पर सहयोग पर अधिक बल दिया जाता है। सामुदायिक संगठन के कार्यक्रम सरकारी तथा स्वैच्छिक दोनो प्रकार के होते हैं जबकि सामुदायिक विकास कार्यक्रम शासकीय होते है। सामुदायिक संगठन के कार्यक्रम जनसामान्य द्वारा सामुदायिक कार्यकर्ता की सहायता से चलाये जाते हैं। सामुदायिक विकास के कार्यक्रम विकसित होने वाले

देशो मे आर्थिक विकास के लिए चलाये जाते हैं। सामुदायिक सगठन के कार्यक्रम सहयोग पूर्ण मनोवृत्तियो एव व्यवहारो को विकसित करने एव जीवन को सामाजिक रुप से सुखमय बनाने के लिए सभी देशो मे चलाये जाते हैं।

सदर्भ

1 Stroup H H *Community Welfare Organization* Harper and Brothers New York 1952 P 42

2 Community organization is that phase of organization which constitutes *a conscious efforts on the part of a community to control its affairs* democratically and to secure the highest services from its specialists organizations agencies and institutions by means of recognized inter relations

Lindeman, Edward C *The Community* Association Press New York *1921 pp 139-173*

3 The term community organization is best defined as assisting a group of people to recognize their common needs and helping them to meet these needs

Pettit, Walter w - quoted by Harper E B and Dunham A (ed) Community Organization in Action Association Press New york,1959 p 55

4 The aim of community organization is to develop relationship between groups and individuals that will enable them to act together in creating and maintaining facilities and agencies through which they may *realize their highest values in the common welfare of all members of the* Community

Sanderson D and Polson R A *Rural Community Organization* John Wiley and Sons New York, 1950 p 74

5 Community organization in its generic sense is deliberately directed effort to assist groups in attaining unity of purpose and action It is practised though often without recognition of its character, wherever the objective is to achieve or maintain a pooling of talents and resources of two or more groups on behalf of either general or specific objectives

McMillan Wayne Community Organisation in Social Work, Social Work Year Book AASW 1947 P 110

6 Community organization for social welfare means the process of bringing about and maintaining adjustment between social welfare resources in a geographical area or a functional field

Dunham A op cit P 58

7 Community organization is a process by which a community identifies its needs or objectives, orders (or ranks) these needs or objectives develops the confidence and will to work at those needs and objectives finds the resources (internal and/or external) to deal with these needs or objectives, takes action in respect of them, and in so doing extends and develops cooperative and collaborative attitudes and practices in the community

Ross, M G , *Community Organization* Theory and Principles, Harper and Brothers, New York, 1955, P 39

8 Friedlander, W.A , Introduction to Social Welfare, Prentice Hall, New York, 1955, P 187

9 Qoted by Harper and Dunham, op cit, P 141

10 Lane, Robert P, *The field of Community Organization*, quoted in Harper and Dunham (ed) op cit., P 56

11 Sanderson, D and Palson, R A., *Rural Community Organization*, John Wiley and Sons, New York, 1947, P 22

12 Mc Millan, Wayne, *Proceedings fo National Conference of Community Organization*, Chicago, 1969

12 Jones, R and Demark, D F , *Community Organization and Agency Responsibility* Association Press, New York, 1951, p 150

समाज कल्याण प्रशासन
(SOCIAL WELFARE ADMINISTRATION)

समाज कार्य मुख्य रूप से सामाजिक सस्थाओ या विभागो या सम्बन्धित सगठनो जैसे चिकित्सालय, न्यायालय, विद्यालय, सुधार करने एव दण्ड देने वाली सस्थाओ मे किया जाता है। अत कार्यकर्ता के लिए समाज कल्याण प्रशासन का ज्ञान होना आवश्यक होता है। समाज कल्याण प्रशासन सरकारी सस्थाओ मे सामाजिक अधिनियमो को कार्यान्वित करता है। इसका तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसके द्वारा समाज कल्याण क्षेत्र की सार्वजनिक तथा निजी सस्थाओ का सगठन एव प्रबन्धन किया जाता है। इसके अन्तर्गत वे सभी क्रियाये आती हैं जो किसी सस्था के कार्यक्रम को व्यावहारिक रूप देने मे सहायता करती हैं। समाज कल्याण का व्यावहारिक रूप सामान्य *प्रशासन के समान है। परन्तु इसमे मानव समस्याओ के समाधान तथा* मानव आवश्यकताओ की सतुष्टि के लिए प्रयत्न किया जाता है। अत प्रशासक के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसके लिये समाज कार्य प्रणालियो, सामाजिक निदान के ढगो, समूह तथा व्यक्ति की आवश्यकताओ तथा उनके सस्था से सम्बन्धो, इत्यादि का ज्ञान आवश्यक होता है।

1 *समाज कल्याण प्रशासन का अर्थ*
(Meaning of social welfare administration)

ऐडमिनिस्ट्रेशन' शब्द लैटिन भाषा के 'ऐडमिनिस्ट्रेट'(Administrate) से लिया गया है जो दो शब्दो से मिलकर बना है 'ऐड' (Ad) तथा

मिनिस्ट्रेट (Ministrate)। यदि दोनो शब्दो को मिलाकर अर्थ देखा जाये तो इसका अर्थ होता हे लोगो द्वारा किए जाने वाले कार्यो के सम्पादन की देखभाल करना। प्रशासन एक सगठन के पूर्व निर्धारित लक्ष्यो एव उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए निर्देश, समन्वय तथा नियत्रण की प्रक्रिया है। मायो के विचार से प्रशासन कार्यो को निश्चित करने तथा स्पष्ट करने, नीतियो तथा कार्य पद्धति को निर्धारित करने, शक्ति का प्रतिनिधित्व करने, चयन, निर्देशन तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था करने, सभी उपलब्ध ससाधनो को सगठित करने तथा उन्हें कार्य मे लगाने की एक प्रक्रिया है ताकि सगठन के लक्ष्यो को प्रभावपूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सके।[1]

II *समाज कल्याण प्रशासन की परिभाषा (Definition)*

यहाँ पर हम कुछ प्रमुख परिभाषाओ का उल्लेख कर रहे हैं–

डनहम (1949)[2]

समाज कल्याण प्रशासन को उन क्रिया कलापो मे सहायता प्रदान करने तथा आगे बढाने मे योगदान देने के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है जो किसी सामाजिक सस्था द्वारा प्रत्यक्ष सेवा करने के लिए अनिवार्य हैं।

जॉन किडनाई (1957)[3]

समाज कल्याण प्रशासन सामाजिक नीति को समाज सेवाओ मे बदलने की एक प्रक्रिया है।

राजाराम शास्त्री (1970)[4]

सामाजिक अभिकरण तथा सरकारी कल्याण कार्यक्रमो से सम्बंधित प्रशासन को समाज कल्याण प्रशासन कहते हे। यद्यपि इसकी विधियॉ, प्रविधियॉ, तौर–तरीके, इत्यादि भी लोक प्रशासन या व्यापार प्रशासन की ही भॉति होते हें किन्तु इसमे एक बुनियादी भेद

यह होता है कि इसमे सभी स्तरो पर मान्यताओ ओर जनतत्र का अधिक से अधिक ध्यान रखते हुए ऐसे व्यक्तियो या वर्ग से सम्बन्धित प्रशासन किया जाता है जो बाधित होते हैं।

राज्य द्वारा नियत्रित तथा सचालित सेवाओं के प्रशासन को जन प्रशासन (Public Administration) समझा जाता है। लेकिन समाज सेवाओ से सम्बधित प्रशासन को सामाजिक प्रशासन कहते हे। ये समाज सेवाये सरकार द्वारा अथवा स्वैच्छिक सस्थाओ द्वारा सचालित की जा सकती है। समाज कल्याण प्रशासन सामाजिक प्रशासन का अग है। सामाजिक प्रशासन के अन्तर्गत सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाओ जैसे स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, मनोरजन, इत्यादि का सचालन ओर नियत्रण आता हे जो कोई भेदभाव किए बिना सामान्य जनता को प्रदान की जाती है। समाज कल्याण या जन कल्याण प्रशासन का अभिप्राय उन सेवाओ के नियत्रण से है जो दुखियो, गरीबो, आश्रितो, पिछडे वर्गो, अनुसूचित जातियो, जनजातियो, रोगियो, इत्यादि का प्रदान की जाती हे।

III *समाज कल्याण प्रशासन की प्रकृति तथा विशेषताये (Nature and characteristics of social welfare administration)*

समाज कल्याण प्रशासन विज्ञान तथा कला दोनो है। एक विज्ञान के रुप मे इसमे क्रमबद्ध ज्ञान (Systematic Knowledge) होता है जिसका उपयोग सेवाओ को अधिक प्रभावी बना देता है। विज्ञान के रुप मे इसके निम्न तत्व प्रमुख है नियोजन, सगठन कार्मिको की भर्ती निर्देशन समन्वय, प्रतिवेदन बजट तथा मूल्याकन (POSDCORB)। कला के रुप मे समाज कल्याण प्रशासन मे अनेक निपुणताओ तथा प्रविधियो का उपयोग होता है जिसके परिणाम स्वरूप उपयुक्त सेवाओ को प्रदान करना सम्भव होता हे।

समाज कल्याण प्रशासन की निम्न प्रमुख विशेषताए है

1 प्रशासन कार्यों को पूरा करन के लिए की जाने वाली एक प्रक्रिया है। समाज कल्याण प्रशासन मे स्वास्थ्य, शिक्षा, आवागमन, आवास, स्वच्छता, चिकित्सा, आदि सेवाओ को प्रभावकारी बनाया जाता है।

2 समाज कल्याण प्रशासन की सरचना मे एक उच्च–निम्न की सस्तरणात्मक(Hirarchy) व्यवस्था होती है। कर्मचारियों की स्थिति के अनुसार उनके कार्य तथा शक्तियाँ निर्धारित होती हैं।

3 नेतृत्व, निर्णय लेने की क्षमता, शक्ति, सचार आदि प्रशासकीय प्रक्रिया के प्रमुख अंग हैं।

समाज कल्याण प्रशासन मूलरूप से निम्न क्रियाओ से सम्बन्धित है -

1. राज्य के सामाजिक लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए ऐसी नीति निर्धारित करना जिससे संगठन में कार्यरत जनशक्ति एकीकृत रुप से कार्य कर सके।
2. सेवाओं के प्रभावपूर्ण प्रावधान के लिए संगठनात्मक संरचना की रूपरेखा तैयार करना।
3. संसाधनों, कर्मचारीगणों तथा आवश्यक प्रविधियों का प्रबन्ध करना।
4. आवश्यक ज्ञान एवं निपुणताओ से युक्त मानव संसाधन का प्रबन्ध करना।
5. उन क्रिया–कलापों को संपादित करवाना जिनसे अधिकतम संतोषजनक ढंग से लक्ष्य की प्राप्ति हो सके।
6. ऐसा वातावरण तैयार करना जहाँ आपसी मेल–मिलाप तथा प्रगाढता बढे एवं कर्मचारी कार्य करने की प्रक्रिया के दौरान मे सुख अनुभव करें।
7. किये जाने वाले कार्यों का निरन्तर मूल्यांकन करना।

IV सामाजिक प्रशासन के उद्देश्य (Objectives)

सामाजिक प्रशासन के प्रमुख निम्न उद्देश्य हैं

1. राष्ट्र की सुरक्षा तथा कानून और व्यवस्था का सरक्षण

आपातकाल की स्थिति मे समाज कल्याण प्रशासन नागरिक सुरक्षा की व्यवस्था करने से सम्बद्ध लोगो की सहायता करता है तथा जनता का उत्साह बढाता है जिससे चिन्ताजनक घटनाओ के घटित होने पर भी मानसिक सतुलन बना रहता है। समाज कल्याण प्रशासन शाति काल मे एकता के लिए कार्य करता है जिससे सामाजिक वैमनस्य तथा सकीर्ण क्षेत्रीय भावना का ह्रास तथा एकता और समन्वय का अधिक से अधिक विकास हो सके। कानून और व्यवस्था की समस्या का दीर्घकालीन हल निकालने मे भी समाज कल्याण प्रशासन संलग्न रहता है जिससे वयस्क, युवा और बाल अपराधो मे कमी होती है तथा इन अपराधियो के लिए मानवतापूर्ण व्यवस्था करते हुये इनका समाज मे पुनर्वास करता है।

2. आर्थिक विकास

एक विकासशील देश मे राज्य का प्रमुख कार्य आर्थिक विकास करना होता है। इससे राजकीय क्षेत्र मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती है तथा निजी क्षेत्र मे व्यवस्था बनी रहती है तथा इसे उचित प्रोत्साहन एव नियत्रण मिलता है। आर्थिक विकास मे समाज कल्याण प्रशासन का सहयोग आवश्यक है। विशेष रुप से समाज कल्याण प्रशासन आर्थिक विकास मे निम्नलिखित रुप से योगदान देता है

1 यह लोगो की आकाक्षा के स्तर के साथ उनकी कार्यक्षमता मे वृद्धि करता है।

2 औद्योगिक उत्पादकता मे वृद्धि करता है। इसके लिए समाज कल्याण प्रशासन उद्योगपतियो और प्रबन्धको तथा श्रमिको को अच्छे पारस्परिक सम्बन्धो की स्थापना के लिए प्रोत्साहित करता

है, शिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण, आवास तथा स्वास्थ्य सेवाओ की व्यवस्था करता है।

3 समाज कल्याण प्रशासन आर्थिक विकास कार्यो को प्रोत्साहित करते हुये उनके रहन–सहन के स्तर मे उत्तरोत्तर वृद्धि को स्थायित्व प्रदान करता है, आय के अपव्यय को रोकता ह और सबके पर्याप्त भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण सेवाओं, आदि की व्यवस्था करता है जिसके परिणामस्वरूप जन साधारण का वास्तविक कल्याण होता है।

3. सामाजिक विकास

समाज कल्याण प्रशासन जनशक्ति के अधिकतम विकास हेतु पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण, रोजगार, इत्यादि की व्यवस्था करता है।

V *समाज कल्याण प्रशासन के प्रमुख क्षेत्र*
(Major fields of social welfare administration)

समाज कल्याण प्रशासन समाज के प्रत्येक समाज कल्याण अभिकरण के सुचारु रूप से कार्य करने से सम्बन्धित है। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक, सास्कृतिक तथा नैतिक विकास के लिए लोकतांत्रिक नियोजन द्वारा कल्याणकारी समाज की स्थापना करना है। समाज कल्याण प्रशासन विकास नीति के प्रतिपादन मे सहायता करता है। इसके साथ ही अनेक प्रमुख समाज कल्याण सेवाओ को समन्वित ढग से नियोजित, व्यवस्थित एवं कार्यान्वित करने मे सहायता करता है। इन सेवाओ मे राजकीय तथा स्वयसेवी अभिकरणो का मिलकर कार्य करना भी शामिल है, यद्यपि विविध समाज कल्याण सेवाओ मे इन दोनो का अनुपात भिन्न–भिन्न हो सकता है। इन सेवाओ को निम्न क्षेत्रो मे विभाजित किया जा सकता है :

1. समाज सेवाये

किसी भी राष्ट्र मे ये सेवाये समान रूप से सभी व्यक्तियों को उपलब्ध करायी जानी चाहिये।

(क) शिक्षा

इसके अन्तर्गत प्राथमिक माध्यमिक विश्वविद्यालय स्तरीय तकनीकी, व्यावसायिक श्रमिक तथा सामाजिक शिक्षा सम्मिलित हैं। शिक्षा का समन्वय जनशक्ति नियोजन द्वारा होना चाहिये। शिक्षा मानव संसाधन के विकास में निवेश मानी जाने लगी है। यह एक प्रशंसनीय प्रगति है, परन्तु शिक्षा में सामाजिक मूल्यों तथा नैतिक विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

(ख) स्वास्थ्य सेवायें एवं परिवार नियोजन

स्वास्थ्य सेवाओं में चिकित्सकीय निरोधात्मक (Preventive) तथा स्वास्थ्यवर्धक सेवायें आती हैं। जन्म दर में वृद्धि में विशेष कमी करने के लिए परिवार नियोजन आवश्यक है। इस कार्य में स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग नितान्त आवश्यक है। कृत्रिम साधनो के प्रयोग के साथ साथ संयम तथा नैतिक जीवन पर भी ध्यान देना चाहिये ताकि यह प्रयास पाश्चात्य देशों का अनुकरण मात्र ही बनकर न रह जावे।

(ग) आवास

निम्न आय वाले वर्ग के लिए ऋणमुक्त अनुदान की व्यवस्था की जाती है क्योंकि साधनो के अभाव के कारण आवास स्थिति में विशेष सुधार की आशा नहीं की जा सकती है। राज्य की ओर से भी कम मूल्य के आवास अधिक बड़ी संख्या में बनाये जा सकते हैं।

2. सामाजिक सुरक्षा

सामाजिक सुरक्षा को सुदृढ बनाने के लिए सामाजिक बीमा का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। इन योजनाओं को एकीकृत करते हुये अधिक व्यापक बनाया जा सकता है। इससे निम्न आय वर्ग से प्राप्त धनराशि से योजना के साधनो में वृद्धि की जा सकती है।

सामाजिक सहायता द्वारा वृद्धो अबलाओं आदि को राज्य की

ओर से आर्थिक सहायता दी जाती है। धन के अभाव के कारण इन सेवाओ को और अधिक व्यापक बनाने मे अभी भी कठिनाई है। स्वयसेवी सस्थाये इस ओर ध्यान दे तो अधिक साधन जुटाये जा सकते हैं।

3. सामुदायिक विकास

सामुदायिक विकास ग्रामीण तथा नगरीय दोनो स्तरो पर होता है। इन दोनो स्तरो को एकीकृत कर एक व्यापक सामुदायिक विकास योजना के चलाये जाने की आवश्यकता है जिससे सतुलित विकास सम्भव हो सके।

4. श्रम सम्बन्ध

श्रमिक सघो की नियोजन की प्रक्रिया मे सहभागिता आवश्यक है। राजकीय तथा निजी क्षेत्रों मे प्रबंधको और श्रमिको के बीच मधुर सम्बन्ध स्थापित करते हुये उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है।

5. समाज कल्याण

अनुसूचित जातियो, जनजातियां तथा पिछडी जातियो की कल्याण योजनाओ का विस्तार किया जाना चाहिये जिससे इस वर्ग मे भी एकीकरण हो सके। शारीरिक रूप से बाधित जैसे अंधे, बधिर, अपाहिज, आदि के लिए कल्याणकारी योजनाओ का निर्माण होना चाहिये। समाज में इनके पुनर्स्थापन को अधिक महत्व दिया जाना चाहिये। मानसिक रोगियों के लिए मानवतावादी समाज की व्यवस्था की जानी चाहिये तथा एक राष्ट्रव्यापी मानव आरोग्य शास्त्र का विधिवत प्रचार किया जाना चाहिये। सामाजिक चेतना के रचनात्मक कार्यों से मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि हो सकती है।

6. सामाजिक रक्षा (Social defence)

वयस्क, युवा तथा बाल अपराधियो के लिए सुधार सम्बन्धी सेवाओं की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसमे बन्दीगृह, प्रोबेशन,

पुनर्वास आदि सेवाये आती हैं। अनैतिक व्यापार से पीडित लडकियो तथा स्त्रियो के लिए नारी निकेतन तथा भिक्षुओ के लिए गृह स्थापित किए जाने चाहिये।

VI *समाज कल्याण प्रशासक के कार्य*
(Functions of social welfare administrator)

समाज कल्याण प्रशासक न केवल सस्था के कार्यो को सम्पादित करता है बल्कि वह सस्थाओ को निरन्तर उन्नति की दिशा मे बढाने का प्रयास भी करता है। वारहम (Warham)[5] के विचार से समाज कल्याण प्रशासक के निम्न कार्य है

1. सस्था के उद्देश्यो को पूरा करना

समाज कल्याण प्रशासक सस्था की नीतियो को कार्यान्वित करता है। नीतियो को केवल प्रशासनिक प्रक्रिया द्वारा ही कार्यरुप प्रदान किया जा सकता है। वह नीतियो के निर्धारण मे भी भाग लेता है जिससे सस्था के उद्देश्यो तथा नीतियो मे एकरुपता बनी रहे।

2. सस्था की औपचारिक सरचना का निर्माण करना

समाज कल्याण प्रशासक का दूसरा कार्य सम्प्रेषण व्यवस्था (Communication system) को अधिक प्रभावी बनाने के लिए औपचारिक सरचना का निर्माण करना होता है, कर्मचारियो के लिए मानदड निर्धारित करना होता है, तथा उन्ही के अनुसार कार्य सम्बन्ध विकसित करना होता हैं।

3. सहयोगात्मक प्रयत्नो को प्रोत्साहन प्रदान करना

प्रशासक का कार्य सस्था मे ऐसा वातावरण तैयार करना होता है जिससे कर्मचारीगण पारस्परिक सहयोग से अपने उत्तरदायित्वो को पूरा कर सके। यदि कहीं भी सघर्ष के बीज पनपने लगे, तो उनको तुरन्त नष्ट कर देना आवश्यक होता है। कर्मचारियो के मनोबल को ऊँचा बनाये रखने के हर सम्भव प्रयत्न किये जाने आवश्यक होते हैं।

4. संसाधनों की खोज तथा उपयोग करना

किसी भी संस्था के लिए अर्थ शक्ति तथा मानव शक्ति दोनो आवश्यक होती है। संस्था तभी अपने उत्तरदायित्वों को पूरा कर सकती है जब उसके पास पर्याप्त धन हो तथा दक्ष कर्मचारी हो। आर्थिक स्रोतो का पता लगाकर उनके समुचित उपयोग करने की व्यवस्था का कार्य प्रशासक का होता है। वित्त पर नियत्रण रखने का कार्य भी उसी का होता है। वह अपनी शक्तियो को हस्तातरित भी करता है जिससे दूसरे अधिकारी इस शक्ति का उपयोग कर सकते हैं।

5. अधीक्षण तथा मूल्यांकन

प्रशासक संस्था के कार्यो के लिए उत्तरदायी होता है। अत वह इसकी सभी गतिविधियो पर दृष्टि रखता है। वह संस्था के कर्मचारियो की आवश्कतानुसार सहायता करता है तथा दिशा निर्देश देता है। वह सदैव कार्य प्रगति का लेखा–जोखा रखता है। वह कार्यो का मूल्याकन भी निरन्तर करता रहता है।

लूथर गलिक[6] ने समाज कल्याण प्रशासन के कार्यो का वर्णन करने के लिए एक जादुई सूत्र 'पोस्डकार्ब' (POSDCORB) प्रस्तुत किया है जिसका तात्पर्य है. नियोजन करना (Planning), संगठन करना (Organizing), कर्मचारी नियुक्ति (Staffing), निर्देशित करना (Directing), समन्वय करना (Coordinating), प्रतिवेदन प्रस्तुत करना (Reporting), तथा बजट तैयार करना (Budgeting)।

(1) नियोजन (Planning) : नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य कार्यो को व्यवस्थित ढग से सम्पादित करने की रूपरेखा तैयार करना होता है। यह रुपरेखा पूर्व उपलब्ध तथ्यो के आधार पर भविष्य के उद्देश्यो को ध्यान मे रखकर तैयार की जाती है। बिना विस्तृत नियोजन के कार्यो को ठीक प्रकार पूरा करने मे कठिनाई आती है। नियोजन का प्रमुख कार्य उद्देश्यो को स्पष्ट रूप से पारिभाषित करना होता है। इसके पश्चात इन लक्ष्यों एव उद्देश्यो

की प्राप्ति लिए नीति निर्धारित करनी होती है। तीसरा कदम इन तरीको तथा साधनो की व्यवस्था करनी होती है। तदुपरान्त उन ढगो तथा साधनो की व्यवस्था करनी होती है जिनके द्वारा नीतियो को कार्यान्वित कर लक्ष्यो को प्राप्त किया जा सके। कार्य का निरन्तर मूल्याकन भी करना होता है।

(2) संगठन (Organizing) : सगठन का कार्य बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योकि सस्था के कार्यो का सम्पादन सगठन पर ही निर्भर होता है। भूमिकाओ तथा परिस्थितियो का निर्धारण किया जाता है। घटको के बीच सम्बन्धो को परिभाषित किया जाता है तथा इसी के साथ उत्तरदायित्वो को भी स्पष्ट किया जाता है। सस्था के लक्ष्यो को ध्यान मे रखकर सगठन की रूपरेखा तैयार की जाती है।

(3) कर्मचारियों का चयन (Staffing) : सस्था के कर्मचारियो का चयन प्रशासक का एक आवश्यक कार्य होता है क्योंकि इसी विशेषता पर सस्था के कार्यो का सम्पादन निर्भर होता है। जिस प्रकार के कर्मचारी होते हैं उसी के अनुसार सस्था सेवाये प्रदान करती है। इस कार्य मे निम्नलिखित बिन्दु महत्वपूर्ण होते हैं

1 कर्मचारी चयन, पदोन्नति, आदि से सम्बन्धित नीति स्पष्ट होनी चाहिए।
2 कर्मचारियो की शिकायतो का निपटारा शीघ्र किया जाना चाहिए।
3 निर्णय पर बल दिया जाना चाहिए तथा दबाव के प्रभाव से उसे बदला नहीं जाना चाहिए।
4 सभी कर्मचारियो के स्पष्ट कार्य होने चाहिए तथा उनका उत्तरदायित्व निश्चित होना चाहिए।
5 कर्मचारियो मे सहयोग की भावना विकसित करने के निरन्तर प्रयत्न किये जाने चाहिए।
6 सम्प्रेषण द्विमुखी (bilateral) होना चाहिए अर्थात प्रशासन तथा

कर्मचारियो दोनो की ओर से विचारो का परस्पर आदान–प्रदान होना चाहिए।

4. निर्देशन (Directing) : संस्था के उद्देश्यो की पूर्ति के लिए कर्मचारियो को दिशा निर्देश देना आवश्यक होता है। निर्देशन के निम्नलिखित उद्देश्य है .

1. यह देखना कि कार्य नियमो तथा निर्देशो के अनुरूप हो रहा हे।
2. कर्मचारियो की कार्य सम्पादन मे सहायता करना।
3. कर्मचारियों मे टीम भावना एव सहयोग की भावना बनाये रखना।
4. कार्य का स्तर बनाये रखना।
5. कार्यक्रम की कमियो से परिचित होना तथा उनको दूर करने का प्रयास करना।

5. समन्वय (Coordinating) समन्वय का तात्पर्य एक सामान्य क्रिया, आन्दोलन, या दशा को प्राप्त करने के लिए भिन्न–भिन्न अंगो मे परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना होता है। संस्था मे समन्वय के दो महत्वपूर्ण कार्य हैं : उद्देश्यो तथा क्रियाओ में एकरूपता स्थापित करना तथा किए जाने वाले कार्यो मे एकता लाना। लेकिन यह तभी संभव है जब संस्था का प्रत्येक सदस्य समान दृष्टिकोण रखता हो।

6. प्रतिवेदन (Reporting) : प्रतिवेदन के माध्यम से तथ्यो को प्रस्तुत किया जाता है। इसमे एक निश्चित अवधि मे किये गये कार्यो का सारांश लिखा जाता हे। एक निश्चित अवधि के आधार पर प्रतिवेदन तैयार किया जाता है। संस्था के कार्यो की प्रगति का मूल्यांकन करने की दृष्टि से प्रतिवेदन का विशेष महत्व है। संस्था मे उपलब्ध आलेखो के आधार पर प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

7. बजट (Budgeting) : प्रशासक का कार्य प्रतिवर्ष वार्षिक बजट तैयार करना तथा उसे अनुमोदित कराना होता है। संस्था के

लक्ष्यो के अनुरूप ही बजट तैयार किया जाता है। यह संस्था की आय तथा व्यय का कथन (statement) होता है।

VII समाज कल्याण प्रशासक के लिए मौलिक ज्ञान *(Basic knowledge for social welfare administrator)*

प्रशासक के लिए निम्न मौलिक ज्ञान आवश्यक है

1 वह सदैव जागरूक रहे कि वह एक प्रशासक है, कार्यपालक है, और उसके निश्चित उत्तरदायित्व तथा अधिकार हैं।

2 संस्था के समुदाय में स्थान तथा संस्था के लक्ष्यो को सदैव ध्यान मे रखे।

3 संस्था के कर्मचारियो के विषय मे पूर्ण जानकारी रखे तथा उनकी समस्याओ के प्रति विशेष रूप से जागरूक रहे।

4 यथासमय कर्मचारियो की प्रोन्नति करे।

5 संस्था से सम्बन्धित सभी समूहो के कार्यो, उत्तरदायित्वो, आदि का पूरा ज्ञान हो।

6 संस्था की कार्य प्रणाली तथा क्रियाविधि का विधिवत ज्ञान हो।

7 संस्था को कब किस प्रकार की आवश्यकता है सदैव ध्यान मे रखे।

8 उसे कार्य की प्रगति के मूल्याकन की कला आती हो।

9 उसे इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि सेवार्थी संस्था से किस प्रकार अधिकतम सतोष प्राप्त करते हैं।

10 उसे इस बात की जानकारी हो कि समुदाय की अन्य संस्थाओ से किस प्रकार सहयोग प्राप्त करना सभव है।

VIII समाज कल्याण प्रशासन की निपुणताये

प्रशासक के लिए निम्न निपुणताये आवश्यक हैं

1 कर्मचारियो तथा नीति निर्धारको से उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध बनाने तथा उन्हे स्थायी बनाए रखने की निपुणता

2. कर्मचारी चयन की निपुणता

3 संस्था के उद्देश्यो तथा लक्ष्यो की परिभाषा करने तथा कर्मचारियो मे इन उद्देश्यो को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा उत्पन्न करने की निपुणता

4. आवश्यकतानुसार कर्मचारियो को समझने तथा उनकी सहायता करने की निपुणता

5. कार्य योजना तैयार करने तथा उसे कार्यान्वित करने की निपुणता

6. कर्मचारियो की व्यक्तिगत सहायता की आवश्यकता को समझने तथा सहायता देने की निपुणता

7. कर्मचारियो के मन के अन्दर की 'समस्याओ को समझने तथा उन्हे सुलझाने की निपुणता।

IX *समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धान्त*
(Principles of social welfare administration)

समाज कल्याण प्रशासन के निम्नलिखित सिद्धान्त महत्वपूर्ण हैं.

(1) सेवारत होने का सिद्धान्त

सिद्धान्त रूप में सभी प्रकार के कार्य जनता के हित के लिए तथा जनता को सर्वोपरि मानकर किये जाते हैं लेकिन व्यावहारिक रूप मे इन सेवाओ की प्रकृति अत्यन्त जटिल है। आज प्रशासक चाहे जिस स्तर का हो वह अधिकारी बन गया है तथा जनता सेवक हो गयी है। इससे समाज कल्याण के मार्ग में अनेकानेक बाधायें उत्पन्न हो गयी हैं। समाज कल्याण के क्षेत्र मे तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि सेवाओ का प्रशासन इस प्रकार से हो कि वे सीधे सेवार्थी को उपलब्ध हो सके और बिचोलियो की आवश्यकता न पडे।

(2) समन्वय का सिद्धान्त

आज विशेषीकरण के कारण कल्याण के क्षेत्र की भिन्न–भिन्न

सेवाये भिन्न–भिन्न सस्थाओ के माध्यम से प्रदान की जाती हैं। उनमे आपस मे मेल न होने से पर्याप्त लाभ नहीं पहुँच पाता है। अत यह आवश्यक समझा जाने लगा है कि यदि एक ही सस्था के माध्यम से सभी प्रकार की सेवाये उपलब्ध करायी जाये तो प्रशासन का कार्य अधिक प्रभावपूर्ण होगा।

(3) प्रगतिशील सामन्जस्य का सिद्धान्त

सेवाओ को सदैव सेवार्थी की आवश्यकतानुसार परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है। प्रशासक का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह सेवाओ मे निरन्तर नवीनता लाने का प्रयास करता रहे।

(4) सामाजिक नीति को व्यवहार मे लाने का सिद्धान्त

नीति का निर्धारण लक्ष्यो को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता है। उनकी प्राथमिकता निर्धारित की जाती है। व्यवहार मे यह देखा गया है कि सामाजिक नीति के अनुसार कार्यक्रम आयोजित नही किये जाते हैं। इससे वास्तविक लक्ष्य प्राप्त नहीं होते हैं। समाज कल्याण प्रशासक का कार्य है कि वह सामाजिक नीति को शत–प्रतिशत लागू करने का प्रयास करे।

(5) सामाजिक नीति को कल्याण नीति मे परिवर्तित करने का सिद्धान्त

समाज कल्याण प्रशासक का उत्तरदायित्व होता है कि वह निर्बलो, अशक्तो, बच्चो, महिलाओ, पिछडे वर्गो आदि का हित सर्वोपरि समझे।

(6) स्थानीय समस्याओ से अनुकूलन का सिद्धान्त

पूर्व निर्धारित कार्यक्रमो को स्थानीय आवश्यकताओ के अनुसार परिवर्तित करना आवश्यक होता है। प्रशासक पहले समुदाय की आवश्यकताओं एव समस्याओं का अध्ययन करता है, उसके पश्चात कार्यक्रमो को कार्यान्वित करता है।

(7) परस्पर सुदृढ सम्बन्ध का सिद्धान्त

प्रशासन तथा जनता (सेवार्थी) मे एक–दूसरे के प्रति विश्वास, सहयोग, मैत्रीभाव तथा सन्निकटता होना सफल कार्यक्रम के लिए आवश्यक होता है।

(8) लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त

प्रशासक का विश्वास होता है कि जनता का कार्य जनता द्वारा ही होना चाहिए। अत वह आवश्कतानुसार अधिकार एव कर्तव्यो का निर्धारण करता है, समितिया बनाता है तथा पूरी भागीदारी प्राप्त करने का प्रयास करता है।

(9) सम्प्रेषण का सिद्धान्त

प्रशासन अपने वार्तालाप मे उस भाषा तथा शब्दो का प्रयोग करता है जो जनता द्वारा ग्राह्य होते हैं।

(10) संवेदनशीलता का सिद्धान्त

मानव एक सवेदनशील प्राणी है। वह दूसरो के सुख–दुख मे परस्पर भाग लेता है। प्रशासक को भी चाहिए कि यदि कोई घटक दुखी है तो उसके दुख को बांटने का पूरा प्रयास करे तभी उसका पूरा सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

सन्दर्भ

1 Mayo, Leonard, *Administration of Social Agencies*, Social Work Year Book, Russell Sage Foundation, New York, 1945, p 15

2 Social welfare administration may be defined in the sense of supporting or facilitating activities which are necessary and incidental to the giving of direct services by a social agency

Dunham, A, *Administration of Social Agencies* Social Work Year Book, AASW, 1949, p 15

3 Social welfare administration is a process of transforming social policy into social services

Kidneigh John C, Administration of Social Agencies *Social Work Year Book* AASW 1957, p 75

4 Shastri Raja Ram Samaj Karya Hindi Sansthan U P 1970 p 140

5 Warham J *An Introduction to Administration for Social Workers* Routledge and Kegal Paul Ltd, New York, 1967 pp 85 92

6 Gulick Luther and Urwick, L (ed) *Papers on the Science of Administration* Institute of Public Administration New York 1937 p 13

समाज कार्य शोध
(SOCIAL WORK RESEARCH)

समाज कार्य एक ऐसा व्यवसाय है जिसके द्वारा व्यक्ति एव समाज की अधिक से अधिक सहायता तथा विकास एव उन्नति करने का प्रयत्न किया जाता है। समाज के अन्तर्गत वढती हुई जटिलता, प्राथमिक सम्वन्धो का धीरे–धीरे द्वितीयक सम्वन्धो, द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना, पहले से पाई जाने वाली अनेक समस्याओ का अधिक विकराल रुप मे उपस्थित होना तथा नयी समस्याओ की उत्पत्ति, समाज कार्य की अमरीकी पृष्ठभूमि तथा भारतीय सामाजिक परिस्थितियो के अनुकूल वनाने के लिए विशेष प्रयासो की आवश्यकता, समाज कार्य की एक व्यवसाय के रुप मे मान्यता की अल्पअवधि तथा इस रूप मे मान्यता का अव भी अपूर्ण होना, समाज कार्य व्यवसाय के प्रामाणिक ज्ञान सम्वन्धी आधार का अर्प्याप्त एवं निर्वल होना, इत्यादि अनेक ऐसे कारक हैं जो समाज कार्य व्यवसाय की प्रभावपूर्णता को सुदृढ वनाने के लिए अधिक से अधिक समाज कार्य शोध की आवश्यकता पर वल देते हैं।

I *समाज कार्य शोध तथा सामाजिक शोध में अन्तर*
(Difference between social work research and social research)

समाज कार्य शोध के अर्थ को स्पष्ट करने से पूर्व सामाजिक शोध तथा समाज कार्य शोध मे अन्तर स्पष्ट करना उचित प्रतीत होता है। ईवान क्लेग[1] ने यह लिखा है कि समाज कार्य शोध तथा

सामाजिक शोध का प्राय एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग इतनी ढिलाई के साथ किया जाता है कि इनकी विषय वस्तु अनिश्चित है। फ्रैन्च[2] के मत मे समाज कार्य के अन्तर्गत शोध का एक उपयोगितावादी आधार होता है। इसका एक विशिष्ट लक्ष्य अभिमुखीकरण (Goal Onentation) होता है।

क्लीन[3] ने तीन आधारभूत मान्यताओ को ध्यान मे रखते हुये समाज कार्य शोध तथा समाज विज्ञानो के अन्तर्गत किये गये शोध मे अन्तर स्पष्ट किया है।

1 समाज कार्य शोध अन्य क्रियाओ को सम्पादित करने के अतिरिक्त निरोधात्मक एव सुधारात्मक कार्यों को करने के लिए स्थापित किए गये सगठनो द्वारा अपनी क्रिया के दौरान आवश्यक सिद्धान्तो के अपनाये जाने से सम्बन्धित है।

2 सेवाओ को प्रदान करने की आवश्यकता का मूल्याकन करने अथवा इन आवश्यकताओ एव सेवाओ को जन्म देने वाली परिस्थितियो एव समस्याओ का अध्ययन करने की आवश्यकता का अनुभव होने पर समाज कार्य शोध एव सामाजिक शोध दोनो की सामान्य अभिरुचि उत्पन्न होती है।

3 सामाजिक सेवाओ का प्रदान किया जाना उन प्रायोजक सस्थाओ (Sponsonng destnbutions) के मूल्यो पर आधारित निर्णयो पर निर्भर करता है जो इन सेवाओ को आयोजित करती हैं।

सन् 1947 मे वेस्टर्न रिजर्व युनिवर्सिटी अमरीका के स्कूल ऑफ साइन्सेज द्वारा आयोजित वर्कशाप ऑन रिर्सच इन सोशल वर्क के प्रतिवेदन मे समाज कार्य शोध एव सामाजिक शोध मे इस पकार भेद स्थापित किया गया है

सामाजिक शोध मौलिक समाज विज्ञानो मे से किसी की प्रगति की ओर निर्देशित होता है जबकि सामाज कार्य के अन्तर्गत

शोध व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओ द्वारा समाज कार्य (Social Work Functions) कार्यो से समुदाय द्वारा अपने सम्बन्ध मे अनुभव की गयी समस्याओं से सम्बन्धित है। समाज कार्य शोध के अन्तर्गत सदैव अन्वेषित की जाने वाली समस्या का समाज कार्य करने अथवा इसे करने की योजना वनाने के दौरान पता लगाया जाता है। समाज विज्ञान के ढगो एवं सिद्धान्तो दोनो का प्रयोग किया जा सकता हे किन्तु वे समाज कार्यकर्ताओ को इसीलिए लाभकारी हैं क्योकि वे समाज कार्य के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुये प्रश्नो का उत्तर देने मे सहायता पहुचाते हैं।

इस प्रकार जवकि सामाजिक शोध अपने अभिगम मे सामान्य है तथा प्रमुख रुप से मानव मात्र मे अभिरुचि रखता है, समाजकार्य शोध अधिक समस्योन्मुख (Problem Oriented) एव अपने अभिगम (Approach) मे विशिष्ट (Specific) है तथा यह अपना ध्यान मनुष्य एवं उसकी समीपवर्ती समस्याओ पर केन्द्रित करता है। इसके अतरिक्त, जबकि सामाजिक शोध के परिणाम सिद्धान्तो एवं नियमो के विकास की ओर योगदान देने की प्रवृत्ति रखते हैं, समाज कार्य शोध के परिणामों का उद्देश्य ऐसे सामान्यीकरणों (Generalisations) की स्थापना करना होता है जिनका उपयोग व्यक्तियो, समूहो एवं समुदायों को समाज सेवा प्रदान करने मे व्यावसायिक समाज कार्यकर्ताओं के मार्गदर्शन के लिए किया जाता है।

II *समाज कार्य शोध की परिभाषा*
(Definition of social work research)

समाज कार्य शोध एक ऐसी खोज है जिसके अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करते हुए ऐसे उपायो की खोज की जाती है जिससे सेवार्थी व्यक्ति, समूह, तथा समुदाय को अधिक अच्छे ढंग से सेवाएं प्रदान की जा सके तथा समस्याओ का समाधान अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से किया जा सके।

फ्रीडलैण्डर[6] (1957)

समाजकार्य शोध समाज कार्य ज्ञान निपुणता अवधारणाओं एव सिद्धान्तों की जाँच, सामान्यीकरण एव विस्तार करने के लिए समाज कार्य संगठन, कार्य एव ढगो की प्रमाणिकता की आलोचनात्मक पूँछताछ एव वैज्ञानिक परीक्षण है।

नेशनल असोशियेशन ऑफ सोशल वर्कर्स[7] (1957)

समाज कार्य शोध के अन्तर्गत वे प्रश्न सम्मिलित होन हैं जो समाज कार्य प्रयोग के दौरान अथवा प्रशासन के दौरान अथवा उन समाज कार्य सेवाओ के नियोजन अथवा प्रशासन के दौरान उठते है जो शोध के माध्यम से सुलझाई जाने योग्य होती हैं जो समाजकार्य तत्वाधानो (Auspices) के अन्तर्गत अन्वेषण के लिए उपयुक्त होती है।

रिपल[8] (1980)

समाजकार्य शोध व्यावहारिक समस्याओ से प्रारम्भ होती ह जिसका उद्देश्य उस ज्ञान का विकास करना है जिमे सामाजिक कार्यक्रमो के नियोजन तथा कार्यान्वयन में प्रयोग मे लाया जा सके।

इन उपरिलिखित परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि समाज कार्य शोध समाजकार्य व्यवसाय द्वारा अपनी क्रिया के दौरान अपनाये गये सहायक ढगो में से एक ऐसा ढग है जो अन्य सभी प्राथमिक एव सहायक ढगो की प्रभावपूर्णता को बढाने के लिए मान्यताओ से सम्बन्धित ज्ञान (Assumptive Knowledge) को परिकल्पनात्मक (Hypothetical Knowledge) ज्ञान में और तत्पश्चात इसे प्रमाणिक (Validated) ज्ञान के रूप में निरन्तर परिवर्तित करने का प्रयास करता है।

सारांश मे, समाजकार्य शोध की निम्न विशेषतायें हैं

1. समाज कार्य शोध के द्वारा सेवार्थी की अप्रत्यक्ष रुप से सहायता की जाती है।

2 यह अपने कार्यक्रम के अन्तर्गत वैज्ञानिक ढगो को उपयोग मे लाता है।

इसमे निम्नलिखित चरण होते हैं

(क) समस्या के क्षेत्र के विषय का चुनाव
(ख) समस्या का परिसीमन
(ग) उपलब्ध सामग्री का अध्ययन
(घ) उपकल्पना का निर्माण
(ङ) उपकरणो का निर्माण
(च) तथ्यो का सकलन
(छ) तथ्यो का सपादन
(ज) तथ्यो का वर्गीकरण एव सारणीकरण
(झ) तथ्यो का विश्लेषण एव विवेचन
(ञ) प्रतिवेदन

3 सेवार्थी को अधिक वैज्ञानिक ढग से सेवा प्रदान करने के लिए नये ढंगो की खोज की जाती है।

4 समाज कार्यकर्ता को नवीन ज्ञान, प्रविधि, निपुणता तथा कौशल प्राप्त होता है।

5 नये ज्ञान की खोज की जाती है तथा उपलब्ध ज्ञान को प्रमाणित किया जाता है।

6. सामाजिक घटनाओ के कारणो की खोज की जाती है।

7. सामाजिक समस्याओ के कारणों का पता लगाते हुए उनके समाधान के उपाय सुझाए जाते हैं।

III *समाज कार्य शोध के प्रकार*
(Types of social work research)

समाज कार्य शोधकर्ता का मुख्य कार्य विभिन्न सेवाओ की

आवश्यकता को निश्चित करना है। उसका कार्य वर्तमान सेवाओ की उपयुक्तता तथा उपयोगिता और उनके प्रभाव के मूल्याँकन से भी सम्बद्ध है। उसकी अभिरुचि केवल उन सेवाओ से प्राप्त परिणामों मे नहीं होती है बल्कि सेवाएँ प्रदान करने के दौरान प्रयोग में लाए गए ढगों एव अपनायी गई प्रक्रिया की प्रभावपूर्णता का मूल्याकन करने में भी होती है। व्यावसायिक समाज कार्य की नीव को सुदृढ बनाने के लिए वह समाजकार्य के दर्शन एव मूल्यों म रुचि रखता है। इन शोध आवश्यकताओं को निम्न रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है

1. अन्वेषणात्मक शोध (Exploratory research)

इसका उद्देश्य किसी ऐसे नये क्षेत्र म अन्वेषण करना होता है जिसके बारे मे पहले से प्रमाणिक जानकारी नहीं होती है। इस प्रकार का शोध सामाजिक वास्तविकता के नये क्षेत्रों पर प्रकाश डालना होता है। इस प्रकार के शोध मे शोधकर्ता शोध क्षेत्र से सम्बन्धित पूर्ण ज्ञान की अनुपस्थिति मे अपनी निजी समझ सूझ–बूझ तथा अन्तर्दृष्टि के आधार पर अपना शोध करता है।

2. विवरणात्मक अथवा निदानात्मक शोध (Investigative or descriptive research)

इन अध्ययनो का उद्देश्य किसी प्रक्रिया का गत्यात्मक चित्रण करना अथवा अर्न्तक्रिया के प्रतिमानो अथवा किसी वृत्तात का वस्तुगत अथवा सही विवरण प्रस्तुत करना है। इस प्रकार के शोध का महत्व नीति निर्धारण, नियोजन तथा कार्यक्रम कार्यान्वियन के लिए होता है। इस प्रकार के अध्ययन के दौरान एकत्रित किए गए तथ्य अध्ययन क्षेत्र का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हैं तथा इनका विश्लेषण इस क्षेत्र मे पायी जाने वाली प्रमुख समस्याओ के कारणो तथा इनके समाधान के लिए उपलब्ध ससाधनो की जानकारी कराता है। इस प्रकार के अध्ययन परिकल्पनाओ के चक्रों के बीच सहसम्बन्धो की जाँच करने में भी सहायक होते हैं।

3. प्रयोगात्मक शोध (Experimental research)

इसका उपयोग कार्यकारी परिकल्पना, (Working Hypothesis) परीक्षण, मूलभूत सैद्धान्तिक ज्ञानवर्धन, किसी विशिष्ट पद्धति की प्रभावपूर्णता के अध्ययन के लिए किया जाता है। इसमे दो प्रकार के चरो (Vanables) स्वतत्र (Independent), एव निर्भर (Dependent) के बीच कार्य–कारण सम्बन्ध का अध्ययन किया जाता है। प्रयोग मे सम्बन्धित तकनीक का वास्तविक (Real) अथवा साकेतिक (Notional) उपयोग किया जाता है। क्योकि समाजकार्य शोधकर्ता अपने प्रयोगो को पूर्णरूपेण नियंत्रित परिस्थितियो मे करने मे असमर्थ होता है, अत वह अपने प्रयोगो को करने के लिए या तो एक ही समूह मे स्वतत्र चर के घटित होने के पश्चात आश्रित चर पर इसके प्रभाव का अध्ययन करता है अथवा एक से अधिक समूह बनाकर उनकी कुछ विशिष्ट चरो के संदर्भ मे मिलान करने के पश्चात स्वतत्र चर से प्रभावित करने के बाद इसके आश्रित चर पर पडने वाले प्रभाव का परिमापन किया जाता है।

4. क्रियात्मक शोध (Action reseach)

इस प्रकार के शोध में नियोजित रूप से कार्यक्रम चलाकर उसके समस्या विशेष के समाधान में प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार के शोध के माध्यम से किसी अंगीकृत किये गये क्षेत्र मे विभिन्न समस्याओ का समाधान करना अथवा किसी भी उपकल्पना का परीक्षण करने का प्रयास किया जाता है। जिस प्रकार प्रयोगशाला मे किये गये प्रयोग द्वारा क्षेत्रीय परिस्थितियो मे बडे पैमाने पर कार्य करने की रूपरेखा अपेक्षित संशोधन करने के लिए बनायी जाती है उसी प्रकार इन अध्ययनो से किसी समस्या के समाधान हेतु बनाये गये कार्यक्रमो की प्रभावपूर्णता की जाँच की जाती है। उदाहरणार्थ, समाज विज्ञान विद्यालय निर्मला निकेतन, बम्बई द्वारा अमरीका के स्वास्थ्य, शिक्षा एव कल्याण विभाग के तत्वावधान में इस प्रकार का शोध कार्य भारतवर्ष मे किया गया है। इसका उद्देश्य सामुदायिक कार्यकर्ताओ

द्वारा किये गये कार्य के परिणामस्वरूप समुदाय मे होने वाले सामाजिक परिवर्तनों का मूल्यांकन करना था। साथ ही यह भी स्पष्ट करना था किस प्रकार के सामुदायिक कार्य एव समुदाय विशेष ने स्थानीय सेवाय विकासित करने मे सहायता प्रदान करते है।

IV *शोध के चरण (Steps in research)*

सम्पूर्ण शोध के कार्यक्रम को 12 प्रमुख चरणो में बॉटा जा सकता हैं। दूसरे शब्दो मे, शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया मे क्षेत्र के चुनाव से लेकर अन्तिम प्रतिवेदन तैयार करने तक किसी भी शोधकर्ता को क्रमश निम्न प्रमुख 12 चरणो से गुजरना पडता है

1 क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित समस्या/विषय का चुनाव
2 समस्या और क्षेत्र का परिशीलन
3 चयन किये गये विषय पर उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन
4 उपकल्पना का निर्माण
5 अध्ययन की योजना का निर्माण
6 सूचना के स्रोतो का निर्धारण
7 उत्तरदाताओं का चयन
8 प्रामाणिक एव प्रासगिक शोध उपकरणों का निर्माण
9 तथ्यों/आकडों का सकलन
10 सग्रहीत वर्गीकरण एव सारिणीकरण
11 संकेतीकरण (Coding)
12. तथ्यों का विश्लेषण एव उनका निर्वचन
13 प्रतिवेदन
14 भावी शोध हेतु समस्याओं एव परिकल्पनाओं का सुझाव

1. समस्या/विषय का चयन (Selection of problem/subject)

शोधकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह अपने शोध की समस्या का चयन करे। समाज कार्य के शोध की समस्या कोई भी ऐसी समस्या हो सकती है जो व्यक्ति या समाज के मनो-सामाजिक संगठन से सबंधित हो। व्यक्ति और समाज के सगठन से सबंधित समस्या का क्षेत्र और स्वरूप बहुत विशाल हो सकता है। समाज का निर्माण करने वाली तथा उसकी सरचना पर प्रभाव डालने वाली कोई भी कारक अथवा शक्ति इसमें आ सकती है। वे अनेक परिस्थितियां भी समस्या के रूप में चयनित की जा सकती है जो व्यक्ति पर किसी न किसी रुप में प्रभाव डालती हों। समाज का निर्माण करने वाली या उसकी सरचना पर प्रभाव डालने वाली कोई भी शक्ति इसमें सम्मिलित की जा सकती हैं। वे परिस्थितियाँ भी इसका क्षेत्र हो सकती हैं जो व्यक्ति पर किन्हीं रुपों में प्रभाव डालती हैं। समाज कार्य के शोध की समस्या का क्षेत्र व्यक्तिगत के अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, इत्यादि पहलुओं से सम्बन्धित हो सकता है।

शोधकर्ता को शुरू में केवल यही नहीं तय करना पडता है कि जीवन के विविध पहलुओं में से किस पक्ष का अध्ययन करेगा। यदि शोध की समस्या सामाजिक समस्या है तो उसे प्रारम्भ से ही तय कर लेना होता है कि वह इसमे अस्पृश्यता, नशाबंदी, भ्रष्टाचार अथवा पारिवारिक विघटन की समस्याओं में से किस सामाजिक समस्या विशेष का अध्ययन करेगा। इसी प्रकार आर्थिक समस्याओं को निश्चित करने में उसे प्रारम्भ में ही माँग-पूर्ति की समस्या, महँगायी-भत्ते की समस्या, मजदूरी की समस्या, कार्य करने की दशाओं की समस्या, आदि में से किसी एक का चयन कर लेना चाहिए। इसी प्रकार धार्मिक, सांस्कृतिक या राजनीतिक समस्याओं से सम्बन्धित अध्ययनो में शोधकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह उनकी किसी एक विशेष समस्या का चयन कर ले। हर शोधकर्ता की रुचि अनुभव, शिक्षण,

प्रशिक्षण साधन आदि भिन्न भिन्न हुआ करते हैं। यहाँ शोधकर्ता का तात्पर्य किसी व्यक्ति मात्र से ही न होकर उन दोनो प्रकार के राजकीय और गैर–राजकीय सगठनो से है जो शोध करते या करवाते हैं। शोधकर्ता को अपनी रुचि के अनुसार शोध की समस्या का चयन और निर्धारण करना चाहिए। ऐसा करने से शोध के अच्छे परिणाम सामने आते हैं।

2. समस्या और क्षेत्र का परिसीमन
(Scope of problem and area)

शोध का दूसरा चरण चुनी गयी समस्या उसके विषय और क्षेत्र को परिसीमित करना होता है। व्यक्तिगत अथवा सामाजिक पहलुओ से सम्बन्धित कोई समस्या हो प्राय उस पर शोध की आवश्यकता इसलिए महसूस होती है क्योकि समस्या व्यापक होती है। यद्यपि व्यापकता रखने वाली समस्याओ का ही चयन करने पर शोध की उपादेयता भी व्यापक होती है फिर भी समस्या जितनी अधिक सुपरिभाषित (Well defined) तथा सीमित एव विशिष्ट होती है, शोध के उतना ही प्रभावपूर्ण होने की सभावना बढ जाती है। समाजकार्य के अध्ययन मे क्षेत्र का तात्पर्य यह है कि शोधकर्ता यह निश्चित करता है कि वह किस भौगोलिक दायरे मे समस्या का अध्ययन करेगा। यद्यपि मानवीय समस्याओ की प्रकृति सार्वभौमिक हो सकती है परन्तु भौगोलिक भिन्नता से समस्याओ की प्रकृति का वाह्य स्वरूप बदल जाता है। इसलिए शोध को अधिक उपयोगी एव सही बनाने के लिए आवश्यक हो जाता है कि भौगोलिक क्षेत्र निश्चित कर लिया जाय। हर समाज की अपनी एक भौगोलिक विशेषता होती है और उसके आधार पर अनेक प्रकार की भिन्नताये उत्पन्न होती हैं। अत शोधकर्ता को अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए समस्या के चुनाव के साथ साथ यह भी निश्चित कर लेना पडता है कि वह समस्या का किस क्षेत्र मे अध्ययन करेगा। यदि विस्तृत क्षेत्र को शोध का क्षेत्र बनाकर शोध किया जाता है तो अधिक खर्च, मानव प्रयास तथा समय लगने की

सम्भावना होती है तथा साथ ही परिवर्तन की आवश्यकता को नियंत्रित और एकरूपता की दशा में बनाये रखना असंभव होता है। विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र के शोधो के लिए या तो शोध को कई भागो मे बाँटकर भिन्न भिन्न देशो में एक ही समय पर अथवा भिन्न भिन्न चरणो मे अध्ययन किया जाता है या देश के कुछ भूखण्डों का चयन कर लिया जाता है जिसमें एक ही समय पर अथवा विभिन्न चरणो मे शोधकार्य किया जाता है।

3. उपलब्ध सामग्री का प्रारम्भिक अध्ययन (Initial study of available material)

शोध के तीसरे चरण मे शोधकर्ता को समस्या, विषय और क्षेत्र के बारे मे जानकारी प्राप्त करने के लिए ऐसी दर सामग्री का अध्ययन करना लाभकारी होता है जो उससे सम्बन्धित हो और जिसे सरलतापूर्वक प्राप्त किया जा सके। सामग्री के अध्ययन के बाद ही वह शोध की दिशा, साधनों आदि का ठीक ठीक निर्धारण कर सकता है। सामग्री के अध्ययन के आधार पर वह विषय और क्षेत्र की प्रकृति को ठीक से समझ पाता है और उसका एक उचित परिसीमन कर सकता है। अध्ययन के बाद ही वह शोध की रुपरेखा का निर्माण करता है और उसी के अनुसार सारे शोध की प्रचना को तैयार करता है। बिना अध्ययन के उसे एक तो इन कार्यो को करने मे बडी कठिनाई होती है, दूसरे वह अपने उद्देश्य एवं कर्तव्य से विमुख भी हो सकता है। फलस्वरूप वह इच्छित शोध नहीं कर पाता है। शोध के इस चरण मे ऐसी प्रत्येक सामग्री का अध्ययन सम्मिलित होता है जो सरलतापूर्वक उपलब्ध हो अथवा कर्ता के द्वारा समझी जा सकती हो।

4. उपकल्पना का निर्माण (Formulation of hypothesis)

ये उपकल्पनाएं शोध के प्रारम्भ मे की गयी ऐसी कल्पनाये हैं जो शोध के बा प्राप्त होने वाले निष्कर्षो के आधार पर स्वीकार अथवा अस्वीकार की जाती हैं। ये शोध के बाद स्वीकार, अस्वीकार किए जाने

वाले वे कथन हैं जिनकी कल्पना शोध के पूर्व ही कर ली जाती है। यह शोध समस्या का शोध के पहले का सम्भावित हल है। शोधकर्ता शोध करने के लिए कुछ ऐसी बातो का निश्चय कर लेता है जो शोध के बाद भली प्रकार स्पष्ट होती हैं। इस निश्चय से उसे अपने शोध की दिशा, उसकी प्ररचना, उसकी प्रविधि ओर अन्य सहायक बातो का अनुमान लगाने और निर्धारण करने मे सुविधा होती है। उपकल्पना की शोध के दौरान जॉच की जाती है, फिर उसमे सुधार कर अन्तिम सत्य की स्थापना की जाती है। अन्वेषणात्मक (Exploratory Research) शोध मे उपकल्पना का निर्माण नही किया जाता, विवरणात्मक शोधो मे उपकल्पनाये प्राय बनायी जाती हैं। इन शोधो की उपकल्पनाये सत्य के काफी पास होती हैं। एक समस्या के कई पूर्व उत्तर होने से शोध की प्ररचना और प्रविधि के निर्माण मे सुविधा होती हे। परिकल्पना को बनाते समय इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि वह स्पष्ट, सरल तथा सक्षिप्त हो तथा उसकी भाषा ऐसी न हो कि उसके कई अर्थ निकलते हो। जो भी बात कही जाये छोटे और सरल वाक्यो मे होनी चाहिये।

5. अध्ययन की योजना का निर्माण (Planning of study)

अध्ययन की सम्पूर्ण योजना के निर्माण के दौरान प्रासगिक पुस्तको की सूची तैयार करके उसके विषय मे निर्णय लेने, आवश्यक शोध उपकरण के बारे मे निर्णय लेने, अध्ययन के आकडो के सग्रह की उपयुक्त विधि के विषय मे निर्णय लेने, उपयुक्त मापको के बारे मे निर्णय लेने, इत्यादि कार्य किये जाते है।

6. सूचना के स्रोतो का निर्धारण (Determination of sources of information)

इस स्तर पर यह निर्णय लिया जाता है कि समग्र (Universe) क्या होगा अर्थात एक समय विशेष पर (जब आकडे एकत्रित किये जायेगे) एक क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित किस श्रेणी के उत्तरदाताओ से

सूचना एकत्रित की जायेगी। तदुपरान्त यह निश्चित किया जाता है कि सम्पूर्ण समग्र से सूचना एकत्रित की जायेगी अथवा इसके एक अश विशेष जिसे प्रतिदर्श (Sample) कहते हैं, से सूचना एकत्रित की जायेगी तथा प्रतिदर्श का चयन किस प्रकार किया जायेगा।

8. प्रामाणिक एवं प्रासंगिक शोध उपकरणो का निर्माण (Construction of valid and appropriate tools)

इस स्तर पर चेकलिस्ट प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार निदर्शनी पर्यवेक्षण निदर्शनी, परीक्षण, प्रक्षेपण प्रविधि या (Projective Techniques) इत्यादि उपकरणो का अध्ययन की आवश्यकतानुसार विकास किया जाता है।

9. तथ्यो/आँकडो का सकलन (Collection of facts/data)

आवश्यक उपकरणो के निर्माण के पश्चात इनकी सहायता से शोध के विभिन्न स्रोतो—अभिलेखीय अथवा क्षेत्रीय से आवश्यक तथ्यो/आँकडो को एकत्रित किया जाता है। अध्ययन, एव अभिलेखन, पर्यवेक्षण, प्रश्नावली साक्षात्कार, इत्यादि विधियो का सहारा लेते हुए इच्छित सामग्री को सकलन किया जाता हे।

10. सग्रहीत सामग्री का सम्पादन (Editing of collected material)

इस स्तर पर एकत्रित की गयी सूचना का सम्पादन किया जाता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सभी आवश्यक सूचना वास्तव मे एकत्रित कर ली गयी हे। तथा एकत्रित की गयी निरर्थक सामग्री को निकाल दिया गया हे।

11. वर्गीकरण, सकेतीकरण तथा सारिणीकरण (Classification, coding and tabulation)

एकत्रित की गयी सामग्री का अध्ययन करने के पश्चात इसे

विभिन्न श्रेणियो मे इस प्रकार विभाजित किया जाता है कि ये श्रेणियॉ एकत्रित की गई सम्पूर्ण सामग्री को अपने मे समाहित करती हो, ये एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित किन्तु पृथक हो ताकि पुनरावृत्ति न हो सके। तदुपरान्त, आवश्यकतानुसार इन श्रेणियो को सकेत (Codes) भी निर्धारित किए जा सकते है ताकि सारिणीकरण के स्तर पर अनावश्यक श्रम तथा समय एव धन के अपव्यय से बचा जा सके। इसके बाद सारिणियो का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि वे अध्ययन के उद्देश्यो की प्राप्ति मे सहायक सिद्ध हो सके। सारिणियो का निर्माण करते समय इस बात को विशेष रूप से ध्यान मे रखा जाना चाहिये कि सारिणियाँ अनावश्यक रूप से जटिल न हो, इनमे स्तम्भो (Columns) तथा पक्तियो (Rows) की सख्या इतनी अधिक न हो कि प्रथम दृश्या इनको देखकर समझ पाना कठिन हो जाए तथा इतनी कम भी न हो कि ऐसा लगे कि श्रेणियो का निर्माण करते हुए सारणी को केवल सारणी बनाने के लिए तैयार किया गया है। स्वतन्त्र चर को स्तम्भो तथा आश्रित चर को पक्तियो मे दिखाया जाना चाहिए।

12. तथ्यो का विश्लेषण तथा निर्वचन (Analysis and interpretation of facts)

सारणीबद्ध तथ्यो का तार्किक एव साख्यिकीय दोनो प्रकार के ढगो का प्रयोग करते हुये विश्लेषण किया जाता है और विश्लेषण से प्राप्त परिणामो को अन्य अध्ययन से प्राप्त परिणामो के परिप्रेक्ष्य मे प्रस्तुत किया जाता है ओर सापेक्ष गुणो एव सीमाओ को उजागर करते हुए निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

13. प्रतिवेदन तैयार करना (Preparation of report)

उपरिलिखित सभी स्तरो पर किये गये कार्यो को शोध उपभोक्ताओ के समक्ष प्रभावपूर्ण रुप से प्रस्तुत करने हेतु उनकी अपेक्षाओ को ध्यान मे रखते हुये प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

V समाज कार्य शोध के क्षेत्र
(Areas of social work reasearch)

समाजकार्य शोध निम्नलिखित प्रमुख क्षेत्रो मे किया जाता है

1. उन कारकों की खोज तथा परिमापन जो सामाजिक समस्याओ को उत्पन्न करते हैं तथा सामाजिक सेवाओ की आवश्यकताओ को स्पष्ट करते हैं।
2. दान देने वाली सस्थाओ के इतिहास, समाजकार्य कल्याण अधिनियमो, समाज कल्याण कार्यक्रमो तथा समाज की आवश्यकताओं का अध्ययन,
3. समाजकार्य कर्ताओ के भूमिका प्रत्यक्षीकरण की तथा उमकी स्थितियों के मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन,
4. समाज कार्यकर्ताओ द्वारा लक्ष्यो के निर्धारण तथा उनकी अपनी छवि का अध्ययन,
5. समाज कार्यकर्ताओ की आशाओ, अभिलाषाओ तथा क्रियाओ का अध्ययन,
6. समाज की विधिक प्रक्रियाओ का अध्ययन,
7. उपलब्ध समाज सेवाओं की वैयक्तिक, सामूहिक तथा सामुदायिक आवश्यकता के संदर्भ मे उपयोगिता का अध्ययन,
8. समाज कार्य क्रिया के परीक्षण, मापन तथा मूल्याकन सम्बन्धी अध्ययन तथा समाज कार्य अभ्यास के लिये वाँछित योग्यताओ के निर्धारण का अध्ययन,
9. समाज कार्य सेवाओ, कार्यकर्ताओ एव अभिकरणों के सम्बन्ध मे सेवार्थी के व्यवहार की प्रतिक्रिया का अध्ययन,
10. सेवार्थी की आशाओ, अभिलाषाओ, अपेक्षाओ, उद्देश्यो, प्रत्यक्षीकरणो का मूल्यांकन सम्बन्धी अध्ययन
11. सामाजिक संस्था के अन्तर्गत तथा इनके बाहर कार्यरत तथा व्यावसायिक समाज कार्य कर्ताओ की भूमिका की परिभाषा तथा उनके अन्तर्सम्बन्धो में सहयोग की स्थिति का अध्ययन,

12 समुदाय के सामाजिक समूहो के मूल्यो तथा उनकी वरीयताओ का अध्ययन,

13 सामाजिक सरथाओ की विभिन्न इकाइयो मे अर्न्तसम्बन्ध तथा उनके सेवार्थी तथा सरथा के कर्मचारियो पर प्रभाव का अध्ययन,

14 समाजकार्य शोध की पद्धतियो की प्रभावपूर्णता का अध्ययन।

साराश मे, यह कहा जा सकता है कि समाजकार्य शोध का उद्देश्य उस नवीन ज्ञान की खोज करना है जो समाज के लिए उपयोगी कार्यक्रमो को नियोजित करने तथा लागू करने में सहायक सिद्ध हो सके।

सन्दर्भ

1 Kleg Evan, *Research in Social Work*, Social Work Year Book, ASWA, *1935, p 421*

2 French D David, *Measuring Results in Social Work*, Columbia University Press, New York, 1952, p 72

3 Klein Philip *Past and Future in Social Work Research*, Social Welfare Forum, National Conference of Social Work, 1951, p 133

4 *Report of the Workshop on Research in Social Work* *Encyclopaedia of* Social Sciences, Vol 13, p 330

5 Ramchandran, P , *Social Work Research and Statistics* A R Wadia (ed) *History and Philosophy of Social Work in India* Allied Publishers, Pvt Ltd Bombay 1961, p 501-502

6 Social Work research is the systematic critical investigation of questions in the social welfare field with the purpose of yielding answers to problems of social work, and of extending and generalizing social work knowledge and concepts

Friedlander, W A., op cit., p 191

7 National Association of Social Workers, Social Work Year Book, 1957, p 489

8 Social work research begins with practical problems and its objective is to produce knowledge that can be put to use in planning or carrying on social work programmes

Ripple L , *Problems Identification and Formulation* in Polansky, Norman A (ed) *Social Work Research*, University of Chicago Press, *Chicago, 1960 p 24*

सामाजिक क्रिया
(SOCIAL ACTION)

ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से समाज कार्य के वर्तमान वैज्ञानिक स्वरूप का अवलोकन करने पर यह पता चलता है कि 1922 मे ही मेरी रिचमण्ड ने इसका उल्लेख समाज कार्य की चार प्रमुख प्रणालियो मे से एक प्रणाली के रूप मे किया था। 1940 मे जॉन फिच ने एक कान्फ्रेन्स मे सामाजिक क्रिया की प्रकृति के ऊपर एक महत्वपूर्ण निवन्ध प्रस्तुत किया। एक वर्ष के वाद उन्होने सोशल वर्क इयर वुक मे सामाजिक आन्दोलन पर निवन्ध लिखा। उसके कुछ ही दिनो के वाद समाज कार्य के क्षेत्र मे सामाजिक क्रिया की व्यापक चर्चा चल पडी। 1945 मे केनिथ एलियम प्रे ने "सोशल वर्क ऐण्ड सोशल ऐक्शन" नामक एक लेख लिखा जिसके अनुसार यह माना जाने लगा कि सामाजिक क्रिया सामुदायिक संगठन का एक अग नहीं है। यह समाज कार्य की एक अलग विधि है। वाद मे चलकर यह वात और भी स्पष्ट रुप से स्वीकार की जाने लगी कि सामुदायिक सगठन के अन्तर्गत कार्य एक सीमित क्षेत्र मे किया जाता है किन्तु सामाजिक क्रिया मे कार्य वडे पैमाने पर होता है।

I *सामाजिक क्रिया की परिभाषा*
(Definition of social action)

यहॉ पर प्रमुख समाज कार्यकर्ताओं द्वारा दी गयी परिभाषाओ का उल्लेख किया जा रहा है

रिचमण्ड[1] (1922)

प्रचार एव सामाजिक विधान के माध्यम से जन समुदाय का कल्याण सामाजिक क्रिया कहलाता है।

क्वायल[2] (1937)

सामाजिक क्रिया सामाजिक पर्यावरण मे परिवर्तन के लिए किये गये प्रयत्नो को कहते हैं जिनसे जीवन अधिक सतोषप्रद हो सके। इसका उद्देश्य व्यक्ति को प्रभावित न करके सामाजिक सस्थाओ, कानूनो, प्रथाओ, तथा समुदायो को प्रभावित करना है।

सोलेण्डर[3] एस (1957)

समाज कार्य के क्षेत्र मे सामाजिक क्रिया समाज कार्य दर्शन, ज्ञान तथा निपुणताओ के सदर्भ मे व्यक्ति,समूह या अर्न्तसामूहिक *प्रयास की एक प्रक्रिया है। इसका उद्देश्य नवीन प्रगति तथा सेवाओ* की प्राप्ति हेतु कार्य करते हुये सामाजिक नीति एव सामाजिक सरचना की क्रिया मे सशोधन के माध्यम से समाज के कल्याण मे वृद्धि करना है।

हिल[4] (1951)

सामाजिक क्रिया का वर्णन वृहत् सामाजिक समस्याओ को हल करने अथवा आधारभूत सामाजिक और आर्थिक दशाओ तथा अभ्यासो को प्रभावित करते हुये सामाजिक दृष्टि से अभीष्ट लक्ष्यो को प्राप्त करने हेतु एक सगठित सामूहिक प्रयास के रूप मे किया जा सकता है।

फ्रीडलैण्डर[5] (1963)

सामजिक क्रिया समाज कार्य दर्शन तथा अभ्यास की सरचना के *अतर्गत एक वैयक्तिक, सामूहिक अथवा सामुदायिक प्रयत्न है जिसका उद्देश्य* सामाजिक प्रगति को प्राप्त करना, सामाजिक नीति मे परिवर्तन करना तथा सामाजिक विधान, स्वास्थ्य एव कल्याण सेवाओं में सुधार लाना है।

सामाजिक क्रिया की अवधारणा मे निम्नलिखित तत्व सम्मिलित हैं

(1) सामाजिक क्रिया समाज कार्य का ही एक अग है। इसमे भी समाज कार्य के सिद्धान्त, मान्यताओ तथा ज्ञान और कौशल का प्रयोग किया जाता है। सामान्यत. इसका प्रयोग समाज कार्यकर्ताओ के व्यवसायिक संघ द्वारा किया जाता है।

(2) सामाजिक क्रिया का उद्देश्य सही अर्थ मे सामाजिक न्याय और समाज कल्याण की प्राप्ति है। इसके द्वारा एक ऐसे समाज का निर्माण सभव होता है जिसमे व्यक्ति को अधिकतम कल्याण की प्राप्ति हो सके।

(3) इस प्रक्रिया मे आवश्यकतानुसार सामाजिक सस्थाओ, परिस्थितियो तथा समाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है और साथ ही साथ अनावश्यक एवं अवांछनीय सामाजिक परिवर्तन को रोकने का भी प्रयास किया जाता है। इसका लक्ष्य यह होता है कि समाज के सदस्यो को इस योग्य बना दिया जाये कि वे आत्मानुशासित होकर अपनी परिस्थितियो को स्वयं ही व्यवस्थित कर सके।

(4) सामाजिक क्रिया मे यथा संभव अहिसात्मक ढंग से कार्य किया जाता है।

(5) सामाजिक क्रिया मे किसी एक व्यक्ति के द्वारा भी कार्य आरम्भ किया जा सकता है परन्तु बाद मे इसके उद्देश्यो की पूर्ति के लिए सामूहिक सहयोग अपेक्षित होता है।

(6) इसमे कार्य जनतांत्रिक मूल्यो और संविधान में दिये गये नागरिक अधिकारो पर आधारित आन्दोलन के रुप मे होता है। आन्दोलन के आरम्भ से पूर्व पूरे जन समुदाय की सहमति अपेक्षित होती है और इस जन सहमति से ही आन्दोलन की शक्ति का प्रादुर्भाव होता है।

II सामाजिक क्रिया के आधारभूत तत्व
(Basic elements of social action)

सामाजिक क्रिया समाज कार्य की एक सहायक प्रणाली है जिसका उद्देश्य सामाजिक नीतियो तथा सामाजिक विधानो मे परिवर्तन एवं परिवर्द्धन करना है। इसमे निम्नलिखित तत्वो का समावेश होता है :

1. समूह अथवा समुदाय की सक्रियता

सामाजिक क्रिया तभी सफल हो सकती है जब समूह अथवा समुदाय सक्रिय हो। समुदाय की सक्रियता नियोजित एव सगठित होनी चाहिए। इसके सदस्यो मे प्रगति तथा परिवर्तन के लिए दृढ आकांक्षा होनी चाहिए।

2. लोकतान्त्रिक नेतृत्व

सामाजिक क्रिया मे नेतृत्व का विकास करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि नेता का चयन समाज की सहमति से किया जाए।

3. जनतांत्रिक कार्य प्रणाली

जनतान्त्रिक कार्य प्रणाली सामाजिक क्रिया के लिए आवश्यक है इसमें जो भी ढग अपनाया जाये वह जनतान्त्रिक मूल्यो पर आधारित हो, क्योकि समाज कार्य का दर्शन तथा व्यवहार जनतान्त्रिक आदर्शों पर निर्भर है।

4. साधनों की व्यवस्था

सामाजिक क्रिया को आरम्भ करने से पूर्व सम्बधित समूह अथवा समुदाय के सभी भौतिक तथा अभौतिक साधनो पर भ ली भाँति विचार किया जाये। साधनो का प्रयोग करते समय उनके प्रत्यक्ष एव दूरगामी प्रभावो को ध्यान मे रखना आवश्यक होता है।

5. साधनो और समस्याओ मे समन्वय

साधनो का सही अनुमान लगाने के बाद ही समस्या का चयन किया जाना चाहिए। इसके लिए सामाजिक क्रिया को आरम्भ करने से पूर्व समस्या से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किया जाना चाहिए।

6. स्वस्थ जनमत

सामाजिक क्रिया के लिए स्वस्थ जनमत को भी आवश्यक माना गया है। स्वस्थ जनमत के विकास हेतु समाचार पत्रो, रेडियो, टेलीविजन, सार्वजनिक सभाओ, इत्यादि का उपयोग किया जाता है।

6. समुदाय के सदस्यों का सहयोग

कोई भी सामाजिक क्रिया तभी सम्पन्न हो सकती है जब उससे सम्बन्धित समुदाय के सदस्य समस्या के साथ अपना तादात्मीकरण (Identification) करे तथा कार्यक्रम के निर्माण मे स्वय भाग ले। इसके अतिरिक्त सामाजिक क्रिया मे लगे हुऐ व्यक्तियो को ऐसे निर्देशन की सुविधा प्राप्त हो ताकि उन्हे समय–समय पर उत्पन्न होने वाली समस्याओ को हल करने के लिए सक्षम बनाया जा सके।

III *सामाजिक क्रिया के उद्देश्य*
(Objectives of social action)

सामान्य रूप से सामाजिक क्रिया के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं

1. स्वास्थ्य एव कल्याण के क्षेत्र मे स्थानीय, प्रान्तीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर किये जाने वाले कार्यो को करना।
2. सामाजिक नीतियों के निर्माण की सामाजिक पृष्ठभूमि तैयार करना।
3. सामाजिक आँकडो को एकत्र करना तथा सूचनाओ का विश्लेषण करना।
4. अविकसित समूहो के लिए उनके विकास के लिए आवश्यक सेवाओं की माँग करना।

2. वैयक्तिक तथा पारिवारिक मूल्यो से सम्बन्धित समस्याओ का समाधान

समस्याओ के समाधान की दिशा मे सरकारी तथा गैर–सरकारी स्तर पर अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। इन प्रयत्नो के बावजूद समस्याओ का रूप अत्यधिक व्यापक है। साथ ही वैयक्तिक तथा पारिवारिक मूल्यों से सम्बन्धित अनेक समस्याए भी उत्पन्न हो रही हैं। इसके समाधान हेतु चाहे कानून का सहारा ले, चाहे समूहो या समुदायो मे चेतना जाग्रत करे, दोनो ही स्थितियो मे सामाजिक क्रिया पद्धति अत्यन्त उपयोगी है। इन समस्याओ को जनतात्रिक आदर्शो के अनुकूल सामाजिक क्रिया की सहायता से हल किया जा सकता है।

3. लोकतांत्रिक मूल्य और जन–चेतना का प्रसार

समाज कार्य जनतात्रिक मूल्यो पर आधारित है। न्याय, समानता एवं स्वतत्रता जनतंत्र के मूलभूत आधार हैं। ये आदर्श सभी को व्यवहार में सुलभ हो इसलिए समाज के वर्तमान स्वरुप मे काफी परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। सामाजिक क्रिया को इसका आधार बनाया जा सकता है। सामाजिक क्रिया जन चेतना के जागरण के लिए अत्यधिक लाभप्रद है।

4. संगठनात्मक प्रक्रियाओं को प्रोत्साहन

समाज मे प्राय विभिन्न व्यक्तियो तथा वर्गों द्वारा अनेक प्रकार की सामाजिक प्रक्रियाओ का एक साथ प्रयोग किया जाता है। ये प्रक्रियाएं संगठनकारी भी होती है और विघटनकारी भी। संगठनात्मक प्रक्रियाओ की सहायता लेकर सामाजिक क्रिया की गति को तीव्र किया जा सकता है साथ ही विघटनकारी प्रक्रियाओ से बचाव के उपाय भी खोजे जा सकते हैं।

इसके द्वारा सामाजिक विधानो मे सुधार किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक दशाओ से उत्पन्न

निर्धनता तथा व्याधियो जैसी अनेक समस्याओ को जिन्हे सामाजिक एजेन्सिया हल नहीं कर पाती, सामाजिक क्रिया द्वारा हल किया जा सकता है।

V *सामाजिक क्रिया के स्वरूप (Forms of social action)*

ब्रिटो[6] ने सामाजिक क्रियाओ के दो स्वरूपो का उल्लेख किया है ·

1 जन समुदाय के लाभ के लिए उच्च वर्ग या प्रतिष्ठित व्यक्तियो द्वारा प्रारम्भ किये गये तथा चलाये गये कार्य।
2. लोकप्रिय सामाजिक क्रिया

ब्रिटो ने दोनो प्रकार की सामाजिक क्रिया के तीन–तीन उप–प्रारूप (sub-models) बताये हैं

प्रथम उप–प्रारूप के अन्तर्गत निम्न तीन प्रकार आते हैं

1. विधानात्मक क्रिया प्रारूप (Legislative action model)

इस प्रारुप मे कुछ विशिष्ट व्यक्ति समस्या के प्रति जनचेतना उत्पन्न करके सामाजिक नीति मे परिवर्तन लाते हैं।

2. स्वीकृत प्रारूप (Sanction model)

. विशिष्ट व्यक्ति आर्थिक, सामाजिक राजनीतिक अथवा धार्मिक कारको पर नियत्रण करके समाज से लाभ प्राप्त करते हैं।

3. प्रत्यक्ष भौतिक प्रारूप (Direct physical model)

विशिष्ट व्यक्ति अन्याय करने वालो के प्रति कार्यवाही करते हैं तथा दड देते हैं।

दूसरे उप–पारूप के निम्न तीन प्रकार हैं

1. चेतना जागरण प्रारूप (Conscientization model)

यह प्रारूप पालो फ्रायरे (Paulo Fnere) के विचारो पर आधारित है। इसके अर्न्तगत शिक्षा के द्वारा जन सामान्य मे चेतना जाग्रत की जाती है।

2. द्वन्द्वात्मक प्रारूप (Dialectical model)

इस प्रारुप मे यह विश्वास दिलाकर सघर्ष उत्पन्न किया जाता है कि याद मे इससे अच्छी व्यवस्था लागू होगी।

इस प्रारूप मे किसी विशेष कारण को लेकर जनसामान्य को हडताल के लिए उत्साहित किया जाता है।

VI *सामाजिक क्रिया के सिद्धान्त*
(Principles of social action)

सामाजिक क्रिया के निम्नलिखित सिद्धान्त प्रमुख हैं :

1. विश्वसनीयता का सिद्धान्त (Principle of credibility)

नेतृत्व के प्रति जनमानस मे विश्वास उत्पन्न करना अति आवश्यक होता है। जनता यह विश्वास करे कि जो आन्दोलन चलाया जा रहा है वह उनके हित मे हे तथा जो इसकी अगवाई कर रहे है वे सच्चरित्र, ईमानदार तथा नेक हृदय हें तथा जनकल्याण की भावना रखते हें।

2. वैधता का सिद्धान्त (Principle of legitimization)

संदर्भित जनता जिसके लिए आन्दोलन चलाया जा रहा हे या कार्य किया जा रहा है तथा जनसामान्य को विश्वास हो कि आन्दोलन नैतिक तथा सामाजिक रुप से उचित है। इस मान्यता के आधार पर ही सहयोग प्राप्त होता है। सामाजिक वैधता स्थापित करने के लिए आन्दोलनकारी, दार्शनिक, नैतिक, वैधानिक, प्राविधिक आदि मार्गों का चयन किया जाता हे। इससे सभी प्रकार का ज्ञान जनसामान्य को हो जाता है।

3. नाटकीकरण का सिद्धान्त (Principle of dramatisation)

नेता का कार्य कार्यक्रम को इस प्रकार से जनता के समक्ष प्रस्तुत करना होता है ताकि जनता स्वय सावेगिक रुप से उस कार्यक्रम से जुड जाये तथा अति आवश्यक मान कर उसके साथ अनवरत एव सक्रिय रूप स सम्बद्ध हो जाये।

4 वहु आयामी रणनीति का सिद्धान्त
(Principle of multiple strategies)

चार प्रकार की रणनीतिया को सामाजिक क्रिया के उपयोग मे लाना हितकर होता है

1 शिक्षा सम्बन्धी रणनीति (Educational)
(क) प्रौढ शिक्षा द्वारा, (ख) प्रदर्शन द्वारा
2 समझाने (Persuation) की रणनीति
3 सुगमता (Facilitation) की रणनीति
4 शक्ति (Power) की रणनीति

5. बहुआयामी कार्यक्रम का सिद्धान्त
(Principle of manifold programmes)

कार्यक्रम तीन प्रकार क होन चाहिये—

1 सामाजिक कार्यक्रम
2 आर्थिक कार्यक्रम
3 राजनीतिक कार्यक्रम

VII *सामाजिक परिवर्तन की रणनीतिया (Strategies)*

लीस' (Lees) ने तीन प्रकार की रणनीतियों का उल्लेख किया है

1. सहभागिता की रणनीति
इस रणनीति के अन्तर्गत कार्यकर्ता वर्तमान सामाजिक नीति को

प्रभावकारी बनाने के लिये स्थानीय तथा अन्य अधिकारियो एव सस्थाओ के साथ सहभागी बनता है। इस रणनीति के अनुसार इस प्रक्रिया से लोगो के मूल्यो तथा रुचियो मे परिवर्तन होता है, किसी की शक्ति का ह्रास नही होता है तथा आपसी टकराव की स्थिति नहीं उत्पन्न होती है।

2. प्रतिस्पर्धा की रणनीति

परिवर्तन लाने के लिए इस रणनीति को प्रयोग मे लाने वाला व्यक्ति प्रचार एव प्रसार के माध्यम से वर्तमान परिस्थितियो को बदलने के लिए प्रयास करता है। वह इस प्रकार से प्रचार करता है कि समुदाय के सदस्य उस कार्यक्रम की ओर उन्मुख होने लगते हैं।

3. व्यवधानात्मक रणनीति

इस रणनीति के अन्तर्गत हडताल, बहिष्कार, भूख हडताल, कर अदायगी न करने, इत्यादि का सहारा लिया जाता है।

VIII *सामाजिक क्रिया के प्रारूप (Models of social action)*

सामाजिक क्रिया के निम्नलिखित प्रारूप हैं

1. संस्थागत प्रारूप

सामान्य रूप से राज्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जन सहभागिता के साथ अथवा जन सहभागिता के बिना जन कल्याण हेतु कदम उठाता है। इस प्रारूप के अधीन ससद अथवा विधानमडल कोई कानून बनाता हे ओर उसी के अनुरूप कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया जाता है। उदाहरण के लिए, अवैध बस्तियों को कानून बनाते हुए मान्यता प्रदान करना।

2. संस्थागत सामाजिक प्रारूप

जब गैर सरकारी सस्थाए अनुदान प्राप्त करते हुए या अनुदान के बिना जनहित मे कार्यक्रम आयोजित करती हैं तो उसे सस्थागत

सामाजिक प्रारूप कहते हैं। जन समर्थन धीरे–धीरे बढने लगता है। प्रारम्भ मे सस्था लोगो के हित के लिए कदम उठाती है लेकिन कालान्तर मे जनसमुदाय स्वय उसे अपना लेता है।

3 सामाजिक सस्थागत प्रारूप

इस प्रारूप के अर्न्तगत नागरिक स्वय सहायता समूह, तथा विशिष्ट जन अपने कल्याण के लिए सामाजिक क्रिया करते हैं। धीरे–धीरे वे औपचारिक समूहो तथा सस्थाओ का सहयोग प्राप्त करते हैं।

4. सर्वमान्य/आन्दोलनात्मक प्रारूप

अधिकाश व्यक्ति परिवर्तन के लिए तैयार होते हैं विघ्न पैदा करने वाली सभी शक्तियो को जड से उखाड फैकते हैं तथा आत्मनिर्भरता पर बल देते हैं। इसमे व्यापक सहभागिता होती है और इसीलिए यह आदर्श प्रारूप माना जाता है।

5. गांधीवादी प्रारूप

यह प्रारूप आध्यात्मिकता, उद्देश्यो तथा साधनो दोनो की शुद्धता, अहिसा तथा नैतिकता पर बल देता है और इन्ही साधनो के माध्यम से परिवर्तन का उद्देश्य पूरा करने पर बल देता है।

सन्दर्भ

1 Social action is mass betterment through propaganda and social legislation

Richmond Marry E, *What is Social Casework?* Russell Sage Foundation, New York, 1922, P 23

2 Social action is the attempt to change the social environment in ways which will make life more satisfactory It aims to affect not individuals but social institutions laws, customs communities

Coyle, Grace L, op cit, P 270

3 Social action in the field of social work is a process of individual group or inter-group endeavour within the context of social work philosophy

knowledge and skills Its objective is to enhance the welfare of society through modifying social policy and the functioning of social structure working to obtain new progress and services

Solender, S., '*Social Action* in Social Work Year Book, AASW 1957 pp 517-18

4 Social action may be described as an organized group effort to solve mass social problems or to further socially desirable objectives by attempting to influence basic social and economic conditions or practice

Hill, John L Social Action Proceedings of the National Conference of Social Work, AA SW 1951 P 415

5 Social action is an individual, group or community effort within the framework of social work philosophy and practices that aims to achieve social progress, to modify social policies and to improve social legislation and health and welfare services

Friedlander, W A., op cit., p 219

6 Britto, G A A., *Social Action and Social Work Education in the Eighties* in Siddiqui, H Y (Ed) Social Work and Social Action, Harnam Publications, Delhi, 1984, P 50

7 Lees, R S *Politics and Social Work* Routledge and Kegan Paul Ltd., London 1972 quoted by Siddiqui H Y, op cit., p 19

सामाजिक व्यवस्था
(SOCIAL SYSTEM)

मानव जीवन के क्रम तथा निरन्तरता को बनाये रखने मे समाज का अनुपम योगदान है। यह मानव जीवन का एक आवश्यक आधार है क्योकि जीवन मे कोई स्तर कभी नहीं आयेगा जबकि समाज का साथ उससे छूट जाय। समाज के अभाव मे मानवीय जीवन का अस्तित्व असम्भव है। वस्तुत मानव जीवन के अस्तित्व तथा प्रगति का रहस्य सामाजिक व्यवस्था में निहित है।

1. **व्यवस्था का अर्थ (System) :** व्यवस्था का तात्पर्य उस क्रमबद्धता से है जो किसी सरचना के विभिन्न कारकों के बीच एक निश्चित प्रकार्यात्मक आधार पर पायी जाती है।

व्यवस्था की विशेषताये : व्यवस्था की निम्न विशेषताये प्रमुख हैं.

1 व्यवस्था गतिशील अथवा परिवर्तनशील धारणा है।

2 क्योकि बिना गतिशीलता के क्रियाशीलता सम्भव नहीं है।

3 विभिन्न इकाइयो मे प्रकार्यात्मक सम्बन्ध होते हैं।

4 घटको मे निश्चित प्रतिमान (Pattern) होता है। जिससे वे कार्यात्मक बनते हैं।

2. **व्यवस्था का वर्गीकरण (Classification) :** सामान्यत व्यवस्था तीन प्रकार की होती है।

(i) यान्त्रिक व्यवस्था (Mechanical) : इस व्यवस्था मे जीवन का अभाव होता है। यह कृत्रिम होती है। इस व्यवस्था मे कुछ

निर्जीव तत्वों पर इकाईयो का इस प्रकार प्रकार्यात्मक सयोग होता है कि वे क्रियाशील रहते हैं। जैसे मशीन, पखे, रेडियो आदि।

(ii) प्राकृतिक व्यवस्था (Natural) : यह वह व्यवस्था है जो कि प्राकृतिक जगत से सम्बन्धित होती है। यह व्यवस्था मनुष्य के कार्यो से स्वतत्र है। यह स्वत क्रियाशील रहती है तथा परिवर्तित होती है। यह दो प्रकार की होती है।

अजीवन (Inorganic) गैस सौर व्यवस्था (Social System)

जीवन (Biological/Organic) जैसे शरीर व्यवस्था

(iii) मानव निर्मित व्यवस्था (Man made System) : इस व्यवस्था के अन्तर्गत तीन उप–व्यवस्थाओ को सम्मिलित किया जाता है।

(a) व्यक्तित्व व्यवस्था (Personality System)

(b) सांस्कृतिक व्यवस्था (Cultural System)

(c) सामाजिक व्यवस्था (Social System)

3. सामाजिक व्यवस्था की परिभाषा (Definition)

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार : समाज स्वय एक व्यवस्था है। यह प्रचलनो, कार्यविधियो, प्रभुत्व, पारस्परिक सहयोग तथा विभिन्न समूहो और श्रेणियो व मानव व्यवहार के नियत्रणो एव स्वतंत्रताओ की एक व्यवस्था है।'

पारसन्स के अनुसार : सामाजिक व्यवस्था एक ऐसी परिस्थिति है, जिसका कि कम से कम यह भौतिक या पर्यावरण सम्बन्धी पहलू हो, अपनी इच्छाओं या आवश्यकताओ की आदर्शपूर्ति की प्रवृत्ति से प्रेरित एकाधिक वैयक्तिक कर्ताओ की एक दूसरे के साथ अन्त. क्रियाओ के फलस्वरूप उत्पन्न होती है और इन अन्त क्रियाओं मे लगे हुये व्यक्तियो की पारस्परिक सम्बन्ध उनकी परिस्थितियो के साथ सास्कृतिक रूप मे संरक्षित तथा

स्वीकृत प्रतीको की एक व्यवस्था द्वारा परिभाषित और मध्य स्थित होता है।

मार्शल ई जोन्स के अनुसार · सामाजिक व्यवस्था वह स्थिति है जिससे कि समाज की विभिन्न क्रियाशील इकाईयॉं आपस मे तथा समग्र समाज के साथ सम्बन्धित होती है।[3]

4. सामाजिक व्यवस्था की विशेषताये (Characteristics of Social System)

1 सामाजिक व्यवस्था आपस मे अन्त क्रिया करने वाले एकाधिक वैयक्तिक कर्ताओ से सम्बन्धित है।

2 अनेक व्यक्ति जब परस्पर अन्त क्रिया करते हैं तो उनकी वे अन्त क्रियाए जिस व्यवस्था को उत्पन्न करती है। उसी को सामाजिक व्यवस्था कहते हैं।

3 अन्त क्रियाओ के फलस्वरूप निश्चित सामाजिक सम्बन्धो का होना सामाजिक व्यवस्था मे अनिवार्य है।

4 सामाजिक व्यवस्था उस व्यवस्था को कहते हैं जब विभिन्न समाज के निर्माणात्मक तत्वो मे परस्पर एक अपूर्व क्रमबद्धता तथा अन्त सम्बन्ध स्पष्टत विद्यमान हैं।

5 सामाजिक व्यवस्था का एक भौतिक या पर्यावरण सम्बन्धी पहलू होता है?

6 सामाजिक व्यवस्था सास्कृतिक व्यवस्था से भी सम्बन्धित होती है।

7 सामाजिक व्यवस्था मे समाज के सदस्यो के स्वीकृत अथवा अर्न्तनिहित उद्देश्य भी होते हैं।

8 सामाजिक व्यवस्था में अनुकूलन का गुण होता है।

9 मानवीय आवश्यकताओं तथा पर्यावरण सम्बन्धी परणामो के कारण सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होता रहता है।

10 सामाजिक व्यवस्था में सन्तुलन तथा क्रय बद्धता होती है।

5. सामाजिक व्यवस्था के आवश्यक तत्व (Elements) : लूमिस (Charles P. Loomis) के अनुसार सामाजिक व्यवस्था के निम्नलिखित नौ तत्व होते हैं।

1. विश्वास और ज्ञान (Faith and Knowledge)
2. भावनायें (Sentiments)
3 आवश्यकतायें, लक्ष्य तथा उद्देश्य (Needs, Goals and Objectives)
4 आदर्श (Ideals)
5 पद (Status)
6 कार्य (Role)
7 शक्ति (Power)
8 मान्यता (Sanction)
9. सुविधा (Facility)

1. विश्वास एवं ज्ञान : विश्वास मुख्यत. 5 प्रकार के होते हैं :

(i) यह विश्वास कि समाज द्वारा स्वीकृत कर्तव्यों का पालन करना उचित है, उनकी अवहेलना करना नहीं।

(ii) यह विश्वास कि जन्म और मृत्यु के चक्र से छुटकारा पाना या न पाना अपने कार्य पर निर्भर करता है।

(iii) यह विश्वास कि बुरे काम की परिभाषा सदैव ही बुरा होता है और उसका प्रतिफल व्यक्ति को अवश्य मिलता है।

(iv) स्वर्ग तथा नर्क में विश्वास

(v) यह विश्वास कि पूर्वजों की आत्मा अमर है और वे हम लोगों के समस्त कार्यों को देखते रहते हैं।

सामाजिक व्यवस्था के लिए उपरोक्त विश्वास आवश्यक है। इसी प्रकार ज्ञान अनुभवों से सम्बन्धित होने के कारण सामाजिक व्यवस्था का एक सामाजिक तत्व बन जाता है।

2. **भावनाए** . सवेग जब और भी अधिक विषम एव जटिल मानसिक क्रियाओ के रूप मे सगठित होने लगते हैं। तभी उन्हे भावनाए कहा जाता है। सामाजिक व्यवस्था सम्बन्धी भक्ति और लगन की भावनाओं का यदि विकास न हो तो समाज द्वारा नियोजित क्रियाओ का पालन ही नही हो सकता। वस्तुत ये भावनाये ही सगठन व व्यवस्था की प्रेरक आत्मा है।

3. **आवश्यकतायें, लक्ष्य एव उद्देश्य :** आवश्यकताये ही मानव को एक दूसरे के निकट लाने का सूत्र होती हैं। सामाजिक सम्बन्ध का एक लक्ष्य व उद्देश्य होता है।

4. **आदर्श :** किसी समाज के आदर्श सामूहिक चेतना के प्रतीक होते हैं और इस कारण सामूहिक मूल्य, आदर्श तथा भावनाओ द्वारा इन आदर्श नियमों को निरन्तर बल प्राप्त होता रहता है।

5. **पद :** समाज के सदस्यो का कुछ निश्चित पद तथा कार्य होता है। व्यक्ति के पद से तात्पर्य उस स्थिति से है जो वह अपने जन्म के बाद प्राप्त करता है। पद के अनुसार उसकी भमिका होती है। पद दो प्रकार के होते हैं प्रदत्त तथा अर्जित। प्रदत्त जन्म से प्राप्त होते है लेकिन अर्जित पद उसे अपने ज्ञान, प्रयत्न, तथा प्रयास से प्राप्त करने होते हैं।

6. **कार्य :** पद के अनुसार ही व्यक्ति के कार्य होते हैं। इसी आधार पर व्यवस्था बनी रहती है।

7. **शक्ति या सत्ता :** समाज व्यवस्था के स्थायित्व के लिये शक्ति का होना आवश्यक है। इसी से अनुशासन सम्भव होता है।

8. **मान्यताये :** सामाजिक व्यवस्था का एक तत्व मान्यताये है। ये मान्यतायें सामाजिक मूल्य और आदर्शो के अनुसार निर्धारित होती हैं।

9. **सुविधा :** सामाजिक व्यवस्था केवल नियत्रण से ही स्थिर नहीं रहती है बल्कि इसके साथ ही साथ आवश्यक सुविधाओ का होना भी आवश्यक होता है।

6. सामाजिक व्यवस्था के सिद्धान्त

काम्ट का सिद्धान्त (Comte): काम्ट के अनुसार सामाजिक व्यवस्था एक सामाजिक सावयव (Social Organism) है। वैयक्तिक सावयव तथा सामाजिक सावयव में काफी समानता है। जब समाज के विभिन्न सदस्यो का बौद्धिक स्तर समान नहीं होता है तो बौद्धिक अराजकता उत्पन्न हो जाती है। इससे सामाजिक व्यवस्था का सतुलन बिगड जाता है। श्री काम्ट के अनुसार सामाजिक व्यवस्था की पूर्णतया और स्थायित्व समाज की भौतिक शक्ति, बौद्धिक शक्ति तथा भौतिक शक्ति के उचित सामन्जस्य पर ही निर्भर है। *भौतिक शक्ति क्रिया और कार्य पर आधारित होती है। जबकि* बौद्धिक शक्ति चिन्तन पर तथा नैतिक शक्ति स्नेह और सेवा पर आधारित होती है। आधुनिक समाज व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या इनका उचित अनुपात मे मिलाना और उनमें सामन्जस्य की स्थिति को बनाये रखना है।

दुर्खीम का सिद्धान्त (Durkheim): दुर्खीम का कथन है कि सामाजिक व्यवस्था के स्वरूप मे परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन यांत्रिक सामाजिक व्यवस्था से क्रमशः सावयवी सामाजिक व्यवस्था की ओर होता है। दुर्खीम का कहना है कि आदि कालीन व समाज व्यवस्था यात्रिक की परन्तु धीरे–धीरे परिस्थिति के बदलने के साथ इस यात्रिक सामाजिक व्यवस्था का रूप बदलकर आधुनिक समाज में सावयवी व्यवस्था के रूप में स्पष्ट हो गया है।

परेटो का सिद्धान्त (Pareto): परेटो के अनुसार सामाजिक व्यवस्था का आधार वास्तव मे सामाजिक संतुलन है। सामाजिक संतुलन वह अवस्था है जिसमें समाज को निर्धारित करने वाली तथा समाज को संगठित करने वाली शक्तियाँ परस्पर एक सतुलित स्तर पर रहती हैं। समाज में दोनो शक्तियाँ सदैव विद्यमान रहती है तथा क्रियाशील रहती हैं। दोनो व्यवस्था *के आवश्यक अग हैं। परन्तु सामाजिक व्यवस्था तभी पनप सकती है स्थिर* रह सकती है और कार्य कर सकती है जब समाज को सगठित करने वाली और निर्धारित करने वाली दोनो विरोधी शक्तियो का प्रभाव इतना अधिक न हो कि दूसरी शक्ति पूर्णतया दब जाये। परेटो के अनुसर सामाजिक व्यवस्था इसी प्रकार उत्पन्न सामाजिक सतुलन की ही अव्यवस्था है।

सन्दर्भ

1 Socloty in a system of usages and proceduros of authonty and mutual aid of many grupings and divisions of human behaviour and libertios Maciver R N and Pogo C H Socioty MacMilan & Co Ltd London 1953 p 5

2 Social systom is a stato in which different functional unit of socioty with in themselvos and with tho total socioty and rolatod

विषय संकेत सूची

लेखक-संकेत सूची